शेखावाटी वैभव

(सांस्कृतिक धरोहर के विविध पक्षों का विवेचन)

लेखक :

टी. सी. प्रकाश, "साहित्य भूषण"

प्रकाशक
शेखावाटी इतिहास शोध संस्थान, शिमला
जिला-झुन्झुनू

प्रथम संस्करण 1993

मूल्य : 75.00 रुपये

समर्पण...

अपने बचपन में जिनसे सुनी वीर गाथाओं ने मुझे बहुत प्रभावित किया, जिससे मेरी इतिहास और संस्कृति के प्रति रुचि बढ़ी, जिसने तन और मन को सरसाया, जिसका स्नेहमय वरद हस्त बनाये रखा उन्हीं, ममतामयी मातृ श्री मोहरादेवी खेडवाल को घने चाव से तथा घने भाव से, लिए सदा मनमें अपनी पन जन-मन की यह साराकमाई "शेखावाटी लोकसस्कृति और साहित्य" नामक शोधकृति सादर समर्पित।

टी. सी. प्रकाश

लेखक का परिचय

श्री टी. सी. 'प्रकाश'

ग्रामीण क्षेत्रों की कला, संस्कृति और तिहास को अपने कृतित्व से उजागर करने ाले श्री टी सी 'प्रकाश' का जन्म 2 जनवरी 933 ई. को ग्राम शिमला (जि. झुन्झुनू) में आ था। आपने एम ए करने के बाद बी. ड का प्रशिक्षण प्राप्त किया था, आपने ाहित्य भूषण की उपाधि प्राप्त की थी। आपने छात्र जीवन से ही समाज सेवा की वेभिन्न प्रवृत्तियों में सक्रिय रूचि ली थी।

आप ग्रामीण आसनभूत जनजीवन के विविध अनछुए सामाजिक, साहित्यिक, कलात्मक और सांस्कृतिक पहलुओं को उजागर करने में लगे हुए हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों के अध्ययन में आपकी विशेष रुचि है। आपने अब तक शेखावाटी में 10 ग्रामों का ऐतिहासिक व सांस्कृतिक सर्वे किया है और ग्राम कलाकारों की खोज में प्रयत्नशील हैं।

पिछले दो दशकों से आपका कर्मस्थल खेतड़ी क्षेत्र रहा है, जहां आपने शिमला ग्राम में ऐतिहासिक शोध संस्थान के निदेशक के रूप में लोक जीवन के बिखरे विभिन्नकला रूपों को तलासने और वैज्ञानिक ढंग से व्याख्यामित कर उन्हें दार्शनिक धरातल देने का विधिवत कार्य कर रहे है। आपने समय-2 पर राजस्थान के विभिन्न सांस्कृतिक स्थलों की यात्रायें की हैं। और इस क्षेत्र की कला और संस्कृति को उजागर करने में अभी भी आप प्राण प्रण से जुटे हुए हैं।

आपने आंचलिक इतिहास में गहराई से झांकने का प्रयास किया है, इसी क्रम में शिमला का इतिहास नामक कृति गांवो के इतिहास में एक नई श्रृंखला की शुरुआत है। जो इतिहास और पर्यटन में विशेष रूचि रखने वालों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है।

लेखन को समर्पित रजनाधर्मी श्री शर्मा ने साहित्य जगत को सृजन द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

समाजसेवा, साहित्य सेवा और खेलकूद प्रवृत्तियों में आपकी विशेष रुचि एवं उपलब्धियां रही हैं।

सम्प्रति प्रधानाध्यापक रा माध्यमिक विद्यालय टीबा बसई से सेवा निवृत, अब मुक्त स्वाध्याय एवं आण्यक जीवन यापन।

टी सी प्रकाश
सेवासदन—शिमला
(जि झुन्झुनूं)

शेखावाटी वैभव

अनुक्रमणिका

शेखावाटी वैभव

अनुक्रमणिका

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक की भूमिका लिखते हुए मुझे अपार आनन्द की अनुभूति हो रही है। इसके दो कारण है। पहला तो यह कि साहित्य और संस्कृति मेरे प्रिय विषय हैं और लेखक ने राजस्थान के एक विशिष्ट जनपद शेखावाटी के साहित्य और संस्कृति पर इस पुस्तक में विस्तार से प्रकाश डाला है। दूसरा कारण यह कि लेखक उसके सर्वथा अधिकारी है।

राजस्थान के शेखावाटी जनपद का अपना व्यक्तित्व है। मुझे वहां अनेक बार जाने का अवसर मिला है। वहां के प्राकृतिक सौंदर्य को देखकर जहां मेरा मन प्रफुल्लित हुआ है, वहां उस जनपद के लोक जीवन, संस्कृति, साहित्य, कला और पर्व त्यौहार आदि को देखकर मुझे अनिवर्चनीय सुख मिला है।

अपनी इस पुस्तक में लेखक ने शेखावाटी के समग्र जीवन को मुखरित किया है। वस्तुत साहित्य, संस्कृति और कला का क्षेत्र असीम होता है। उसमें सबकुछ समा जाता है। यद्यपि हमारे देश की संस्कृति एक ओर अखण्ड है, तथापि उस संस्कृति की धाराएं, नाना परिवेशों में प्रवाहित हुई हैं। उन सबका मूल उद्देश्य एक ही है - मानव जीवन का परिष्कार करना, उसे हर तरह से समृद्ध बनाना। शेखावाटी के साहित्य और संस्कृति ने बडी सफलता के साथ इस ध्येय की पूर्ति की है।

हमारा देश बडा विशाल है। उसमें कई प्रान्त हैं, जिनके अनगिनत जनपद है। इन जनपदों में नाना धर्म हैं, सस्कृतियां हैं, आचार -विचार है, रहन-सहन हैं। लेकिन दुर्भाग्य से अभी तक सभी जनपदों की विशेषताओं का गहन गंभीर परिचय पाठकों को नहीं मिल पाया है। उससे भी बडा दुर्भाग्य यह है कि जनपदों की अधिकाश मूल्यवान निधियां काल के उदर में समाती जा रही हैं उनके संरक्षण के लिए जितना सघन प्रयत्न होना चाहिए, नहीं हुआ है। कहने की आवश्यकता नहीं कि देश के वास्तविक अभ्युदय के लिए उसकी प्राचीन तथा अर्वाचीन सम्पदा की सुरक्षा अनिवार्य है।

इस दृष्टि से मै लेखक के प्रयास का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं। उन्होंने पुस्तक के सीमित पृष्ठों में शेखावाटी जनपदीय जीवन के प्राय सभी अंगों पर प्रकाश डाला है। दस अध्यायों में उन्होंने जहां शेखावाटी के भूगोल और इतिहास

का संक्षेप में वर्णन किया है, यहां उस जनपद की प्राकृतिक सुषमा, लोक जीवन, धर्म, रीति रिवाज, परम्परा, मेले, त्यौहार, भाषा, साहित्य, कला, संस्कृति, स्थापत्य, मूर्ति कला, भित्ति कला, आदि का विशद उल्लेख किया है। साहित्य की विभिन्न विधाओं को समृद्ध करने वाले सरस्वती पुत्रों को भी वह नहीं भूले हैं। उसके साथ ही उन्होंने विभिन्न अवसरों के लोक गीत, लोक संगीत, लोक नृत्य, मेंहदी, स्थापत्य कला, चित्रकारी, भित्ति चित्र, हवेलियां, मंदिर, दुर्ग, तालाब, लोक तीर्थ, प्रमुख नगर, शौर्य और बलिदान के प्रतीक चिन्ह इत्यादि का भी मनोहारी वर्णन किया है। लोक गीतों के अध्याय में मानों लोक भावना उभर कर ऊपर आ गई है और मन्दिरों के विवरण धर्म और कला को मूर्तरूप में आंखों के सामने उपस्थित कर देते हैं।

कितना विराट पटल है हमारी संस्कृति का। हमारी कला का। उनका वैविध्य हमारे देश की शोभा है। जिस प्रकार हम किसी उद्यान में नाना प्रकार के, नाना वर्णों के पुष्प देखकर प्रसन्न होते हैं, उसी प्रकार संस्कृति और कला की यह विविधता हमें आनंदित करती है। हमारी भारतीय मनीषा ने इस विविधता को अक्षुण्ण बनाये रखकर अनेकता में एकता साधित करने का मूल मंत्र दिया था।

यहां मुझे सहसा चीन का स्मरण हो आया है। चीन भारत की भांति एक बड़ा देश है। मैंने वहां का भ्रमण किया है। वहां की जनसंख्या भारत से अधिक है। लेकिन वहां विविधता का प्राय अभाव है। सारे देश की एक ही भाषा है, यद्यपि उसके तीन चार भिन्न रूप हैं। लिपि एक है। धर्म एक है और रहन-सहन की पद्धति भी प्राय एक सी है। यह मैं आलोचना की दृष्टि से नहीं कह रहा हूं, वस्तुस्थिति बता रहा हूं। इस एकरूपता के अपने लाभ हो सकते हैं, किन्तु हम लोग तो विविधता में जीते हैं और उसी में आनंद अनुभव करते हैं।

वास्तव में हमारी संस्कृति के बहुविध और बहुरंगी होने का ऐतिहासिक कारण है। हमारे यहां धर्म का बंधन रहा है, किन्तु एक सीमा से अधिक नहीं। फिर धर्म अपने साथ जनता की सभी परम्पराओं और पूजा पद्धतियों को लेकर चलते रहे। प्रजातियों की दृष्टि से यहां निषाद, किरात, द्रविड़, आर्य आदि अनेक समुदायों के संगम रहे। बाद में उनमें इस्लाम, पारसी, ईसाई, यहूदी इत्यादि सम्मिलित हो गये। देशज धर्मों में हिन्दू, जैन, बौद्ध, शैव, वैष्णव, शाक्त, तांत्रिक आदि अनेक पक्ष रहे। इस उदार परम्परा का परिणाम यह हुआ कि विभिन्न संस्कृतियां स्वतंत्र रूप से विकसित होती रहीं और पारस्परिक सौहार्द का निर्वाह करती रहीं।

इस पुस्तक को पढ़ते हुए कुछ अंशों ने मुझे विशेष रूप से आकृष्ट किया। उनका उल्लेख करना समीचीन होगा। पुस्तक के आरंभ में त्यौहार का वर्णन करते हुए लेखक ने मुसलमानों के खास-खास त्यौहारों पर भी रोशनी डाली

साथ ही जैन समाज के प्रमुख पर्वों का परिचय दिया है। इन प्रदेशों में जैन धर्मावलंबियों की अच्छी संख्या है।

दूसरी बात यह है कि साहित्यकारों के विवरण में प्राचीन के साथ नवीन लेखकों की भी चर्चा की गई है।

तीसरे, लोक गीतों के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से उल्लेख किया है, जो बहुत ही सार्थक है। बनड़ा, बनडी, कामण, भात, जीजो, जकड़ी, मुसरों, जेठ, देवर, काछवो, कुसुमो, चूनड़ी, घूघरी, बधावा, कांगसियो, मुरली, कुंजा, दारूणी, जागड़ली, दिवड़ो, निंबडली, मूसल आदि के विवरण बड़े रोमांचकारी हैं।

शेखावाटी के पर्वों का सुन्दर विवरण देने के बाद लेखक ने वहाँ के ख्यालों को प्रस्तुत किया है। ये ख्याल देश भर में विख्यात हैं। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इनका प्रचलन आरम्भ हुआ। इनमें हिन्दू और मुस्लिम संगीत की परम्पराओं का सम्मिश्रण है। नाटकों में इनका पर्याप्त प्रयोग किया गया। नाटक पौराणिक, ऐतिहासिक तथा प्रेमपरक तीनों कोटि के होते हैं। प्रेमपरक ख्यालों में 'ढोला मारवण' के साथ-साथ लैला मजनूं, सौदागर वजीरवादी आदि सभी प्रकार के विषय लिये गये हैं। इन ख्यालों को सुनने का मुझे कम ही संयोग हुआ है। इस पुस्तक में उनका विवरण पढ़कर उन्हें विस्तार से सुनने की इच्छा जाग्रत हो उठी है।

नृत्यों में चंग, घूमर, गीदड़, पनिहारी घोडी, लावणी, चकरी आदि के वर्णन प्रभावशाली हैं।

चित्रकारी की चर्चा करते हुए लेखक ने बताया है कि इमारतों के लिए चित्रकारी आवश्यक थी। बिना चित्रकारी के भवन 'भूतों के आवास' माने जाते थे। भवनों के साथ-साथ मंदिरों, हवेलियों, छतरियों, कुओं, तालाबों आदि सभी पर सुन्दर चित्र अंकित किये जाते थे।

कुल मिलाकर पुस्तक रोचक, ज्ञानवर्धक तथा प्रेरणादायक है। उसे पढ़कर एक बार शेखावाटी जाने की आकांक्षा उत्पन्न होती है, यह पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता है।

इस पुस्तक की रचना के लिए मैं लेखक को हार्दिक बधाई देता हूं। मुझे विश्वास है कि इसके पठन पाठन से पाठक तो लाभान्वित होंगे ही, लेखक भी अन्य जनपदों का परिचय प्रस्तुत करने के लिए अनुप्राणित होंगे।

सस्ता साहित्य मंडल,
एन-77 कनाट सर्कस,
नई दिल्ली-110001
6 मई 1991

—यशपाल जैन

प्रस्तावना

भारत वर्ष मे जिस प्रकार 'राजस्थान' का अपना विशेष स्थान है उसी प्रकार राजस्थान में 'शेखावाटी' की अपनी खास प्रतिष्ठा है। सामान्यतया राजस्थान के झुंझनूं तथा सीकर दोनों जिलो के सम्मिलित भू-भाग को शेखावाटी कहा जाता है। इस प्रदेश पर कछवाहा-कुल की शेखावत शाखा के राजपूतों का सुदीर्घ काल तक शासनाधिकार रहा, अत इसका 'शेखावाटी' नाम लोक-प्रचलित हुआ है।

वैसे एक अंचल की दृष्टि से देखा जाए तो इस से सटा हुआ चूरू जिले का कुछ भाग (रतनगढ़ से लेकर सापुलपुर तक) भी शेखावाटी के समान ही है। इस प्रकार शेखावाटी अंचल का क्षेत्र-विस्तार भी कम नहीं है।

विशेषता यह है कि शेखावाटी का एक हिस्सा रेतीले टीलों की धरती है तो इसका एक भाग पहाडी है तथा वनस्पति से आच्छादित है। यहां एक तरफ पानी की कुछ कमी है तो दूसरी ओर की धरती सुजला-सुफला भी है, जो मालव प्रदेश का सा दृष्य उपस्थित करती है।

पूर्व-काल मे शेखावाटी प्रदेश पर क्यामखानी नवाबों का शासन रहा, जो मूलत चौहान राजपूत थे और किसी समय मुसलमान बन गए थे परन्तु उनमें किसी प्रकार की संकीर्णता न थी। झुंझनूं तथा फतेहपुर नगर उनकी राजधानियों के रूप में विख्यात हुए। इनके अतिरिक्त मुसलमानों के कई छोटे-मोटे राज्य नरहड आदि भी यहां स्थापित हुए। इन सब का अपना इतिहास है।

इसके बाद विक्रम की अठारहवी शती के उत्तरार्ध मे यहां शेखावत राजपूतों का शासनाधिकार हुआ, जो कालान्तर में छोटे-बडे कई ठिकानों में विभक्त हो गया। प्रजातंत्र की स्थापना तक ये ठिकानेदार इस भू-भाग के स्वामी बने रहे। ये सभी जयपुर रियासत के मातहत थे परन्तु इनके शासनाधिकार आमदनी के अनुसार न्यूनाधिक थे।

वर्तमान मे शेखावाटी क्षेत्र की आबादी का एक बहुत बडा भाग भारत के विभिन्न प्रान्तो मे प्रवास करता है। वहां राजस्थानी लोगों के द्वारा स्थापित व्यापारिक प्रतिष्ठान सम्पूर्ण देश की आर्थिक समृद्धि मे असाधारण योगदान करने में संलग्न है। वे सभी अपनी मातृभूमि राजस्थान से हार्दिक जुडाव रखते हैं

और भारत-भक्त होने के साथ-साथ राजस्थानी होने का भी गौरव अनुभव करते हैं। इनमें बड़ी संख्या शेखावाटी-अंचल के लोगों की है, जिनमें कई उद्योगपति तो विश्व भर में प्रतिष्ठा प्राप्त करने में सफल हुए हैं।

शेखावाटी की यह भी एक अपनी विशेषता है कि यहां की जनता में सैनिक-वृत्ति धारण करने वाले लोगों की संख्या असाधारण रूप से अधिक है। यह प्रवृत्ति इस प्रदेश में परम्परागत है, जो अद्यावधि ज्यों की त्यों बनी हुई है और देश की सुरक्षा हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है।

इसी क्रम में यह तथ्य भी ध्यातव्या है कि शेखावाटी का जन-जीवन सदा से साम्प्रदायिक सद्भावना से ओतप्रोत रहा है, जो सम्पूर्ण देश के लिए एक अनुकरणीय आदर्श है।

शेखावाटी के इतिहास के सम्बंध में कई ग्रंथ विरचित हुए है, जिनमें पं झाबरमल्ल जी शर्मा (जसरापुर) तथा ठा सुरजन सिंह जी शेखावाटी (झाझड) के नाम इतिहास-वेत्ता के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हैं। इनके अतिरिक्त श्री रघुनाथ सिंह शेखावत (काली पहाडी) तथा श्री रतनलाल मिश्र (मण्डावा) ने भी इस विषय में अच्छा कार्य किया है। इसी क्रम में समय-समय पर शेखावाटी के कतिपय नगरों से सम्बंधित महत्वपूर्ण ग्रंथ भी सामने आए हैं, जिनमें फतेहपुर, नवलगढ, बिसाऊ, शिमला, चिडावा तथा मण्डावा विषयक ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय है। इन ग्रंथों को बडी लोकप्रियता प्राप्त हुई है।

इतना सब होने पर भी शेखावाटी प्रदेश से सम्बंधित एक समग्र-ग्रंथ की कमी काफी समय से अनुभव हो रही थी, जिसकी सम्पूर्ति करने का श्रेय श्री ताराचंद प्रकाश को प्राप्त हुआ है। एतदर्थ आप अभिनंदनीय हैं।

किसी भी प्रदेश का समग्र-विवरण उसकी धरती, उस धरती का जन और उस जन की जीवन-पद्धति का स्पष्ट चित्रण उपस्थित करने पर ही सही रूप में सामने आ पाता है। हर्ष का विषय है कि निष्ठावान लेखक ने इन सभी तत्वों को ध्यान में रखते हुए 'शेखावाटी वैभव' ग्रंथ प्रकाशित करने का गौरव-प्राप्त किया है, जो अत्यधिक श्रम-साध्य होने के साथ ही प्रचुर व्यय-साध्य भी है।

'शेखावाटी वैभव' में इस अंचल का पूर्ण परिचय देने का सफल प्रयास किया गया है। साथ ही विद्वान लेखक ने इस बात का भी सर्वत्र पूरा ध्यान रखा है कि वह संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाए, जो विषय के विस्तार को देखते हुए उचित ही है।

ग्रंथ में शेखावाटी प्रदेश की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक जानकारी के साथ यहां के दर्शनीय विशिष्ट स्थानों का परिचय भी दिया गया है। इसी प्रकार यहां के निवासियों की सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति का भी समुचित विवरण है। यहां तक कि लोक-विश्वासों पर भी अच्छा प्रकाश डाला गया है। ग्रंथ

में शेखावाटी के साहित्य के साथ ही यहां की कलाओं (संगीत, चित्र, मूर्ति एवं स्थापत्य) पर भी पर्याप्त चर्चा है। इसी क्रम में लोक-साहित्य, लोक-कला एवं लोकानुरंजन का भी इस ग्रंथ में अच्छा परिचय दिया गया है, जो सोदाहरण होने से सर्वथा स्पष्ट बन गया है।

परिशिष्ट-भाग में शेखावाटी के प्रमुख शिलालेख देकर इस ग्रंथ का गौरव और भी अधिक बढ़ा दिया गया है।

'सेठ तो शेखावाटी का' लौकिक प्रयोग सर्वविदित है। यहां के धनी-मानी सज्जनों के द्वारा भारत भर में जन-कल्याण हेतु जो प्रतिष्ठान स्थापित किए गए हैं, उन की संख्या अपरिमेय है। ऐसी स्थिति में शेखावाटी-अंचल में किए जा रहे इनके सेवा-कार्यों की महिमा तो स्वाभाविक ही है। शेखावाटी में देवोपासना, शिक्षा-स्वास्थ्य एवं जलापूर्ति आदि लोकोपकार के कार्यों हेतु स्थापित संस्थान गांव-गांव में प्रसिद्ध हैं। ये सब स्थानीय सेठों की उदारता के ज्वलंत उदाहरण हैं।

राजस्थान का शेखावाटी-अंचल एक साथ ही शौर्य पराक्रम, त्याग-बलिदान, साहित्य-साधना, कलाप्रेम, व्यापार कौशल, दानशीलता तथा सर्व-धर्म-समभाव आदि सद्गुणों का संगम-स्थल है, जिसके वैभव का वर्णन करके विद्वान लेखक ने अपनी वाणी को धन्य किया है। इसके द्वारा शेखावाटी में निवास करने वाले प्रजा-जनों के साथ ही भारत के सुदूर भू-भागों में प्रवास करने वाले राजस्थानी भी लाभान्वित होंगे।

प्रस्तुत प्रकाशन अत्यंत उपयोगी एवं श्लाघ्य है। आशा है, इसका साहित्य-जगत् में अच्छा स्वागत होगा।

राजस्थान साहित्य समिति,
बिसाऊ (राजस्थान)
विजया दशमी, सं. २०४८ वि.

मनोहर शर्मा
सम्पादक - 'वरदा' (त्रैमासिक)

"दो शब्द"

जन-मन की सहज उत्पन्न भावना, प्रवृत्तियां एवं अंत प्रेरित क्रिया कलापों का समन्वित संस्करण ही संस्कृति कहलाती है। मूलत यह मानव की अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से विकसित होती है। इसी से लोक जीवन के आदर्शों का निर्माण हुआ है। संस्कृति तो सार्वदेशिक है। परन्तु क्षेत्रविशेष के गुण अभिवृत्तियां और भावनाएं आरोपित होने से यह उस क्षेत्र विशेष की संस्कृति का नाम धारण कर लेती हैं जिससे उसके निवासियों को विशेष प्रेरणा प्राप्त होती रहती है और उसका संबल बड़े से बड़ा त्याग-बलिदान उससे करवा देता है। संस्कृति उस क्षेत्र के गांव, वन, पर्वत, खेत, खलिहान में निवास करती है। जन-मन के आचार-विचार में वह परिलक्षित होती है। उसका विराट स्वरूप वहां के उत्सव और मेलों में देखने को मिलता है।

संस्कृति के इस स्वरूप को "शेखावाटी वैभव" ग्रंथ में अत्याधिक रोचक ढंग से उभारा गया है। इस अंचल की यह एक महत्वपूर्ण कृति है। इसको सर्वांगीण बनाने में लेखक ने अथक परिश्रम किया है। लेखक ने इसके प्रत्येक क्षेत्र को गहराई से निरखा-परखा और उसको सहज भाव से प्रस्तुत किया है। अंचल के कण-कण से लेखक का आत्मीय लगाव है और उसकी हर धड़कन तथा प्रत्येक श्वास में संस्कृति की सौरभ गतिमान है, तभी वह यहां के लोक जीवन को निकट से अवलोक सका है। यहां के मिथक और पौराणिक अवधारणाओं को ग्रहण कर सका है। लेखक ने यहां के लोक विश्वासों, जादू टोनों और धार्मिक धारणाओं को अपने ग्रंथ में पिरोने की सफल चेष्टा की है। यहां के रीति रिवाजों और परम्पराओं को लेखक ने अपने सहज मन से पाला है, संरक्षित किया है और आवश्यकतानुसार उनको सम्प्रेषित भी किया है। फलत इनके वर्णन में मनमोहक, रोचकता आ सकी है। रहन-सहन, खान-पान तथा वेश-भूषा के अध्याय में लेखक का सर्वेक्षण-परिवीक्षण, निरीक्षण-परीक्षण तथा सूक्ष्म अवलोकन द्रष्टव्य है। भावात्मक एकता, साम्प्रदायिक सद्भाव, लोक मान्यताओं में एकात्मभाव का विराट स्वरूप यहां के मेलों और उत्सवों में देखा जा सकता है। इस बात को सरस और सरल शैली में प्रकट किया गया है। इस ग्रंथ के दसवें अध्याय में कला और संस्कृति को सार-संक्षेप में सज्जित मंडित करके प्रस्तुत किया गया है। यहां की विश्व

विख्यात धरोहर स्थापत्य और मूर्तिकला की विशिष्टताओं को इस ग्रंथ में अभिव्यक्त किया गया है जो इस ग्रंथ का एक महत्वपूर्ण और उपयोगी अंग बन गया है। भाषा और साहित्य को भी इसमें स्थान मिला है जो अपने आप में एक स्वतंत्र विषय हो सकता है। अन्त में लेखक ने यहां के धार्मिक, ऐतिहासिक और पुरातत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थलों के चित्रों पर अपनी कुशल लेखनी चलाई।

निष्कर्षत लेखक श्री टी. सी. 'प्रकाश' के मन में अन्त सलिला के रूप में प्रवाहित शेखावाटी की सांस्कृतिक सम्पदा एवं क्षमताओं की भाव तरंगे समाज के सामने उद्घाटित हुई हैं। लोक संस्कृति के प्रत्येक अंग को इस ग्रंथ में अभिव्यंजित करके श्री प्रकाश ने अपने गहन अध्ययन का परिचय दिया है। समग्र विषय-वस्तु दृष्टि से इसको संग्रहणीय ग्रंथों की श्रेणी में स्थान दिया जा सकता है।

प्रस्तुत ग्रंथ सूक्ष्म से विराट की ओर गतिशील रहने का सतत एवं विशद्ध प्रयास है क्योंकि इस अंचल की लोक संस्कृति राजस्थान की व्यापक एवं समृद्ध लोक संस्कृति का ही एक अविभाज्य अंग है। यदि राजस्थान के अन्य अंचलों से भी इसी प्रकार के उपयोगी ग्रंथ प्रकाश में आवे तो गहन मंथन के फल स्वरूप राजस्थानी लोक संस्कृति के गंभीर एवं गणनीय प्रकाशन को ही बल मिलेगा। आशा है, यह ग्रंथ एक आदर्श प्रस्तुत करने में सफल हो सकेगा।

अन्त में लेखक का अपने अंचल की सांस्कृतिक संचेतना को उजागर करके उसका सफल सम्प्रेषण करने के लिए साधुवाद।

गांधी जयन्ती, 1991

डा. उदयवीर शर्मा
साहित्य मंत्री,
श्री तरूण साहित्य परिषद,
बिसाऊ (झुंझुनूं-राज)

"प्राक्कथन"

प्रकृति ने शेखावाटी को जो इन्द्रधनुषी विविधताएं प्रदान की है, उन्हें यहां के धर्म, दर्शन, साहित्य, कला, संस्कृति, लोकजीवन और व्यवहार ने हजारों हजार गुना बढ़ाया है।

इस वीर प्रसूता भूमि की कोख, कभी रण बाकुरों, महान सपूतों से खाली नहीं रही। इसके लम्बे इतिहास की कई खट्टी-मीठी, स्मृतियां भी इससे जुड़ी हुई हैं यह क्षेत्र कभी वैभव के सुखद झूलो से झूलता रहा है तो कभी अभावों व संघर्ष के थपेड़ों से भी कम नहीं जूझा। प्राकृतिक आपदाओं ने इसकी जीवन्तता को गरिमा ही प्रदान की है।

अपनी जलवायु प्राकृतिक सुषमा, मरुभूमि के विस्तार, अरावली पर्वत श्रृंखला ऊँच्चे-ऊँच्चे बालू के टीलों ने शेखावाटी को एक सुहाना स्वरूप दिया है इसमें एक ओर सोना उगलती धरती है, तो दूसरी ओर विस्तृत रेगिस्तान। यह क्षेत्र सदियों से अनेकों धर्मों और जातियों का मिलन स्थल रहा है। और आज यह सांस्कृतिक रूप से साम्प्रदायिक सौहार्द व सद्भाव का अद्वितीय संगम माना जाता है। यह क्षेत्र वैदिक व आर्य संस्कृति का गढ़ रहा है।

संस्कृति शब्द का आशय धर्म, दर्शन, साहित्य व कला इत्यादि से है प्राय लोक संस्कृति की सीमाओं में हम इन्हीं सामूहिक विषयों का अनुशीलन करते है। वास्तव में यह संस्कृति का अधूरा परिचय है। संस्कृति का यह व्यक्तिपरक पक्ष ऐतिहासिक विवेचन भले ही हो, पर संस्कृति के सामाजिक पक्ष की गणना के बिना, जिसमें हमारी परम्पराएँ, संस्कार, त्यौहार व मेले इत्यादि सम्मिलित है, संस्कृति की चर्चा अधूरी रहेगी। इन दोनों पक्षो का सार्थक समन्वय व संयोग ही सच्ची संस्कृति है। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि शेखावाटी एक महान व जीवन्त संस्कृति वाला क्षेत्र है।

शेखावाटी का कण-कण मान की महिमा से मंडित और गौरव की गरिमा से आलोकित है। शेखावाटी एक ऐसा सुन्दर व स्वच्छ दर्पण है जिसमें पूरे राजस्थान की झांकी देखी जा सकती है।

राजस्थान के गौरवमय इतिहास का मूर्तिमन्त रूप ही है शेखावाटी। इसके जर्रे-जर्रे में शौर्य व बलिदान की गाथायें अमर हैं। हवलदार मेजर पीरुसिह,

मोहम्मद अयुब खान, कुन्दनसिंह तथा हरीराम यादव इसी वीर-प्रसविनी भूमि की संतान है। सच्चाई तो यह है कि देश के सम्मान तथा गौरव की रक्षा में सदा ही शेखावाटी के रण बांकुरे कभी किसी से पीछे नहीं रहे। शेखावाटी सदा से ही वीरता और शौर्य की क्रीडा स्थली रही है, यहां वीरता की कुछ ऐसी निराली परमरायें रही है जिनकी मिसाल इतिहास में ढूंढने से नहीं मिलती। यहां वीरता के पीछे जिन उच्चतम आदर्शों और उच्चतम जीवन मूल्यों की प्रेरणा रही है, ये आर्दश और जीवन मूल्य यहां की विशिष्ट संस्कृति की देन है। इनमे मातृभूमि प्रेम, स्वतंत्रता, स्वाभिमान, स्वधर्मनिष्ठा, स्वामीभक्ति, नारी के शील और सतीत्व की रक्षा, प्रमुख है। यों तो राजस्थान का कोई भी अंचल वीरता की शौरम गाथाओं से शून्य नहीं, परन्तु शेखावाटी के कण-कण में मरण संगीत प्रतिध्वनित हो रहा है। यहां का कोई भी नगर या जनपद ऐसा नहीं, जहां युद्ध के नगाड़े न बजे हों।

वीर भूमि शेखावाटी मात्र शौर्य, बलिदान, त्याग और देशानुराग की ही गढ़ नहीं, संस्कृति का जीवन्त क्षेत्र भी है। शेखावाटी का साहित्य केवल वीर रसात्मक ही नही रहा, अपितु इसमे भक्ति व श्रृंगार विषयक उच्च कोटि का काव्य तथा कथा साहित्य भी उपलब्ध है। डा. कन्हैयालाल 'सहल', सीताराम 'लालस', लोककवि राजीया, महाकवि सुन्दरदास, ताजखाँ, जानकवि प झाबरमल शर्मा, विश्वनाथ सारस्वत आदि अनेक मूर्धन्य व महान साहित्यकारों का नामोल्लेख किया जा सकता है। कहना न होगा कि राजस्थान कि श्रेष्ठ साहित्य की भांति यहां का "लोकसाहित्य" हमारी संस्कृति का मूलाधार है। जनजीवन की यह अन्यतम प्रस्तुति हमारे सांस्कृतिक स्वरूप की परिचायक ही नहीं उन्नायक भी है।

शेखावाटी की चित्रकला अत्यन्त आकर्षक व हृदयग्राही है। समाज के सच्चे प्रतिबिम्ब और समकालीन प्रभावों का अंकन शेखावाटी की चित्रकला की विशेषता रही है। चित्रकला का सर्वश्रेष्ठ उपहार है रागमाला। लोक चित्रकलाओं का शेखावाटी में अक्षय भंडार है। मेंहदी और मांडणा लोक चित्रकला के श्रेष्ठ उदाहरण है। यह हमारी धार्मिक आस्थाओं, सौन्दर्य भावनाओं और मंगल कामनाओं से जुड़े है। पट व भित्ति चित्रों की भी इसी श्रेणी में गणना होती है।

संगीत व नृत्य बहुत कुछ एक दूसरे से जुड़े नाम है। इन कलाओं पर साहित्य का भी गहरा प्रभाव है। इस क्षेत्र मे प्रहलादीराम, उजीरा तेली, नानिया राणा, दूलजी आदि गायन शैली के सिद्ध कलाकारों ने जन्म लिया था।

लोकनृत्य व संगीत शेखावाटी की अपनी शान है। रावणहत्था, नड जैसे वाध्ययंत्र, घूमर जैसा सामूहिक नृत्य, पट तथा कांवर वाचन, कठपुतलियों के खेल, नटी के करतब, रामलीला का सांस्कृतिक वैभव का सजीव चित्रण है।

शेखावाटी में शानदार हवेलियां, मन्दिर, अद्भुत छतरियां, विशाल जलासयों व अजेय दुर्गों का निमार्ण हमें इस क्षेत्र की कलाप्रियता और दूरदर्शी—निर्माताओं की याद दिलाते हैं। प्रतीक रूप में फतेहपुर, बाघोरवाद, गोपीनाथ का मन्दिर, हर्षनाथ का मन्दिर, सरस्वती मन्दिर, राणी सती मन्दिर झुन्झुनू, महनसर, मुकुन्दगढ, फतेहपुर, मंडावा, नवलगढ के सेठों की हवेलियों की निमार्णकला, शेखावाटी की स्थापत्यकला में अपना विशेष स्थान रखती है इस भू-भाग पर शासन करने वाले नवाब, शेखावतों ने अपना समय केवल युद्ध के नगाडे बजाने मे ही व्यतीत नही किया, अपितु शान्ति के समय कला और साहित्य के भंडार की श्रीवृद्धि में पूर्ण योगदान किया है।

इस प्रदेश की सजीव लोक परम्पराओं से सम्बंधित विस्तृत क्षेत्र के विषय मे लोग अब भी बहुत कम जानते हैं।

शेखावाटी का रंग रंगीला पहनावा, पगडी, घाघरा, लूगणा विविध प्रकार के आभूषण और धार्मिक उत्सव और लोक देवी-देवता आज के आधुनिक परिवेश में भी आकर्षण रखते हैं।

साहित्य, संगीत, कला की जो त्रिवेणी शेखावाटी में प्रवाहित हुई है उसमें राजस्थानी संस्कृति को अपना निजस्व प्रदान किया है। इसके अलावा इस प्रदेश में ग्रामीण परिवेश में छल आश्रित शोषण और उसमें उत्पन्न दैन्य मूलक आर्थिक विषमता की भी झलक दिखाई देती है तो कहीं आपको धोरों वाली धरती के तेवर और ठाठ निराले ही मिलेंगे, जिसकी एक आँख में युद्ध की धधकती हुई ज्वाला है, तो दूसरी आँख में श्रृंगार की मोहकता। अकाल के दर्द भरे झोकों में एक मुट्ठी अनाज और दो बून्द पानी के लिए दुरुह जिन्दगी जीता हुआ किसान, तो कहीं धूल भरे टीले-टीकरों में सोया लोक जीवन, उन्मुक्त हो उठता है। यह शेखावाटी है। जहां सदियों से सोई स्मृतियां जाग उठती है, जहां के रण बांकुरों की गौरव गाथा, तथा सन्तों और पीरों की अमृतवाणी, सदैव प्रेरणा की श्रोत रही है। स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानन्द के सन्देश ने हमारे सांस्कृतिक इतिहास में एक उल्लेखनीय स्थान रखते है। यहां के स्वतन्त्रता सेनानीयों के त्याग और बलिदान ने राजस्थान का गौरव बढाया है। उन्नीसवी सदी के वह बहुमुखी जागरण एवं चेतना से शेखावाटी अछूती नहीं रही। इसके अलावा यहां आप देख चुके है, राजाओं, नबावों, जागीरदारों व सामन्तों की सामान्यजन के साथ ज्यादतियां तथा अत्याचारों की विषाक्त व भयावह परिवेश, अत्याचार और अन्याय को सहन बरदास्त करते हुए सीधे सादे ग्रामीण लोग, सामन्ती शोषण की शिकार, कुनबे के कायदो से जकडी सिसकती नारियां, सामाजिक विसंगतियां, बदलते हुए मानवीय सम्बन्ध, उजडते हुए गांव व ढाणियां, रेत का अन्तहीन विस्तार, उपेक्षित देहातों से—शहरों की ओर पलायन करते हुए नवयुवक और नवयुवितियां, हमारे सामने एक सांस्कृतिक संकट पैदा कर रहे है इसके बावजूद यहां के लोगों में अपनी जीवन्तता रंगीन

और मस्ती बनाये हुए देखी जाती है। इसके बावजूद आप यहां देखेंगे, रंग बिरंगे घाघरा, लहराती चुंदड़ियों में थिरकती बालायें, गर्व व शान से सम्बी मूंछोवाले व रोबीली पगड़ी धोर पुरूष, सुनहली रेतो के बादल उड़ाते, दौड़ते, सजे संवरे ऊंट, आइये । शेखावाटी का आनन्द लीजिए—हवा में मौज मस्ती, खेलकूद, साज संगीत की समा थिरक रहा है। धार्मिक, मानवता और हर्षोल्लास की गहनता उभर रही है। जहां राजस्थानी लोकगीत गूंज उठते हैं। विजय और पराक्रम की गाथाएं मुखरित हो उठती हैं। इस प्रकार ग्रामीण अंचलो की लोक चेतनाओं और धड़कती हुई सांस्कृतिक धरोहरों के उजले पन को उजागर करने का प्रयास इस कृति में किया गया है सम्वेदना के धरातल पर जहां यह कृति, अन्तरतम को झकझोरती है, वहीं, मन में एक आक्रोश एवं बदलाव की भावना को जन्म देगी। आंचलिक पृष्ठभूमि में रचित यह कृति मानवीय सौन्दर्य, चेतना, अपने विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होती हुई सामाजिक चेतना का अमूर्त रूप सिद्ध होगी। प्रदेश की सभी धाराओं में गतिशील जीने वाले नागरिकों की प्रतिमा का गान इस ग्रन्थ में गूंज रहा है, यही इसकी अद्वितीय विशेषता है।

इस भू-भाग की प्रकृति, प्रवृत्ति और परिवेश तथा परम्पराओं के महत्व को समझे बिना, इसकी आत्मा की अनुभूति को सहानुभूति पूर्वक सुने बिना ममत्वहीन होगा बिना इस भूमि के साथ मानसिक रूप से एकात्मक हुए इस भू-भाग की विश्मयजनक और अनिर्वचनीय कथा नहीं कही जा सकेगी। आज आवश्यकता इस बात की है कि शेखावाटी की बहुमुखी सांस्कृतिक धरोहर को जो इस धरती का गौरवपूर्ण अभिन्न अंग है को सुरक्षित रखने तथा जानने पहचानने की है। प्रस्तुत कृति में इस क्षेत्र के सांस्कृतिक व साहित्यिक परिवेश के संक्षिप्त परिदृश्य उपस्थित करने का प्रयास किया गया है जो प्रमाणित तथ्यों से परिपूरित है। शेखावाटी को पहचानने में इसकी विशिष्टता अपने आप झलकती है। इस रचना का उद्देश्य इस जनपद की सांस्कृतिक विशेषताओं को उजागर करके नई पीढ़ी की मनोभावनाओं को उद्वेलित करके कुछ कर गुजरने की भावना पैदा करना है। और वे यह जान सकें कि जहां इस भूमि में शीश समर्पित करने वाले वीरों को जन्म दिया है, वहीं सन्त भी दिये हैं जो संसार से अलग रहकर अपनी जुझारू भावना के त्याग, तप, भक्ति, श्रद्धा, एकनिष्ठ भावना का परिचय देने वाले हुए हैं। तथा वे यह भी जान सकें कि यहां के लोग अकाल, बाढ़, और सीमापर हुए आक्रमणों की संकट बेला में—शेखावाटी के जीवट वाले जीवन ने, किस तरह आपदाओं का पूर्ण साहस और धैर्य के साथ अपने परम्परागत शौर्य, एवं जुझारू भावना को अक्षुण रखी है और इस क्षेत्र के साहित्यकारों ने भी साहित्य की विविध विधाओं में किस तरह उक्त भावनाओं को गौरव तथा गरिमा के साथ संजोये रखा है। उसको चित्रांकित किया है। राजस्थान के सैकड़ों वर्षों के संस्कार उसका संघर्षमय लोक जीवन जो शेखावाटी में प्रतिबिम्बित होता है। और उसमें जो भावनायें व्यक्त हुई है, देश प्रेम, जातीय गौरव, तथा आजादी के झंझावत, सन्देशों से परिपूर्ण है।

यहां के साहित्य में राजमहलों के वैभव का वर्णन नहीं बल्कि रणोन्मुक्त राजपूत वीरों, महिलाओं तथा रणभूमि की रक्त रंजित चीत्कार का भावमय चित्रण है। शेखावाटी का साहित्य, जीव का साहित्य है जो जीवन को लेकर आगे बढ़ा है, इन सब बातों की जानकारी पाठकों के मन मस्तिष्क में शेखावाटी की पहचान करा सके तथा इस जनपद को जानने व समझने में रूचि रखने वाले सहायक सिद्ध पाठकों को पर्याप्त व प्रामाणिक जानकारी सुलभ हो सके तो मैं अपना प्रयास सफल समझूंगा । जब यह कृति आपके सामने होगी, तो शेखावाटी अंचल के अद्वितीय मन्दिर, अजेय दुर्ग, अद्‌भुत छतरियां, कलात्मक हवेलियां, विशाल जलासय, मनमोहक महल व बावड़िया, पर्यटन स्थल तो आपका मन इन स्थलों की झलक से साक्षात्कार करना चाहेगा। इस ग्रन्थ के लिए सामग्री संकलन में जिन लेखकों की प्रकाशित तथा अप्रकाशित रचनाओं से जो सहायता ली है, उनके प्रति कृतज्ञता जहां प्रकट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। इसके अलावा विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करते वक्त उन महानुभावों का भी मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने महत्वपूर्ण जानकारी दी। इसके अलावा मैं आदरणीय श्री यशपाल जैन मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली का विशेष रूप से ऋणी हूं जिन्होंने पुस्तक की भूमिका लिखकर मेरा उत्साह बढ़ाया। मैं श्री मनोहर शर्मा, बीकानेर, श्री श्याम महर्षि मंत्री राजस्थान हिन्दी प्रचार समिति डूंगरगढ़, डा श्री शीतांशु भारद्वाज, पिलानी तथा श्री कोमल कोठारी निदेशक रुपायन संस्थान बोरुंदा का भी आभारी हूं जिनकी प्रेरणा तथा आर्शीवाद से इस ग्रन्थ की रचना हो सकी। पुस्तक की पांडुलिपि तैयार करने में मेरे पुत्र चि. सतीशचन्द्र, रामानन्द, व इन्द्रजीत ने भी अपना पूरा सहयोग दिया है, मेरी यह मान्यता है यह कृति इस क्षेत्र के ग्रामीण आसनभूत जन जीवन के विविध अनछुये, सांस्कृतिक व साहित्यिक पहलुओं को उजागर करने में सहायक सिद्ध होगी।

दिनांक

कृतज्ञ लेखक
टी. सी प्रकाश
सेवा सदन, शिमला
(जि. झुन्झुनू)

1

शेखावाटी और उसका लोक जीवन

किसी भी जाति के जीवन मूल्य उसकी लोक संस्कृति एव साहित्य में प्रकट होते है। यह विषय बहुत व्यापक है और इसका क्षेत्र भी बहुत विस्तृत है। यह कहना गलत नहीं होगा कि अधिकाश लोक साहित्य भावनामूलक और कल्पनामूलक होता है। यही कारण है कि उसकी अपील सहज और तीव्र होती है।

गाव वासियों की आध्यात्मिकता नैसर्गिक है और प्रतीकवाद जोशहरी लोगों का विशेषाधिकार नहीं है। ग्राम्यवासियों के विश्वास और अभिवृत्तियों का अभिन्न, अग है। लोक—साहित्य के अध्ययन से जहा हमें किसी जाति के सास्कृतिक ताने बाने को समझने में सहायता मिलती है, वहीं मानवीय पक्ष को देखने की प्रेरणा भी मिलती है।

ये भोले-भाले लोग प्रदेश के कोने-कोने में फैले हुए हैं। जगलों में रहने वाले लोग, किसान, मजदूर, खेतिहर सीमान्तर मजदूर, घरेलू कार्य करने वाले नोकर, पर्वतीय क्षेत्रों में बसे पहाडी, सभी उस विशाल जन समूह में आते है। ये सब अपनी-अपनी परम्पराओं का पालन करते हैं। ये साधारण लोग हैं जो अपने में मस्त रहते हैं। सदियों पुराने रीति रिवाज इन्हें पारिवारिक बन्धन में बँधे हुए हैं। और सर्व शक्तिमान ईश्वर पर इनका अटूट विश्वास है। परम सत्ता पर इनका विश्वास बहुधा किसी वृक्ष, पाषाण, पशु, नदी, पर्वत या विचार मात्र के प्रति उनके प्यार में व्यक्त होता है।

कृषि के विकास के साथ, छोटे-छोटे खेत बनाकर ये लोग खेती करने लगे, खेती पर यह पूरा ध्यान देने लगे और कठिन परिश्रम करते। खेती पर उन्हें पूरा ध्यान देना पडता और इसलिए वे फसल बोने-काटने में पूरी तरह व्यस्त रहते। बीच-बीच में फुर्सत और आराम के क्षण आते, जो कठोर शारीरिक परिश्रम का जीवन जीने के लिए अत्यन्त आवश्यक थे। यह समय मनोरजन का और गीत नृत्य से जीवन का बोझ हल्का करने का होता था। जब फसल अच्छी होती तो आनन्द

एव उल्लास की भावनाए गीत और नृत्य में व्यक्त होती। सामाजिक और पारिवारिक उत्सव भी गीत और सगीत को जन्म देते। ऐसे ही लोक गीत हैं जो ग्रामवासियों के जीवन को अपनी विविधता और पूर्णता के साथ व्यक्त करते हैं।

लोकगीत ग्रामवासियों के जीवन और उनके सुख दुःख को व्यक्त करने वाले समूह लघु चित्र हैं। लोक साहित्य में अभिव्यक्ति प्राचीनता से सरोवेर लोग प्रथाए और लोक विश्वास मानव मन के विकास का चित्र प्रस्तुत करते हैं। ये गीत और नृत्य हमें लोगों में सौन्दर्य बोध से परिचित कराते है। इन गीतों की विशेषता यह है कि यह किसी एक व्यक्ति के नहीं बल्कि पूरे समाज के गीत होते हैं। गीत के रचनाकार का हमें पता नहीं होता। मौखिक परम्परा ही उन्हें सुरक्षित बनाये रखती हैं। लोक गाथाओं के जनजीवन में एक या दो पहलुओं का वर्णन होता है। चित्रात्मक और मार्मिक गाथा का लोगों पर अत्यन्त सहज प्रभाव होता है। इन गाथाओं में लोक साहित्य के विभिन्न पक्षों का विशाल खजाना है। उनकी शैली से ऐसा लगता है कि भूतकाल में इन गाथाओं का विशाल भडार रहा होगा। वास्तव में यह लोक साहित्य के अध्ययन के लिए एक अच्छा ज्ञान कोश है।

शेखावाटी : "ऐतिहासिक पृष्ठभूमि"

शेखावाटी शब्द का प्रयोग शेखा की वाटिका से रखा गया। इतिहास के अनुसार कच्छवा राजकुमार राव शेखाजी से पूर्व इस क्षेत्र पर सैनिक घुमतु शासक आते जाते रहे। राव शेखा के परिवार ने आमेर (जयपुर) एक छोटी रियासत से इस क्षेत्र पर शासन किया।

शेखाजी ने आमेर की सामन्तशाही का उल्लघन करते हुए 1471 में अपनी सम्प्रभुता की घोषणा की और उन्हीं के नाम पर इस क्षेत्र का नाम शेखाजी फुलवारी (वाटिका) शेखावाटी रखा गया।

राजस्थान प्रदेश का यह भू-भाग 13784 वर्ग किलोमीटर में फैला है और जिसमें सीकर 7855 वर्ग किलोमीटर तथा झुन्झुनूँ 5929 वर्ग किलोमीटर में फैले हुए हैं। यह प्रदेश पहले राजपूताना के अन्तर्गत सबसे बडी निजामत के रूप में था। तत्पश्चात, झुन्झुनूँ, और सीकर दोनों जिलों का सगठित स्वरूप शेखावाटी, जयपुर, अजमेर सभाग के उत्तर में स्थित है। यह प्रदेश 27 अश तथा 20 अश कला और 28 अश तथा 34 अश कला उत्तर अक्षाश व 74 अश 41 कला और 76 अश 6 कला पूर्व देशान्तर के मध्य स्थित है। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण शेखावाटी की जनगणना 4,88,0,17 (चार लाख अठासी हजार सत्रह) थी। इसके उत्तर पश्चिम में चूरु जिला, पश्चिम में नागौर, दक्षिण और दक्षिण पूर्व में

लुहारु (हरियाणा) है। इस प्रकार शेखावाटी प्रदेश प्रसार की दृष्टि से लगभग सात हजार पाच सौ किलो मीटर में फैला हुआ है।

अरावली पर्वत की शृखला राजस्थान को दो प्राकृतिक भागों में बाटती है। उत्तरी पश्चिमी भाग और दक्षिणी पूर्वी भाग। अरावली की एक शृखला शेखावाटी में सिघाना ग्राम से आरम्भ होकर खण्डेला, उदयपुर वाटी, शाकम्भरी, लोहार्गल, रघुनाथगढ रैवासा, हर्ष आदि स्थानों से निकलती हुई साभरझील तक जाती है। इसमें रघुनाथगढ की चोटी सबसे ऊँची है। शेखावाटी प्रदेश को दो भागों में विभक्त करने वाली यह पर्वत शृखला उत्तरी पश्चिमी और दक्षिणी पूर्वी भागों में से होकर निकलती है। इसका प्रथम भाग रेतीला है। तथा दक्षिणी पूर्वी भाग में पर्वत शृखलाएँ एव उपजाऊ मैदान है। अरावली की यह पर्वतमाला शेखावाटी के लिए वरदान सिद्ध हुई। अन्यथा यहा सम्पूर्ण भू-भाग में रेगिस्तान होता और आज का शेखावाटी प्रदेश भी मिला होता। ये पहाड़ियाँ शेखावाटी के जन जीवन और इतिहास की अखण्ड भौगोलिक इकाइयां सिद्ध हुई हैं।

शेखावाटी के पूर्वी भाग में टीले कम है। जब कि उत्तरी पश्चिमी भाग रेतीला है। पूर्वी भाग के मैदान अधिक उपजाऊ हैं। झुन्झुनू से पूर्व की ओर उपजाऊ मैदान है। ज्यों-ज्यों पश्चिम का और बढ़ते हैं, टीलो की सख्या बराबर बढ़ती जाती है। इस रेतीले भाग में पानी 10 मीटर तथा 50 मीटर तक गहरा है। यहा कुओं से पीने का पानी उपलब्ध होता है तथा सिचाई भी होती है। वैसे यहा खेती वर्षा पर निर्भर करती है। यहा की शर्तें टीलों की वजह से ठण्डी होती है और गर्मी के दिनों में अधिक गर्मी पडती है। इस प्रदेश की मुख्य रूप से बहने वाली काटली नदी है। जो खण्डेला के पास के पहाड़ों से निकलकर 90 कि मी उत्तर की ओर बढ़ती हुई चूरु जिले की राजगढ तहसील में बहती हुई बेसासर गाव के पास बालू रेत में सूख जाती है। काटली नदी के अलावा सीकर जिले में शोभावती, रानोली नदी के छोर की नदी, हर्ष की नदी आदि अनेक नदियाँ जीणमाता के सेरे में गिरती हैं। इस क्षेत्र की एक अन्य नदी त्रिवेणी अजीतगढ के पास होकर बहती है जो इस इलाके की गगा नदी है। इसके अलावा कई अन्य छोटी-छोटी नदिया है जो इस प्रदेश के इतिहास से किसी न किसी रूप में जुडी हुई हैं।

शेखावाटी की जातियों का इतिहास बहुत पुराना है। और जाति प्रथा की उत्पत्ति कब हुई। इसका विवाद का विषय रहा है परन्तु भारत में आर्यों के आगमन के बाद वर्ण व्यवस्था का स्थान जाति प्रथा ने ले लिया और अनेक उपजातिया बन गईं। कालान्तर में से जातियों का आधार जन्म एव वश परम्परा बन गई। तथा 18वीं शताब्दी तक यह व्यवस्था और भी कठोर हो गई। शेखावाटी का भू-भाग इस व्यवस्था से वंचित न रह सका। परन्तु अन्य स्थानों की वनिस्पत इस क्षेत्र की अपनी

विशेषताएं रहीं। जाति प्रथा, रहन सहन, रीतिरिवाज, उत्तव और त्यौहार आदि इस क्षेत्र की सामाजिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हैं।

शेखावाटी का भू-भाग अपने आप में विविधताओं को संजोये हुए है। भौगोलिक दृष्टिकोण से इस क्षेत्र का एक बड़ा भाग बालू के ऊँचे टीलों से अटा पडा है जहां का पानी खारा और आर्थिक दृष्टि से प्रभाव ग्रस्त है। दूसरा भाग अरावली की शृखलाओं से शोभायमान है, जिसमें पानी के झरने जंगल और समतल मैदान हैं जहा का पानी उपन्ना है। उपज रहन-सहन और रीति रिवाजों के दृष्टिकोण से भी थोड़ी विभिन्नता पाई जाती है।

शेखावाटी में जातीय व्यवस्था को तीन भागों में बाटा जाता है।

1. उच्चवर्ग
2. मध्यम वर्ग
3. पिछड़ा वर्ग

(1) ब्राह्मण, राजपूत, महाजन, ये लोग प्रतिष्ठा की दृष्टि से उच्च वर्ग में माने जाते थे। यह दूसरी जातियों से भेद भाव करते थे। छुआछूत का बोलबाला था। आर्थिक दृष्टिकोण से बड़े एव मध्यम श्रेणी के ठिकानेदार, धनाढ्य, ब्राह्मण, धनवान बनिये, सेठ, साहूकार मोदी ठिकानों के वकील आदि को उच्च वर्ग में माना जाता था समाज का आर्थिक दृष्टि से उच्च वर्ग किसी जाति विशेष से सम्बन्धित नहीं था, परन्तु व्यापार करके या शासन में जिसने अधिक धन अर्जित कर लिया हो उच्च वर्ग में गिने जाते थे। उच्च वर्ग की यह पहचान होती थी कि उनका ठिकानों में दरबार आना जाना और गढ पति से मिलना बे रोक टोक था।

(2) मध्यम वर्ग—खान-पान, रहन-सहन और सामाजिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से साधारण व्यक्ति और जातिया मध्यम वर्ग में मानी जाती हैं। ऐसी जातिया अभावों में रहकर भी वे अपनी प्रतिष्ठा को बचाने में लगी रहती हैं। शेखावाटी में राजपूत, ब्राह्मण, बनिया, जाट, गूजर, अहीर, माली, सुनार, खाती, पठान, कायम खानी, पीर जिन्दा आदि को लिया जा सकता है। सीकर झुन्झुनूँ वाटी में जाट, उदयपुर वाटी में माली खेतडी, सिंघाना बबाई, सिंघला में अहीर गूजर मध्यम वर्ग की जातियों में मानी जाती रही हैं। मध्यम वर्ग में अधिकतर कृषक थे और खेती करना इनका प्रमुख धन्धा था। कृषि के साथ पशु पालन एव कृषि सहायक धन्धे इनकी आजीविका के साधन रहे हैं।

(3) पिछडा वर्ग या पिछडी जातिया—छुआछूत भारत में लम्बे काल से चली

आ रही एक सामाजिक बुराई है। जिसने जातियों के उत्थान में बाधा पहुँचाई है। कुछ एक जातियों ने अपने पैतृक धंधे को नहीं छोडा और वही उस जाति का प्रतीक बन गया। उदाहरणार्थ मीना जाति शेखावाटी में चोरी करना अपना धंधा समझती रही। सामाजिक परम्परा में रहकर उन जातियों ने वही धंधे किये जो उन्हें विरासत में मिले।

खेतिहर मजदूर कृषि पर किसानों के यहां काम करके अपना गुजारा करते थे, इन्हें खेती करने पर मुकानियत नहीं थी, फिर भी ये खेतीहर मजदूर रहना पसन्द करते थे। यह प्रथा आज भी प्रचलित है।

कुम्हार, खाती, नाई, आदि पूर्णत कृषि पर आश्रित थे। कुम्हार किसानों को मिट्टी के बर्तन देकर अनाज प्राप्त करता था। खाती काम के बदले, नाई हजामत के बदले वार्षिक अथवा छमाही अनाज लेते थे। घोरी पशु पालने का धंधा पहले भी करते थे और आज भी करते हैं। इनका मुख्य धंधा पशुपालन था। अपनी कला दशता और सस्कृति को कायम रखने वाली जातिया मुख्यत डूम, ढाडी, जोगी, राणा, नट, भोपा, डाकोत, सासीबुवरी, सिक्का आदि पूर्णत समाज पर आश्रित थी। ये वही जातिया हैं जिन्हें संविधान में अनुसूचित जन जातियों में रखा गया है।

निम्न वर्ग में कुछेक विशेष जातियाँ थी, जिनकी दशा बडी विचित्र थी। समाज में इनका विशेष सम्मान नहीं था। परन्तु ठिकानों से इनका सीधा सम्बन्ध था। इनमें कलाल, मीना, दरोगा, नायक, धानक थे। इनके अलावा निम्न जातियाँ थी जो अछूत मानी जाती थी, जिनसे बेगार ली जाती थी। चमार, नायक, धानक इनमें प्रमुख थे हाथ के कारीगरों से मुफ्त काम लिया जाता था। छीपी, लीलगर, मणियार, कुम्हार, तेली, नाई आदि जातियों से ठिकानेदार अपनी मन मर्जी से काम लेते थे। कलाल शराब निकालने का काम करते थे शेखावाटी के लोक जीवन में कलाल की अहम भूमिका रही है। राजपूतों की महफिल कलाल के बिन सुनी और लोक गीत कलाली के बिना सूना था। शेखावाटी में राजपूतों में स्त्री पानी नहीं लाती थी, चक्की नहीं चलाती थी और खेतों से लकडी नहीं लाती थी। इस कार्य के लिए ये दरोगा रखते थे। इनका घर पर कार्य करना ही मुख्य धंधा था। मीना जाति ठिकानों में चोकीदारी और चाकरी करती थी। कुछ खानाबदोश कबीले आज भी घुमक्कड जीवन को अपनाए हुए हैं।

यद्यपि इन लोगों को सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक विकास योजनाओं के अन्तर्गत लायें, यह बहुत जरूरी है। किन्तु अच्छा यही होगा कि हम उनकी सास्कृतिक और अस्मिता को बनाए रखें तथा पिछड़े वर्गों के उत्थान में सुधार लाने के लिए निःशुल्क शिक्षा, बैंक ऋण, नौकरी, कृषि, सभी सुविधाएँ प्रदान करें, ताकि

उनके रहन-सहन का स्तर सुधर सके।

शेखावाटी स्वाधीनता के बाद झुन्झुनू तथा सीकर जिलों की इकाइयों के रूप में मान्यता मिली है। तब से इन जिला ने राजनैतिक, आर्थिक और सास्कृतिक क्षेत्रों में सराहनीय प्रगति की है।

शेखावाटी के लोक साहित्य के अध्ययन के लिए इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानना जरूरी है। प्राचीन काल में अधिकतर लोग कृषि पर निर्भर थे। लोगों को आजीविका के लिए कठिन परिश्रम करना पडता था। उनमें जीवन की उमग भी थी उनकी अपनी सौन्दर्य वृतिया थी। उनके अपने सामाजिक कार्य थे। वे देवी देवताओं की पूजा करते थे। ओजस्वी तथा समृद्ध जीवन व्यतीत करते थे।

शेखावाटी का लोक साहित्य अपनी विशेषता रखता है। यहा के लोक साहित्य पर यहाँ की बोली, समाज और सस्कृति का पूर्ण प्रभाव देखा जा सकता है। शेखावाटी की इन लौकिक रगतों के प्रभाव के फलस्वरूप ही यहा का लोक साहित्य राजस्थानी लोक साहित्य पर अपना प्रभाव रखता है यहा के लोक गीत, काव्य, लोक कथायें, नाटक, कहावतें, मुहावरे, पहेलियाँ, आदि अपनी विशेष रगत के कारण राजस्थानी लोक साहित्य का भडार भरे हुए है। यहा का समृद्ध लोक साहित्य यहा के जन मानस की लोक साहित्यक प्रतिभा का परिचायक है। जनमन के सरलतम धरातल से निसृत मगलमय भावगगा का यह पुण्य स्रोत अपनी अगाध गति से प्रवाहमान होता हुआ शेखावाटी अचल के लोक साहित्य के भण्डार को गौरव शाली एव परिपूर्ण बनाये हुए है। शेखावाटी में साहित्यिक वातावरण शताब्यिक कवियों की वाणी से मुखरित हुआ है। इससे सभी नीति धर्म एव सम्प्रदाय के साहित्यकारों ने अपनी कुशल लेखनी से गौरव पूर्ण रचनायें प्रस्तुत कर राजस्थानी और हिन्दी साहित्य का भडार भरा है। चारण कवियों में कृपाराम खीडियो, रामनाथ कवियों, गोपाल खीडिया, हरनाम उपाध्याय, महाकवि जान आदि कवि हुए हैं। जिन्होंने शेखावाटी के साहित्य गौरव को उज्जवल करने में अपना योगदान दिया है। इनमें भैरव लुहार का नाम विशेष उल्लेख रखता है। इनके ग्रन्थ शेखावाटी साहित्य की अमूल्य निधि है। इन साहित्यिक रचनाओं के अलावा लोग विभिन्न अवसरों के लिए भी गीत बनाने में दक्ष थे, जिनसे खेतों में काम के दौरान उनका मनोरजन हो सके। इसमें लोरियाँ, खेल गीत, भक्ति गीत, प्रेम सम्बन्धी गीत तथा शोक गीत भी शामिल हैं। यह सब शताब्दियों पहले के जनजीवन के इतिहास को रेखाकित करते हैं।

आर्थिक-जीवन

शेखावाटी में नवाबी काल से चले आ रहे आर्थिक सगठन में कृषि पशुपालन, उद्योग, व्यापार एव स्थानीय व्यापार का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यहा का मुख्य धधा कृषि रहा

है। पशु पालन इस क्षेत्र में कृषि के बाद स्थान रखता है। यहा के महाजन व्यापारी लोग व्यापार में बडे चतुर, सहनशील, व्यवसायी एव कार्यकुशल होते हैं। ये लोग बहुत पहले से ही देश देशान्तर जाकर बस गये थे। परन्तु अपनी जन्म भूमि से इन्होंने कभी सम्बन्ध विच्छेद नहीं किया। भारतवर्ष के विभिन्न स्थानों, विशेषकर, आसाम, बर्मा, रगून, माडले, कलकत्ता, नेपाल, हैदराबाद, बम्बई, अहमदाबाद आदि को शेखावाटी के बनियों ने व्यापार का प्रमुख स्थान बनाया, और वहीं जाकर बस गये। ज्यों-ज्यों इनका व्यापार बढता गया इन्होंने शेखावाटी में आकर अच्छी-अच्छी हवेलिया बनवाना शुरू कीं। ये अधिकाश हवेलिया 18वीं, 19वीं सदी में बनी हुई हैं। इन सेठों द्वारा निर्मित हवेलियों, मन्दिरों, धर्मशालाओं और कुओं के कारण इस इलाके में पत्थर-चूना, खान तथा मजदूरों पर सीधा प्रभाव पडा। जिससे यहा का आर्थिक जीवन प्रभावित हुआ।

आर्थिक सरचना की दृष्टि से शेखावाटी का 18वीं 19वीं शताब्दी में आर्थिक सगठन जानने के लिए यहा की कृषि, पशुपालन, बडे व छोटे उद्योग, कुटीर एव लघु उद्योग, व्यापार तथा नौकरी और मजदूरी का विस्तृत वर्णन करना अत्यावश्यक है। शेखावाटी का अर्थ व्यवस्था पर शेखावाटी के प्रवासी लोगों का प्रभाव लगभग 300 वर्षों से चला आ रहा है। और आज तक विद्यमान है। आर्थिक सगठन मे उनकी प्रमुख भूमिका रही है। अत उनका विवेचना करना भी परम आवश्यक है।

सम्पूर्ण भारत की अर्थ व्यवस्था को प्रभावित करने वाले इस भू भाग के उद्योगपति और व्यापारी आज विश्व में छाये हुए हैं। शेखावाटी का ऐसा कोई शहर नहीं जहा पर इन लोगों की बडी-बडी आलीशान हवेलिया, धर्मशालाऐं, कुए, बावडिया, तालाब, मन्दिर या विश्रामगृह न हों। ठिकानों के समय में ये मोदी और दीवान रहे। ये शासक वर्ग के निकट पैसे के बल पर रहे। अकाल और महामारी के समय में इन्होंने इस क्षेत्र के जनकल्याण और पशुधन की रक्षा की। शेखावाटी के आर्थिक सगठन में इन प्रवासी लोगों का बडा भारी योग रहा। और आगे चलकर यहा की प्रगति का एक मात्र आधार बना।

अपने आप में प्राकृतिक दृष्टि से विभिन्नता सजोये हुए शेखावाटी भू भाग की कृषि की स्थिति भी भिन्न रही है। यहा का मुख्य पेशा कृषि रहा है। 18वीं व 19वीं शताब्दी में यह क्षेत्र पूर्णतया कृषि पर आश्रित रहा है। पैदावार की दृष्टि से इसे तीन भागों बाटा जा सकता है। (1) अरावली की श्रृखलावाला क्षेत्र (2) मैदानी भाग (3) बालू रेत वाला भाग। शेष इलाका श्री माधोपुर से होकर रामगढ, लक्ष्मणगढ, नवलगढ, मुकुन्दगढ, उदयपुर वाटी का उत्तरी इलाका मीठे पानी का इलाका रहा है। इस क्षेत्र में भी खरीफ की फसल होती थी। इस क्षेत्र में कुओं द्वारा सिचाई भी होती थी। सिचाई बैलों से 'लाव' और चडस द्वारा की जाती थी। अकाल की विभीषिका भी इस इलाके की यादगार बनी हुई हैं। वि स 1956 के अकाल को छपनिया-काल कहते है जिसकी करुण कहानिया सुनकर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उस अकाल में बच्चे तथा औरतें तक बिक गईं। यहा का अनुभूति प्राप्त मन, भुला नहीं सका है। कृषि के साथ पशुपालन शेखावाटी का दूसरा मुख्य धधा

था। गाय, बैल, भैंस, भेड, बकरी, ऊँट और घोडे आदि पशु पाले जाते थे। शेखावाटी के 12 शहरों में गऊशालायें आज भी मौजूद हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रेवड रखने की प्रथा आज भी प्रचलित है। वर्षा के अभाव में यह शुष्क क्षेत्र भेड पालन का केन्द्र रहा है। चूरु, रामगढ, सीकर, लक्ष्मणगढ, बिसाऊँ, अलसीसर, मलसीसर तथा चिडावा के क्षेत्रों में लोग भेडों का रेवड रखते थे। उनसे अच्छी आय हो जाती है। वैसे इस क्षेत्र के प्रत्येक गाव में ऊनी वस्त्र (कम्बल, लोई, घावला, लूकार) बनाने के हाथ करघे लगे हुए हैं। झुन्झुनू, चूरु, रामगढ, लक्ष्मणगढ, नवलगढ, बबाई के कसाई रेवड़ के कारण धनाढ्य व्यक्तियों में गिने जाते रहे हैं।

ऊँट इस इलाके की प्रमुख सवारी है। आवागमन के लिए ऊँट की यात्रा ही सुलभ थी, आधुनिक यातायात के साधनों की कमी थी, खेती में माल ढोने में, सवारी में आम आदमी को ऊँट ही सुलभ होता था। दूसरे इलाकों से सामान ऊँटो द्वारा लाकर गाँवों में बेचते थे। यह इलाका रेल और सडकों से जुडा हुआ नहीं था। पहली बार झुन्झनू में रेल सन् 1924 में आई थी।

इस इलाके में बसी हुई बहुत सी जातियाँ किसी समय में तवर राजपूत थी। जो अब जाट जाति में हैं। आज भी इनमें वही परम्परागत ऐंठ है।

शेखावाटी के घोडे भी अच्छी नस्ल के माने जाते थे। प्रत्येक ठिकाने में घोडा, घोड़ी रखे जाते थे क्योंकि उस काल में इसे शाही सवारी समझा जाता था।

उद्योग —शेखावाटी के प्राचीन वृहद स्तर के उद्योगों में ताबा उद्योग, और इमारती पत्थर का उद्योग, महत्वपूर्ण रहे हैं। इन उद्योगों से यहा के आर्थिक विकास को सम्बल मिला है।

इमारती पत्थर की शेखावाटी में जसरापुर रघुनाथ गढ मुख्य स्थल रहा है, पीतल और तावे के बर्तन, निमका थाना और श्री माधोपुर में बनाये जाते रहे हैं। इस इलाके में रेवाडी के बाद बर्तन बनाने का सबसे बड़ा केन्द्र श्रीमाधोपुर है।

रगाई, छपाई, गैर बधेज में शेखावाटी का गौरव पूर्ण स्थान रहा है। दुपट्टा, साडी, पेचा, साफा, ओढना, पीला, पोमचा, चूनडी, झूरा, धनक आदि की बधाई एव रगाई कलात्मक होती है। यह धधा अब जोरों पर है इनकी माग देश-देशान्तर में बनी रही है। यह बडे पैमाने पर सीकर, झुन्झुनू नवलगढ, बिसाऊ, श्रीमाधोपुर में विद्यमान है। जहा रोजाना हजारों की सख्या में ओढने तैयार होते हैं। दोला मोला की चुनडी भारत विख्यात है।

इसके अलावा गोटा किनारी उद्योग, टोकरिया, दरी, सलीता मिट्टी के बर्तन, मणिहारी, सुनारी का काम, आदि गावों व शहरों में होते रहे हैं।

शेखावाटी में सूती और ऊनी वस्त्र उद्योग 18-19वीं सदी में बहुत थे जो अब धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। जुलाहे प्रत्येक गाव में थे। हाथ से मोटा कपडा बुनते थे। सूती वस्त्रों में रेजी, खेश व मोटी धोतिया बनाते थे। ऊनी वस्त्रों में कम्बल, ऊनी घाघरे, लूकार और जोई बनाते थे। शेखावाटी के खारे घाघरे आज भी प्रसिद्ध हैं।

इस प्रकार शेखावाटी की विभिन्न जातियों ने अपने कार्य अपनाये जो उनकी जीविका के साधन बने।

व्यापारः

शेखावाटी के बारह शहर यहा के मुख्य व्यापारिक स्थान रहे हैं। सुन्दर बाजार, ऊची दुकानें चौडे रास्ते और जगह धर्म शालायें यहा की विशेषता रही हैं। व्यापार ऊटो द्वारा होता था। उस समय तक नारनौल तक रेलवे लाइन आ चूकी थी। ऊटो द्वारा, दिल्ली, पजाब, पश्चिम में पुष्कर, दक्षिण में जयपुर अलवर, हिण्डौन, तथा उत्तर में गोगामेडी तक व्यापारिक कार्यों हेतु आदि जाया करते थे। एमर और डीडवाना तक की झीलों से नमक लादकर दिल्ली तक पहुचाते थे और उस इलाके से गुड, शकर, खाड लाकर यहा शहरों में बेचते थे। स्थानीय उत्पादन को भी बनिये सग्रह कर लेते थे। आम आदमी की सीमित आवश्यकताओं के कारण व्यापार भी सीमित था। बनियों का मुख्य धंधा व्यापार था। धीरे-धीरे आवागमन के साथ इस क्षेत्र के व्यापारी देश के कोने-कोने में फैल गये और अपनी बुद्धि और चातुर्य के कारण देश के सबसे धनाढ्य व्यक्ति बन गये। जो भारत के आर्थिक क्षेत्र में सिरमोर माने जाते हैं।

बिडला, डालमिया, जयपुरिया, जाटिया, मडेलिया, मुरारका पीद्दार, सेक्सरिया, आदि कितने ही करोडपति इसी शेखावाटी की देन हैं। और मात्र 200 वर्षों की।

नौकरी-पेशा जाति भी इस भू-भाग में रही। व्यापारी से उद्योग की ओर ज्यों-ज्यों ये महाजन बढने लगे, इन्हें कर्मचारियों की जरूरत पडी और इस क्षेत्र के ब्राह्मण इन्हीं के साथ देश दिसावर चले गये। कालान्तर में सभी जातियों के लोग नौकरी करने लगे। ठिकानों में राजपूत, पठान, और कयामखानी नौकर रखे जाते थे।

साराश में शेखावाटी के शासन काल में किसान, मजदूर, कठोर मेहनत करके अपनी सीमित आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। ऊटो की लम्बी-लम्बी कतारें व्यापारियों का बोझा ढोने और सामान लाने ले जाने में लगी रहती थीं। ऊट लादना प्रमुख आवागमन का साधन था। कुटीर उद्योग की बहुतायत थी। सम्पूर्ण क्षेत्र की आवश्यकताओं की पूर्ति के एक मात्र साधन थे।

अध्याय २ मिथक और पुराण

शेखावाटी में मिथक कथायें अनगिनत हैं। वैदिक साहित्य से लेकर अन्तिम पुराण तक इन मिथक कथाओं के विशाल भण्डार हैं। इन्हें समझने के लिये एक

1. गजेटियर्स राजपूताना भाग-2 1879
2. शेखावाटी प्रवासी, 3-5
3. गोपाल व्यास, सीकर जिले का भूगोल-1
4. हरनारायण भावन-नवीन भूगोल जिला-झुन्झुनू पृ.27

विशिष्ट दृष्टिकोण को अपनाना जरूरी है। रूढ़ीवादी दृष्टिकोण जहा सशय और उदासीनता को उबारने में सहायक होता है वहीं आधुनिक की प्रधान दृष्टिकोण में सहन शीलता का पुट देना आवश्यक हो जाता है। हमारी यह धारणा है कि लोक साहित्य में सीधे सरलतम, उच्चे आदर्श, उत्कृष्ट निम्नविधान, सरल अभिव्यक्ति, सुकुमार विचार और प्रभूत सौन्दर्यत्व का समावेश होता है। साधारण लोग, जीवन पद्धति में तेजी से परिवर्तन पसन्द नहीं करते है। समिति इच्छा में सादा जीवन, शुद्ध प्रसन्नता, निश्चल सम्बन्ध, सच्चे विश्वास और उच्च आदर्श इन साधारण लोगों के जीवन की विशेषताए होती हैं। आधुनिक मनुष्य को इन लोगों में शर्मिलापन, रूढिप्रियता, असप्रेषणीय स्वभाव और अनजान तथा अपरिचित का भय दिखाई देता है।

बौद्धिक चिन्तन की जटिलताओं से अछूते रहने के कारण ग्रामवासी मूर्त वस्तुओं में शान्ति ढूँढते हैं। उन्हें वे अमूर्त ईश्वर की शक्तियों से विभूषित समझते हैं। सूर्य उनके लिये सर्वशक्तिमान और शक्तिदाता है। ईश्वर की तरह वह अत्यन्त प्रखर होता है। वह बिना भेदभाव सभी पर अपनी किरणें बिखेरता है। लोग उसे ईश्वर का अवतार मानते हैं। जो उन्हें जीवन में सुख देने के लिए आया है। इसके विपरीत जब सूर्य की झुलसती गर्मी असहाय हो जाती है और वर्षा के अभाव में भयानक अकाल के लक्षण दिखाई देने लगते हैं तो इसे अपने पापों का फल तथा ईश्वर का प्रकोप मानते हैं। वर्षा के लिए वरुण और इन्द्र की पूजा करते थे और हवन करते थे। उन्हें विश्वास है कि उनकी प्रार्थना सुनी जायेगी। वर्षा के आवहान के लिये ऋग्वेद के एक मत्र को गाया जाता है। धार्मिक अनुष्ठान किये जाते हैं। समाज के सामूहिक प्रयास एक ही लक्ष्य पर केन्द्रित हो जाते है और उनका लक्ष्य होता है वर्षा. . . .

वर्षा की सर्वाधिक लोकप्रिय कामना की अभिव्यक्ति "दादुर गीत" में होती है जिसे सगीत में ढाला गया है। एक गीत इस प्रकार है:—

मेढकी मा, मेढकी मा हमें एक बाल्टी पानी लेने दे।
मच्छर मां, मच्छर मा, हम ऐसा पानी दे कि हमारे आगन भर जावें।

जल प्रलय में सब कुछ नष्ट हो जाता है। धरती पानी में डूब जाती है। हर जगह पानी ही पानी दिखाई देता है। पुराणों के अनुसार विश्वास किया जाता है कि इस तरह पृथ्वी को नव निर्माण के लिए तैयार किया जाता है। जल प्रलय एक ऐसी महान घटना है जो विश्व व्यापी विनाश को जन्म देती है। पीढियों तक इसका जिक्र किया जाता है और इसे याद किया जाता है किन्तु भारतीय दर्शन इसे ऐसी घटना मानता है जिसका बार-बार होना अनिवार्य है। लाखों वर्षों पूर्व यह प्रदेश समुद्रवत जल से भरा था। ऋग्वेद व पुराणों में वर्णित जल प्लावन की घटना भी प्राचीन भारतीय साहित्य से परिप्रेरित है। गोर्की का कहना है कि और किसी प्रमाण की

सम्बन्ध मादक पेयों की वैधता का एक कारण हो सकता है। गरीब आदमी के लिए यह आय का एक साधन होता है। उसके लिए यह खुशी का स्रोत भी है। ग्रामीण जीवन में बढ़ती हुई मद्यपान की स्थिति इस प्रदेश के लिए घातक सिद्ध होगी। काव्यों में यादवों का वर्णन आता है जो इसके कारण पूर्णत नष्ट हो गए।

अध्याय ३ धर्म और जादू टोना

ग्रामीण लोकाचार के दो मजबूत आधार हैं—धार्मिक विश्वास और जादू-टोनों में विश्वास, परम्परा का एक हिस्सा है परम्परा की पवित्रता इस आधार को बल देती है और स्थानीय देव पुरूषों पर विश्वास बनाये रखने में साधारण ग्रामवासियों की सहायक होती है—गाव का मुखिया उनके लिए पथ प्रदर्शक होता है। वह रस्म नियम निर्धारित करता है। परम्परागत नियमों आदेशों का पालन करना होता था। सामान्य नियम भग करने पर उस व्यक्ति का गाव से बहिष्कार कर दिया जाता था। जन्म, विवाह, मृत्यु आदि महत्वपूर्ण अवसरों पर नियमों का सख्ती से पालन किया जाता था। अनुष्ठानों के निर्वाह के लिए एक परम्परागत भाषा होती थी जो हर समूह में अलग-अलग होती थी।

अनुष्ठानिक और धार्मिक ताने बानों में अन्ध विश्वास की काली छाया भी रहती है। यह शुभ, अशुभ शकुन हो सकता है। इसका सम्बन्ध किसी व्यक्ति या वस्तु से बचने या उसे प्राप्त करने से हो सकता है, यह किसी बुद्धिमान व्यक्ति की सलाह हो सकती है। विचार शब्द या कार्य जो भी इसका रूप हो, इसकी अवहेलना या इस पर संदेह कभी नहीं किया जा सकता। यह उद्‌गार का विषय नहीं होता। न इसका विश्लेषण किया जा सकता है, न वैज्ञानिक जाच।

शगुनों को सावधानी के तौर पर लिया जाता है। यदि किसी काम पर जाते समय छींक की आवाज सुनाई दे तो जाने वाला रूक जाता है और वापस लौट आता है। इसी प्रकार बहुत से अशुभ शगुन होते हैं जिन्हें लोग जानते हैं। दायीं ओर से बायीं ओर उड़ता कौआ, अशुभ माना जाता है और कोओं की रति क्रीडा तो बहुत भयानक परिणाम लाने वाली मानी जाती है। गली के कुत्ते का रोना भी अशुभ माना जाता है। चलते समय भी कुछ नियमों का पालन करना होता है। पुरूष पहले दाया कदम और महिलायें बाया कदम रखती हैं। छिपकली विपत्ति की सचूक है किन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि आवाज किस समय सुनाई दी और किस तरफ से आई। छिपकली का शरीर के ऊपर गिरना भी शुभ अशुभ माना जाता है। शुभ अशुभ इस बात पर निर्भर करता है कि छिपकली शरीर के किस हिस्से पर गिरती है। बस्ती में उल्लू की उपस्थिति को अशुभ माना जाता है। सुबह उठते समय बिल्ली को देखना या यात्रा पर जाते समय बिल्ली का रास्ता काटना विपत्ति का सूचक माना जाता है।

यही स्थिति साप की है। यदि किसी काम पर जाते समय गीदड़ रास्ता काटे तो काम में सफलता निश्चित मानी जाती है। नीलकण्ठ का दिखाई देना सौभाग्य सूचक माना जाता है। किसी यात्रा पर जाते वक्त सौन चिडी का दाहिने आना, तीतर का बायें बोलना, कोतरी का दायें बोलना, हरिणों के झुण्डों के दाहिने आना शुभ माना जाता है। रास्ते में सेली का मिलना अशुभ माना जाता है।

पुरूषों के लिए दाए अग का और महिलाओं के लिए बायें अग को फडकना शुभ माना जाता है। स्वप्न भी अच्छे और बुरे की सूचना देते हैं। स्वप्नावस्था ग्रामीण लोगों के लिए जागृतावस्था की तरह वास्तविक होती है। गर्भवती स्त्री को ग्रहण के समय अन्धेरे कमरे में रखा जाता है। इसके पीछे यह विश्वास है कि ग्रहण को देखने पर शिशु के अग में विकृति हो सकती है।

स्त्रियों पर कभी-कभी अच्छी या बुरी आत्माओं के भूत भी सवार हो जाते हैं। जब किसी स्त्री पर भूत सवार होता है तो उसका व्यवहार असामान्य हो जाता है। वह फर्राटे से बोलने लगती है और ऐसी बातें करती है जिनके बारे में सुनने वालों को कोई ज्ञान नहीं होता। वह सुनने वालों को कुछ करने या न करने का आदेश देती है। यह प्रथा भोले भाले और हताश व्यक्तियों को सताने के कारण भी बनी हुई है। इसके उपचार के लिए ओझा को बुलाकर समस्या का समाधान कराते हैं।

जादू टोनों से शत्रु को या तो मार दिया जाता है या अपग कर दिया जाता है। इसके लिए एकान्त में अशुभ मत्र पढा जाता है। जिसे मूठ चलाना कहते हैं। जिसे जादू टोना कहा जाता है। इसके प्रतिकारक उपायों के लिये भी झाड फूँक करने वाले को बुलाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जादू टोना ग्राम जीवन का सबसे भद्दा पहलू है। रोग और दुख के निवारण तथा सुख प्राप्ति के लिये तावीज आदि पहने जाते हैं। यह प्रथा इतनी पुरानी है और विश्वास इतने दृढ हो चुके हैं कि इन्हें समाप्त नहीं किया जा सकता।

भावुक तथा विरह दग्ध स्त्री-पुरूष अक्सर उनके शिकार होते हैं स्थानीय वीर गाथाओं, लोक कथाओं में इन उपकरणों की सहायता का उल्लेख मिलता है। लोगों का इस अदृश्य शक्ति पर विश्वास बना रहता है। यह शक्ति विभिन्न रूपों में प्रकट होती है जब कारण समझ में नहीं आता तब उसे जादू का अद्भुत चमत्कार मान लिया जाता है।

रोगोपचार

गाव के लोगों के पास मन और शरीर के विभिन्न रोगों के उपचार के लिये अपनी औषधियां और अपने तरीके होते हैं। जादू की शक्ति अक्सर गाव के वैद्य

हकीम के पास होती है। जिसे आयुर्वेद का भी अच्छा ज्ञान होता है। औषधि ज्ञान उन्हें विरासत में मिल जाता है। उन्हें सैद्धांतिक ज्ञान की अपेक्षा औषधियों का व्यावहारिक ज्ञान अधिक होता है। वे सांप और बिच्छू का इलाज भी जानते हैं। विष उतारने के लिए वे औषधि तथा जादू या अलग-अलग या मिलाकर उपयोग करते है। यह लोक ज्ञान विशेषकर औषधि और जादू टोने का ज्ञान, सावधानी से गुप्त रखते थे जो अपने पुत्र या शिष्य को ही देते थे।

लोक साहित्य में मौसम

लोक कलैण्डर का लोगों के जीवन में बड़ा महत्व है। मौसम की पूर्व सूचना देना एक मुख्य काम है। मौसम के परिवर्तनों पर पूरी तरह निर्भर होने के कारण लोगों को विश्वसनीय सूचना की हमेशा जरूरत पड़ती है। गांव का पुजारी और अन्य बुजुर्ग लोग गांव के बुद्धिमान व्यक्ति माने जाते हैं। विभिन्न बातों पर उनकी सलाह ली जाती थी जैसा कि बारिश कब होगी, पछवा हवायें कब चलेंगी, तालाब और नदियाँ पानी से कब भरेंगी। और कब खेत का काम शुरू और खत्म कर सकते हैं। वर्षा का अनुमान चन्द्रमा की कुण्डली से लगाया जाता था। यदि चन्द्रमा का यह प्रभा मण्डल चांद को छूता हुआ हो तो वर्षा में विलम्ब और यदि प्रभा मण्डल चांद से दूर हो तो वर्षा का निकट होना माना जाता है। आकाश में उड़ने वाला एक जीव (मेघपाल) का आकाश में दिखाई देना निकट भविष्य में वर्षा का सूचक होता है। मौसम संबंधी इन पूर्वानुमानों के मूल में लोगों का लम्बा अनुभव होता है। सयाने लोगों की सलाह पर उनका इतना विश्वास होता है कि वे आशा और आत्म विश्वास से भर जाते हैं। वे प्रकृति के देवताओं से लाभ वृष्टि की प्रार्थना करते हैं। उनके भविष्य कथनों में उन दिनों को भी बताया जाता है जो यात्रा खेती के काम, सगाई, विवाह, गृह प्रवेश या ग्राम जीवन की दूसरी सामान्य गतिविधियों के लिये शुभ होते हैं।

प्रकृति को निकट से देखने और पूर्वजों के अनुभवों के कारण उनके पास जीवन के विभिन्न क्रिया कलापों से संबंधित विशिष्ट निदर्शों का मौखिक रिकार्ड होता है। भोर के तारे का उगना, पानी से लदे या बिना भापके बादलों का इक्ट्ठा होना, हवाओं का चलना, धाद का बढ़ना, घटना, सूर्य का डूबना आदि का अलग-अलग महत्व होता है। आकाश में सत्ताईस नक्षत्रों की गतियों का अर्थ लोगों के जीवन के अनुरूप लगाया जाता है। लोगों ने इन सितारों, ग्रहों को अपने नाम दिये हैं। जैसे भोर का तारा, ध्रुवतारा, (सप्त-ऋषि) सांझ का तारा, पुच्छल तारा आदि। भविष्य के सम्बन्ध में उन्हें ऊपर की शक्तियों और प्रकृति की कृपा पर पूर्ण विश्वास होता है।

अध्याय ४ रीति रिवाज, व परम्पराऐ

शेखावाटी क्षेत्र में रीतिरिवाज, यहा के सामाजिक जीवन के आदर्शों का निर्माण करते आये हैं। यहा के रीतिरिवाज लोक साहित्य में परिणत होकर इस लोक की सस्कृति बन गये हैं। यहा के नर नारियों में त्याग, परोपकार व अभावों में प्रसन्नचित रहने की प्रवृति ने असामान्य आदर्श स्थापित किये हैं। यहा के लोगों में सामाजिक रीतिरिवाजों में मरणे, परणे, जन्म, उत्सव मौज अतिथि सत्कार प्राय ब्राह्मण, वैश्य और राजपूतों में मिलते हैं। विवाह करने के लिए कन्या के घर पर बारात बनाकर ले जाने का रिवाज आज तक प्रचलित है। शेखावाटी शेखावत काल में बारात ऊँटो व बैल गाडियों में जाती थी और लगभग 3 दिन तक ठहरती थी। लोक गीत (सीठणे) गाये जाते थे। विवाह सामान्यतया समान स्तर में किये जाते थे, ठिकानेदारों के विवाह शादिया खर्चीली होती थी। घोड़ों और हाथियों पर बारात जाती थी, घोड़ी पर चढ कर तौरण मारणा सम्मान सूचक समझा जाता था। रईस लोग तथा ठिकानेदार हाथी पर चढ़ कर भी तौरण मारते थे। साधारण हैसियत का आदमी घोड़ी पर चढकर तौरण नहीं मार सकता था। शेखावाटी में सवारी पर चढकर अथवा छाता लगाये व्यक्ति को ठाकुर के घर के सामने नहीं जाने दिया जाता था। शेखावत काल में कोई भी व्यक्ति जागीरदार के पास नगे सिर नहीं जा सकता था। जागीरदार तथा ठिकाने के ठाकुर की मृत्यु पर गाव के प्रमुख व्यक्तियों को सिर मुडवाना पडता था, तथा खुशी के मौकों पर अनिवार्य रूप से खुशी जाहिर करनी पड़ती थी। राजपूत, ब्राह्मण, वैश्यों में विधवा विवाह नही होते थे। कुछ पिछड़ी जातियों में पुन विवाह भी होते थे। राजपूत मीणा तथा मुसलमानों में बहु विवाह की प्रथा भी थी जो अब प्राय समाप्त हो गई है। बाल विवाह की प्रथा कम होती जा रही है। मृत्यु पर हिन्दू जलाते हैं और मुसलमान व इसाई दफनाते हैं मृत्यु भोज का आम रिवाज था। गरीब से गरीब और अमीर से अमीर लोग मृत्यु भोज अवश्य करते थे। मृत्यु भोज में ब्राह्मणों को भोजन कराना, गऊ दान देना, फिर बिरादरी को भोजन कराना सम्मिलित था। भोजन दो दिन तक दो बार कराया जाता था। बारहवें के दिन से पहले मृतक की अस्थिया गगा जी पहुचाने का रिवाज आज तक प्रचलित है। शेखावाटी में लोहार्गल नए बिना गगा स्नान से ही मुक्ति नहीं मिल सकती।

विवाह के अवसर पर शराब, अफीम व गाजे का भी रिवाज था। राजपूतों में इसका विशेष प्रचलन था। किन्तु अब तो शराब के बिना शायद ही कोई विवाह होता हो। कुछ हिन्दू, मुसलमान हो गये थे उनके रीतिरिवाज हिन्दुओं से मिलते जुलते है। विवाह की पद्धति भी अलग-अलग जातियो की अलग-अलग होती है। विवाह के अवसर पर ढोलक, शहनाई, बैण्ड बाजे बजाते हैं। पहले बड़े-बड़े लोगों के यहां रंडी का नाच तथा सांगी बुलाने की भी प्रथा थी। लेकिन आजकल सामान्य लोग भी

विवाह में खूब पैसा खर्च करता है, लडकी वाला भारी मात्रा में दहेज तथा सजावट पर भारी रकम खर्च करते हैं। और भारी सख्या में बारात लाने का रिवाज बढता जा रहा है। यद्यपि बारात अब केवल एक टाईम का ही भोजन करती है। इसके बावजूद दहेज तथा बाल विवाह जैसी खराबियों को बन्द करने की जरूरत है। बडी जातियों में आज भी कुनबे के कायदे में जकडी नारियाँ आपको सिसकती हुई मिलेगी जो रूढिवाद से आज भी मुक्त नहीं हो पाई हैं।

यहा के प्रमुख त्यौहारों में होली, दिवाली, दशहरा, रक्षाबन्धन गूगा, सक्रान्ति गणगौर प्रमुख हैं। रक्षाबन्धन का त्यौहार वैसे सभी मानते हैं। परन्तु ब्राह्मण इस त्यौहार को अधिक मानते हैं। दिवाली को वैश्य लोग अधिक पूजते हैं। दशहरा बडी धूम धाम से शाही ठाठबाट से मनाने का रिवाज है।

दीपावली के दूसरे दिन इस इलाके में राम-राम सा करने का रिवाज भी पुराना है। साधारणतया नाई, कुम्हार, खाती चमार, नायक, धानक आदि जातिया अपने-अपने किसानों को राम- राम कहने जाती थीं वे बदले में इन्हें कुछ भेंट स्वरूप देते थे।

अतिथि सत्कार

गावों का अतिथि सत्कार साधारण था। हुक्का पिलाना और भोजन कराना लोग अपना धर्म समझते थे। बडों के सामने चारपाई पर भी नहीं बैठते थे। ठिकानेदार अपने सामने साधारण आदमी को चारपाई पर नहीं बैठने देते थे। लेकिन आजकल यह प्रथा प्राय समाप्त है।

शेखावाटी में गाव एक ईकाई के रूप में होते थे, गावों की अपनी स्वय की सामाजिक व्यवस्था थी। पचायत का प्रधान ठिकानों की और से नाम जद चौधरी अथवा नम्बरदार होता था। जो गाव के छोटे-मोटे झगडे मिटता था। विवाह, उत्सवों एव मृत्यु भोज पर सहयोग देता था। गाव में पीने के पानी का प्रबन्ध करता था तथा गाव में एक चौकीदार होता था, जो जाति से मीणा होता था, ग्राम की सम्पत्ति की रक्षा करना उसका कर्त्तव्य था। सामाजिक अपराधों पर दोषी को दंडित करना। अपनी पत्नी को तलाक देने या छोड़ने, पचायत की बात न मानने पर उसे जाति से बहिष्कृत कर देती थी और हुक्का पानी बन्द कर देती थी। बात मान लेने पर दण्ड देकर वापिस जाति में मिला लिया जाता था।

हरिजनों में जाति पचायत बडी शक्ति शाली होती थी जिसमें आस पास के सैंकडों व्यक्ति बैठते थे। इन सबका खर्चा अपराधी को देना पडता था। जाति पचायत (न्याय) का फैसला जाति को मान्य होता था। फैसले में आर्थिक दण्ड जाति बहिष्कृत जिसमें कोई व्यक्ति उससे बेटी व्यवहार नहीं करता था। हुक्का पानी बन्द

और कभी-कभी शारीरिक दण्ड भी दिया जाता था। गावों की सामाजिक व्यवस्था में पानी के लिए अलग नियम थे, सवर्ण तथा हरिजन दोनों पानी निकला सकते थे। परन्तु उनके लिये दूसरा ढाणा होता था। भगी, सासी बावरिया वगैरा वही पानी पीते थे जो खेतों में पशु पीते थे। लेकिन स्वतत्रता प्राप्ति के साथ ही यह जर्जर अमानवीय व्यवस्था खत्म हो गयी स्कूल कुल मिलाकर ग्रामीण व्यवस्था का अपना एक स्वरूप था जो प्राचीन काल से चला आ रहा था।

परम्परायें

इस प्रदेश के सीधे सादे लोग सामन्ती शोषण के शिकजे में जकडे थे और शासकों के अन्याय और अत्याचारों को सहन करते रहते थे। बेगार जैसी शोषण प्रधान, पीडादायी बुराई से जनता स्वाधीनता प्राप्ति के बाद ही मुक्त हो सकी। पहले न किसान को जमीन का हक था न हीं हरिजनों तथा गरीब वर्ग को जेवर तथा नये वस्त्र धारण करने की स्वतत्रता थी। ग्रामीण जन की व्यवस्था को कोई सुनने वाला नहीं था। गाव तथा ढाणीयों की एकदम उपेक्षा थी। समस्त नागरिक सुविधायें शासकों के परिवार तथा शहरी जनता को प्राप्त होते थे। राजाओं, नवाबों, जमींदारों, सामन्तों के सामान्य व्यक्तियों के साथ ज्यादतिया तथा अत्याचार काबिले बर्दाश्त नहीं थे। और समाज का वातावरण इतना भयावय तथा विषाक्त था कि सामान्य जन के लिए स्थिति का विरोध न कर सकने के बावजूद यहा के लोग अत्याचार तथा अन्याय के खिलाफ जूझते रहे और अपनी जीवन्तता, रगीनी और मस्ती बनाये यहीं के लोग यही है शेखावाटी का वैशिष्ट्य। शिक्षा की प्राचीन विधि आधुनिक व्यक्ति को अजीब लगती है। वैदिक ज्ञान समाज के एक विशेष वर्ग के लोगों तक सीमित रखा गया था। इस प्रकार ज्ञान का उपयोग सबकी भलाई के लिए किया जाता था। उसके बाद साहित्य आया, जिसे पुराण और महाकाव्य कहा जाता है, इसमें दर्शन नैतिकता शत्रु कला, शिल्प आदि सब कुछ था। उनका विस्तार विश्व कोष जैसा था। यह ज्ञान फुर्सत के क्षणों में जन साधारण को दिया जाता था। ज्ञान लिखित रूप से नहीं मौखिक रूप से दिया जाता था। प्रत्येक गाव में सम्भव हो तो मन्दिर के पवित्र प्रागण में विशाल जनसमुदाय को पुराणों की कथा सुनाई जाती थी और उसका अर्थ बताया जाता था। मानव आस्तित्व के चार आदर्शों, धर्म, काम, अर्थ, और मोक्ष पर बार-बार जोर दिया जाता था। और जन साधारण को अपने परिवेश की गन्दगी तथा अन्धेरे से ऊपर उठाया जाता था। प्रत्येक किसान या श्रमिक जीवन के आदर्श पर विश्वास करता था। जैसे अच्छे कर्म का अच्छा फल मिलता है। सदाचार का जीवन जीओ, खुद जीओ और दूसरों को जीने दो। देवताओं का सम्मान करो और अतिथि का सत्कार करो। ग्रामवासियों की सादगी, अतिथि-सत्कार, स्नेहशीलता और न्याय प्रियता धर्म प्रधान सांस्कृतिक विरासत से प्रस्फुटित हुई है। स्पष्टत इसकी प्रेरणा

महाकाव्यों तथा पुराणों से मिलती थी।

विवाह के अवसर पर महिलाए गीत गाना अपना कर्त्तव्य समझती हैं। विवाह में आए मेहमानों का इन गीतों से मनोरजन करने का रिवाज है। विवाह के बाद भावुक क्षण आते हैं। जब वधु को अपने नये घर के लिए विदा किया जाता है, वधु जो अपने माता पिता के घर स्नेह, बडे लाड प्यार से पलती है जब अपने पति के साथ उसके घर जाती है। यह घर उसके लिए नया होता है किन्तु उसे हमेशा वहां रहना होता है। यहा तक कि उसका पति भी उसका परिचित नहीं होता तथा गाव भी अपरिचित होता था क्योंकि पहले नाई तथा पुरोहित ही सगाई करने में सक्षम थे। विवाह के बाद उसे पति का प्यार भरा साथ मिलता है परन्तु बिछुडने का दुख माता पिता को होता है जिन्होंने बचपन से उसे बडे लाड प्यार से पाला होता है वही उसे एक अजनबी के साथ भेज देने पर विवश होते हैं। यह विदाई माता पिता के लिए बड़ी कष्ट दायक होती है। प्रस्तुत गीत साधारण वधु की मा या परिवार की हित चितक किसी बडी बुढी महिला द्वारा गाया जाता है।

> लाडली बच्ची तू सास को अपनी प्यारी माँ समझो
> प्यारी बेटी, ससुर को पिता समझो
> प्यारी बेटी, तुम्हारा पति अब से घर का राजा है।
> घर पर उसका राज चलेगा, वह धर का मालिक है।
> तुम उसके घर की देख भाल करना।
> वह तुम्हारा अपना धर होगा।
> वह उस घर का राजा होगा।
> और तुम घर की रानी होगी।
> तुम उस घर की भरपूर फसल होगी।
> तुम उसकी धन दौलत होगी।

इस प्रकार के विदाई गीत अनेक हैं और लोगों ने सामाजिक उत्सवों पर गाने के लिए इन्हें गढ लिया है। गीतों में जन साधारण के रस्मों रिवाज की अभिव्यक्ति होती है।

शेखावाटी की कुल वधुओं का रगीनी पूर्ण परिधान और श्रृगार प्रसिद्ध है। शेखावाटी में अलकारों की छटा देखते बनती है। अब यद्यपि धीरे धीरे पुरानी परम्परा लुप्त हो चली है। पर ग्राम क्षेत्र में जहा नव युग की लहर अभी नहीं पा सकी है। साधारण लोग तम्बाकू की चिलम या हुक्का पीते थे। हुक्का पान प्रौढता एव शालीनता का परिचायक था। कन्या जल अशुभ माना जाता था। राजपूतों में कन्यावध का रिवाज था। पुत्र जन्म पर उत्सव मानया जाता था। दूध और छाछ पेय थे। चक्की

का घनघोर स्वर घने अधकार में घर-घर गूँज उठता था। दूध का बिलोवन अपनी घर-घर आवाज इस गुज में मिला देता था। वह विशुद्ध जीवन अब विलुप्त हो रहा है पर इसकी मीठी याद अब भी शेखावाटी के जन मानस में है।

दहेज प्रथा वैदिक काल से चली आ रही है। विवाह पर अनेकों दास दासियाँ दहेज में दी जाती थीं। परम्परा से चली आ रही इस मूल प्रथा की वृद्धि स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात ही सम्भव हुई। सामान्य जन जीवन में इस प्रथा का प्रचलन नहीं था।

प्राचीन काल में मनोरजन के साधन बहुत थे पर सबके सब देशज थे। त्यौहार पर मेले ही आनन्द में वृद्धि करते थे। आज मंदिरो में आरती के घटे उषा का उद्घोष नहीं करते। एक समय था जब सैंकडों धर्म प्राण स्त्रिया देव स्तुतिया गाती तालाब में स्नानार्थ जाती थीं और प्रात काल होने से पहले लौट आती थीं। शिक्षा सस्थाऐं जातियों और धर्म के अनुसार होती थी। शिक्षा का प्रसार उसकी उपयोगिता पर निर्भर करता था। कुल रक्त की शुद्धता और प्रतिष्ठा को असुरक्षा के वातावरण में सुरक्षित रखने के लिए सती प्रथा का प्रचलन राजपूतों में व्याप्त था। किन्तु 19 वीं सदी के आरम्भ में इस प्रथा की व्यापकता कम हो गई यह सामाजिक परिवर्तन का परिणाम था।

अध्याय ५ रहन सहन, खानपान व वेश भूषा

18वीं 19वीं सदी का शेखावाटी का जन-जीवन सामान्य था। इस काल में यहा सभी जातिया निवास करती थी। हिन्दू, मुसलमान, जैन यहा के मूल निवासी थे। नवाबी काल में यह भू-भाग पूर्णत आबाद नहीं था। गावों का भ्रमण करने से पता चलता है कि अधिकाशत गाव 200 वर्षो के आसपास बसे थे। यह 18वीं और 19वीं सदी का काल ही शेखावत काल था।

बसावट की दृष्टि से इस क्षेत्र के शहर, कस्बे, गाव, ढाणिया बसी हुई हैं राजपूत काल में बसे शेखावाटी के बारह शहर प्रसिद्ध थे। (12 शहरों में सीकर, फतेहपुर, रामगढ़, नवलगढ, झुन्झुनू, लक्ष्मणगढ, उदयपुर, खेतड़ी, बिसाऊ, चिडावा, मण्डावा और सूरजगढ़ थे।) आज यहा शहरों की सख्या अधिक है। शेखावतों के वशधरों ने छोटे-छोटे स्थानों को चुनकर शहर बसाये थे। सन् 1755 ई में मण्डावा, खेतड़ी, ग्यागियासर, बिसाऊ, और धोई में गढों का निर्माण कर वहा कस्बों को आबाद किया। (देवी सिह मण्डावा, शार्दूलसिह शेखावत पृ. 226-28) सन् 1776 में गुढा मे, 1779 में सूरजगढ में गढ़ बनवाये। इन शहरों के निर्माण तक ये स्थान छोटी-छोटी ढाणिया थी। शेखावाटी के इतिहासकार लिखते हैं—श्री केशरी सिह

जी ने सम्वत् 1809 में बिसालें के विशाल किले का निर्माण करवाया और 'बिसालें की ढाणी' को बिसाऊ नाम से आबाद किया। (उदयवीर शर्मा, बिसाऊ दर्शन पृष्ट 5) श्री सूरज मल जी ने सम्वत् 1834 में अड़ीचे में किला बनवाया और उसका सूरजगढ़ नाम रखा। सूरजगढ़ में अति सुन्दर प्रासादो का निर्माण करवाया। जो-आज तक उनकी कीर्ति प्रदर्शित कर रहे हैं। नगर की आबादी बढाने का हर सम्भव प्रयास किया। मडावा भी पहले मोंडू जाट की ढाणी थी। शेखावाटी के अनेक गाव इसी जाट जाति के पुरूषों के नाम पर बसे हुए हैं जैसे मण्डावा मोंडू जाट के नाम पर। कहने का तात्पर्य यह है कि शेखावाटी के शहरों की बसावट शेखावत काल में हुई।

(क) बसावट

बसावट की दृष्टि से शहरों को बाहरी आक्रमण से बचाने के हिसाब से बसाया गया था। अधिकतर शहर परकोटों के भीतर बसे हुए हैं। चारों दिशाओं में चार दरवाजे बनाये गए और एक मजबूत किला उनके भीतर बनवाया गया ताकि किसी भी आक्रमण के समय दरवाजें बन्द किये जा सकें। ऐसे शहरों में बिसाऊ, नवलगढ, खेतडी प्रमुख थे। वि. सं. 1859 में बिसाऊ पर आक्रमण का वर्णन करते हुए लिखा है—नगर के चारों द्वार जो वर्तमान पश्चिमी द्वार की भाँति लदे हुए थे बन्द कर लिए गये। युद्ध के समय ही तीनों द्वार तथा कुछ स्थानों पर परकोटा भी तोड़ दिया गया था। जिन शहरों में परकोटो नहीं था वहा किलों की सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा गया था। मजबूत द्वार, चौडी दीवारे, दीवारों के चारों ओर शहरी खाइयां या मजबूत बुर्जो का निर्माण किया गया। कहीं-कहीं ऊंचे स्थानों पर गढों का निर्माण किया गया। (डा उदयवीर शर्मा, बिसाऊ दर्शन पृष्ठ 5, रतन लाल मिश्र, शेखावाटी कला व समाज पृष्ठ-8)

अधिकाश शहरों की बसावट बडी सुन्दर थी। मुकुन्द गढ जयपुर के नक्शे के मुताबिक बसाया गया था। आज भी शहर की सीधी व चौडी सड़कें बसावट की यादगार है। सामान्यत शहरों में महाजनों और ब्राह्मणों को मध्य भाग में बसाया गया। मुख्य बाजार के आसपास इन्हीं जातियों के मकान आज भी हैं। अन्य जातियों को उनके काम के अनुसार बसाया गया। इस बसावट को हम जातीय आधार पर बसना कह सकते हैं। गढो के आसपास दरोगा, ख्वास, छींपा, सीलगर, कामगर आदि जातियों का बसना पाया जाता है। (हकीम, युसूफ, झुन्झुनवी, झुन्झुनू दर्शन भाग-3 पृष्ठ-250, यात्रा के दौरान सर्वेक्षण, अलसीसर, झुन्झुनु, खेतडी, गांजियासर, मुकन्दगढ, बबाई, बसई, शिमला, आदि।)

बसावट की दृष्टि से कस्बे दूसरे स्थान पर आते हैं। ये कस्बे अर्द्ध शहरी सस्कृति के द्योतक हैं। जिस बडे गाव में ब्राह्मण, बनियों की संख्या अधिक होती थी

वहीं एक कस्बा वन गया। उसमें छुट भइया जागीरदास भी हो सकता था, गुढा, जाखल मण्डेला, अलसीसर, मलसीसर, बडागाव, चूडी, अजीतगढ, गुहाला, छापोली, केड, बबाई, सुल्ताना हाथी सिह, पचेरी, डूडलोद, शिमला, बसई आते हैं यहां का रहन-सहन अर्द्धशहरी और अर्द्ध ग्रामीण रहा। (उदयवीर शर्मा, बिसाऊ दर्शन पृष्ट-5, रतन लाल मिश्र, शेखावाटी कला और समाज पृष्ठ 81)

शेखावाटी के गाव अपने ढग से बसे हुए हैं। प्रत्येक गाव की बसावट पारिवारिक आधार पर है। गाव के बीच में एक खुला चौक जिसे शेखावाटी भाषा में गुवाड कहा जाता है, छोडकर ये गाव के आर-पार जाने का चौडा रास्ता छोडकर अलग-अलग गुवाडियों (समूह) में बसे हुए थे। प्रत्येक गुवाडी के आगे एक सामूहिक पौली होती थी, और वहीं उस गुवाडी का प्रवेशद्वार था। गुवाडी चारों ओर से ऊची बाड से घिरी होती थी जिस पर से कोई भी चोर डाकू आसानी से नहीं निकल सकता था। प्रवेशद्वार (पौली) बन्द करने पर गुवाडी एक प्रकार से परकोटे की भांति सुरक्षित हो जाती थी। इसी गुवाडी के प्रागण में पुशओं के बाधने की जगह होती थी। वहीं सबके रहने के लिए कच्ची इटो की खुडिया बनी होती थीं ऊट और बैल गुवाडी के भीतर बाधे जाते थे। ताकि चोरी न हो सकें। स्त्रिया और पुरूषों के रहने के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित थे। बुजुर्ग लोग चोपाल या तिबारी में रहते थे। वहीं मेहमान ठहरते थे। ये वही स्थान है जहा जाडे की रातों में घटों ही राजस्थानी बातें कही और सुनी जाती थीं। गुवाडी के मध्य भाग में आग जलाकर देर रात सर्दी के मौसम में तपना इस क्षेत्र की विशेषता रही है। (डा उदयवीर शर्मा, शेखावाटी साहित्यक इतिहास पृष्ठ 206, श्री मोहन सिह अपनी कथवा—राजस्थानी कहानी सग्रह पृष्ठ 10)

ढाणियों में एकल परिवार निवास करते थे। एक से अधिक परिवार एक ही दादा की सन्तान होते थे। ऐसी ढाणिया गावों के पास होती थी। शेखावाटी में अरावली की श्रेणियों में ऐसी ढाणिया बसी हुई थीं। जिसमें गूजर जाति के लोग अधिक थे। गूजर जाति इस इलाके में अल्पसख्यक जाति थी।

(ख) पहनावा

शेखावाटी में पहनावा शहरों और गावों में भिन्न प्रकार का था। मुसलमान पुरूष हिन्दुओं की सी धोती, कुर्ता, और सिर पर साफा पहनते थे। परन्तु मुस्लिम स्त्रियाँ पजामा, सलवार, कुर्ती पहनती थी, सिर पर ओढना रखती थीं। देहात में मोटे हाथ से बुने और हाथ से सिले हुए कपडे पहनते थे। राजपूत बन्द गले की कमीज व गोल रगीन साफा और धोती पहनते थे। ब्राह्मण बनिये महीन कपडे पहनते थे सिर पर पगड़ी या काली टोपी के साथ कुर्ता पहनते थे। अंगरखी यहा का विशेष कमीज

होता था जो विरले ही व्यक्ति पहनते थे। शहरी औरते लहगा और ओढनी जिसे महाजनी पहनावा कहते हैं, पहनती थीं। देहातों में घाघरा और मोटे बधेज के ओढ़ने जिन्हें जारा पहनावा कहते हैं ओढती थीं। कब्जे के स्थान पर कमरी पहनती थीं। मजबूत जूतिया, चादी के गहने, तथा गले में चादी की हसली और हमेल तथा माथे पर चादी का बोरला यह साधारणत आम ग्रामीण स्त्री के गहने होते थे। शहरी औरतें पैरों में चादी के कड़े, नाक में नथ, माथे पर बोरला पहनती थी। देहाती औरतें साधारण किस्म की लाख का चूडा पहनती थीं। ब्राह्मण, बनिये और राजपूत घरों की स्त्रिया तारों या जडाव की चूड़े पहनती थीं। राजपूतों, राजपुरोहितों तथा पठानों में पर्दा प्रथा थी। कसीदा गावों की विशेष सजावट थी। सोपली, घाघरा धावला और इन्दुलियों पर कसीदा काढा जाता था।

(ग) खान-पान

शेखावाटी में एक फसल होने के ही प्रमाण मिलते हैं। उदयपुरवाटी, खेतड़ी, खण्डेला, अमरसर के इलाकों में बैलों से सिचाई होती थी, वहा गेहूँ, जौ तम्बाकू की पैदावार होती थी। साधारणत समस्त इलाके में लोगों का खान-पान साधारण था। बाजरा और मोठ यहा का प्रमुख खाद्यान्न थे। खिचडी देहातों में मुख्य भोजन था। शहरों में गेहूँ, जौ, बाजरा, मोठ खाये जाते थे।

(घ) शेखावत काल में प्रत्येक गाव में कुओं का होना पाया जाता है। जहां कुए नहीं थे वहा ठिकानेदारों ने कुओं का निर्माण कराया। 18 वीं शताब्दी में ऐसे अनेकों कुओं का निर्माण हुआ है। आज भी गावों में वही तरीका अपनाया जाता है जैसा कि पहले पशुओं को भी पानी खींचकर पिलाया जाता था।

(ड) आवागमन

सवारियों में ऊट प्रमुख सवारी थी। ठिकानों में घोडी और बहेलिया रखी जाती थीं। औरतें बैलों की बहेलियों में सवारी किया करती थीं। एकल सवार घोड़े पर, आम आदमी ऊट की सवारी किया करते थे।

शेखावत काल की सामाजिक व्यवस्था समय की दृष्टि से सुव्यवस्थित थी।

अध्याय ६ मेले व त्यौहार

शेखावाटी के सामाजिक जीवन में त्यौहारों तथा उत्सवों का महत्व पूर्ण स्थान रहा है। गणगौर, तीज, होली, रक्षाबधन, दीपावली, मकर सक्रांति, बसत पचमी, गणेश चतुर्थी आदि हिन्दू धर्म के अनुयायियों के लिये लोकप्रिय उत्सव रहे हैं वह

आनद और उल्लास के साथ इन्हें मनाते हैं। इनसे सामाजिक शक्ति में अभिवृद्धि होती है। स्त्रिया, पुरूष व बच्चों में अनेकानेक विचारधारायें प्रस्फुटित होती हैं और सास्कृतिक एकता को बल मिलता है।

तीज

शेखावाटी में मात्र यही तो ऋतु और पर्व है जो अपने प्राकृतिक सौन्दर्य और लोक गीतों से जीवन की एक रसता को दूर करता है। लोक सस्कृति की अनूठी झलक प्रस्तुत करता हुआ यह पर्व अनेक आनदानुभूतियों से जीवन सराबोर कर जाता है। शेखावाटी में जितने भी पर्व और उत्सव होते हैं वे सब तीजों के साथ ही शुरू होते हैं। और गणगौर के साथ समाप्त हो जाते हैं।

"तीज त्यौंहारा बावडी, ले डूबी गणगौर"

अत तीज इस रगीली धरती पर अन्य त्यौंहारों के आगमन की सूचक है। और राजस्थान लोक सस्कृति का पोषक माना जाता है।

शेखावाटी में तपती हुई धरती पर जब वर्षा की रिम झिम करती फुहारें पडती हैं तो उसकी सौंधी गध से सारा लोक मानस महक उठता है। आसमान में उमड घुमड कर आती काली काली घटायें, मोर पपीहे की पिऊ-पिऊ की पुकार और हरे भरे वृक्षों को देख कर मन मयूर नाच उठता है और जन जीवन एक नई उमंग से लहराने लगता है।

लोक सस्कृति का प्रतीक यह पर्व वास्तव में हमारे जन जीवन की अतरग झाकी प्रस्तुत करता है। बाग बगीचों तथा तालाबों और जोहडों पर पड़े झूलों और उन पर लहराती झूमती युवतियों को देख कर मन अपार उल्लास से भर जाता है। इतना ही नहीं इन झूलती युवतियों के मधुर से निकले लोक गीतों की स्वर लहरियों से न केवल नारी हृदय के कोमल भावों की अभिव्यक्ति होती है वरन् पारिवारिक सबधो, सामाजिक व्यवस्था और सुख दुख की अनुभूति का मार्मिक चित्रण होता है।

तीज के इन लोक गीतों में कहीं भाई के आने की प्रतीक्षा है तो कहीं पीहर जाने की उत्कट अभिलाषा, कहीं पति के परदेश से न आने पर वियोग में तडपती नारी के मन की व्यथा, कहीं समर्पित नारी की उलझन पूर्ण मनःस्थिति का चित्रण और कहीं नारी की आकाक्षा व विवशता। कहने का तात्पर्य यह है कि भाई, बहिन, ननंद, भोजाई पति पत्नी और अन्य पारिवारिक सबधों तथा सामाजिक व्यवस्थाओं की जितनी निश्छल उदात्त और भाव पूर्ण अभिव्यक्ति श्रावणी तीजों पर गाये जानेवाले लोक गीतों में मिलती है उतनी अन्यत्र दुर्लभ है।

श्रावण की तीज आते ही हाथों में मेंहदी रचाकर रग बिरगे लहरियें चूनरी और पारम्परिक वेषभूषा तथा आभूषणों से सजी धजी और अपनी सहेलियों से घिरी नव विवाहितायें झूला झूलने चल देती हैं और पुलकित मन अनायास ही गुनगुनाने लगता है

"आई आई सावणिया री तीज"

इस सुरम्य माहोल में तीज जन जीवन के लिये एक अतिरिक्त उमग और उल्लास लेकर आता है। तभी तो तीज के गीतों में सावन की मदमस्त अनुभूतियों और निखवर कर अभिव्यक्त हुई हैं। सावन की भर पूर आनद लेने की चाह है। नारी कठ से नि सृत इन लोक गीतों में उल्लसित मन के साथ पेंगे भरते झूले के गीत पावस ऋतु में एक अजीब सा रस घोल देते हैं। शेखावाटी का कोई अंचल ऐसा नहीं जो चामसे के लोक गीतों की इस धारा से अछूता हो।

तीज का त्याहार सौभाग्यवती स्त्रियों का है। इस त्यौहार के अवसर पर स्त्रियाँ सुन्दर वस्त्र पहनकर हिडोलों पर बैठ कर तीज के गीत गाती हैं। एक दिन पूर्व बालिकाओं का श्रृगार किया जाता है। आज सिधारा तडके तीज, छोरिया ने ले गयों गूगो पीर "ये उक्तियाँ" लडकी कहती हैं। हाथों तथा पैरों पर मेहन्दी माडती हैं। विवाहिता लडकियों के लिये ससुराल में सिधारा उनके माता-पिता भेजते हैं। तीज के त्यौहार पर लडकिया इस सुरम्य माहौल में उन्मुक्त होकर सखी सहेलियों के साथ तीज मनाने की इच्छा आकाक्षा रखती हैं। यहा लोक मान्यता है कि इस दिन शिव अपनी पत्नी पार्वती को पीहर से लाते हैं। पति पत्नी के सौभाग्य मिलन और अखड सुहाग के लिये श्रावण शुक्ला तृतीया का कन्यायें, नव विवाहितायें पार्वती की तीज माता के रूप में जेवर से पूजा करती हैं। गहनों और वस्त्रों से अलकृत तीज की प्रतिमा पार्वती का प्रतीक मानी जाती है।

मिट्टी से अमृत मथन का पर्व 'गणगौर'

गणगौर सुहाग पर्व है। इसकी जडें वैदिक युग से जुड़ी प्रतीत होती हैं। त्रेता युग में सीता गिरिजा पूजन का अनुष्ठान पुष्पवाटिका में राम को प्रथम बार देखने के बाद करती हैं। द्वापर में रूक्मणी श्रीकृष्ण को वर के रूप में प्राप्त करने के लिये अम्बिका पूजन करती हैं, राजस्थान में सामती युग में राजघराने में प्राप्य इस त्यौहार का चलन उसकी प्राचीनता को साक्षी है। शेखावाटी में यह त्यौहार अपनी आचलिक परपराओं के साथ मनाया जाता है। इस प्रदेश को सबसे बड़ा नारी आस्थाओं का सतरगा लोकपर्व कहा जाए तो जरा भी अतिशयोक्ति नही है।

कुआरी कन्याओं तथा सौभाग्यवती स्त्रियों की मनोभावनाओं को उद्वेलित

करता हुआ उनका चिर प्रतीक्षित सुनहले स्वप्नों का प्रतीक गणगौर का यह पर्व हर वर्ष चैत्र शुक्ला तृतीया को आता है।

गणगौर कुआरी कन्याओं के मनवांछित वर की कल्पना को साकार करने वाला पर्व है और विवाहित महिलाओं के सुहाग को अटल अमर बनाये रखने के लिये यह साधना का त्यौहार है। *गणगौर जिसका शाब्दिक अर्थ है—शिव-पार्वती।* कालान्तर में शिव का स्थान "ईसर" ने ले लिया जो अभी भी पूजित है। इस लोकप्रिय त्यौहार के पीछे अनेकों किवदंतियाँ प्रचलित हैं।

गणगौर मनाने के पीछे चाहे कुछ भी प्रेरणा रही हो यह त्यौहार महिलाओं के लिये सुहाग, श्रद्धा व आस्था का प्रतीक बना हुआ है। होली के बाद सौलह दिन तक यह त्यौहार अत्यत उत्साह, उमग एव प्रसन्नता के साथ मनाया जाता है। ऐसी धारणा है कि यदि कोई बालिका इस त्यौहार के दौरान रूठ जाती है तो उसका भावी पति भी उससे कदम कदम पर रूठाता रहने वाला मिलेगा। एक लोक गीत में यह भावना कितनी भावुकता से गूथी गई है —

जो तू पूजती रूसी टूसी तो
रूस्यो ढस्यो वर आयेसी राज।।
जो तू पूजती नीमारी डाली।
तो नीम निबोली वर आयेसी राज।।
जो तू पूजती धनिये की डाली।
तो धन-धन करतो वर आवेसी राज।।
जो तू पूजती दुरवारी डाली।
तो हरयो वर आयेसी राज।।

महिलाओं का यह पर्व वीरांगनाओं के प्रति परम्परागत संदेश लेकर वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी युग में टूटते सयुक्त परिवारों में भी एक आस्था की हिलोर जगाता है और पति पत्नी चकवा-चकवी के समान प्रेमनिष्ठा रखें यह संदेश देता है।

गणगौर माता से सुन्दर व मनोवांछित वर मागनेवाली बालिकायें गणगौर के रूप सौन्दर्य का मधुर स्वर में गुणगान करती हैं। उसका सिर नारियल के समान तो वेणी वासुकी नाग के समान भौंहे भ्रमर के समान तो ललाट चार अगुल चौड़ा, आँखें रत्न जड़ित हैं और नासिका तोते के समान।

इस स्तुति के बाद जब माता प्रसन्न होकर कहती है कि पूजो मुझे पुजास्यां बायां आसण कासणमांगो। सब बालिकायें अच्छे वर के साथ समृद्ध परिवार भी चाहती है—मांगा है महें अन्न धन लाछ और लछमी कान्ह कंवर सो वीरो मांगा राई सी।

भोजाई, ऊट चढ़ते बहनोई मागा घुड़े हाली बहनड़ मागा। गणगौर चूंकि सुहाग की प्रतीक हैं इसलिये पूजा करते समय सौभाग्यवती स्त्रिया काच की हरी चूड़िया, सिन्दूर नये वस्त्र, चदन धूप आदि अर्पित करती हैं। सिन्दूर से अपनी माग सवारती हैं।

गणगौर पर निकलनेवाली सवारिया हमारी परम्परागत सास्कृतिक जीवन की झाकी प्रतिबिम्बित करती हुई कला का एक उत्कृष्ट नमूना पेश करती है।

यह पर्व हमें मिट्टी से अमृत मथन करने का आह्वान करने आता है। आईये हम इससे पारिवारिक सुर व सुहाग की बेल सींचे, सुखद दाम्पत्य जीवन की कल्पना साकार करें, आईये घूमर खेलें, मग्न होकर ईसर का सत्सग मिलेगा तो टूटता बिखराव ओढता परिवार नई नई आस्था से गणगौर पर्व को सार्थक बनाइये।

हमारे जीवन में गणगौर का पर्व अपने लोक नृत्यों तथा कलात्मक भाव भंगिमामें, लोकप्रियता में आज भी अपने अस्तित्व को बनाये हुये हैं। इन नृत्य गीतों को देख कर हर दर्शक के कदम भी थिरकने लगते हैं—

म्हारी घूमर छै नखराली ये माय,
पिया प्यारी कामणगारी
घूमर रमबा म्है जास्या
गौरी घूमर रमबा म्है जास्या।
म्हाने पन्ने रग में रोमतियों रग दे माय
म्हाने सोने से टेवटियो घडा दे ये माय
म्हाने रमती ने लाडूडी दीज्यो ये माय।
म्हारी घूमर छ निखराली ये माय॥
1 खेलणें दो गिणगौर
भवर म्हाने खेलण दो गिणगौर
एजी म्हारी सहेलया जोवे बाट
भवर म्हाने पूजन दो गणगौर।
भल खेलों गिणगौर सुन्दर गौरी
भल खेलो गिणगौर
एजी थान देवे लाडला पूत
सुन्दर गौरी भल खेलों गिणगौर।
माथा नै मैमद लाय
भवर म्हारे माथा नै मैमद लाय।
ओजी म्हारी रखडी रतन जडाय
भवर म्हाने खेलण दो गणगौर

काना ने कुडल लाय
भवर म्हारे काना ने कुडल लाय
ओजी म्हारे नव लख हार घडाय
भवर म्हाने खेलण दो गिणगीर॥
बइयाने रे चुडलो लाय
भवर म्हारे बइयाने चुडलो लाय।
ओजी म्हारी मूदड़ी धैठ जडाय
भवर म्हाने खेलण दो गिणगीर॥
पगल्यां मे पायल ल्याव
भवर म्हारा पगलया ने पायल ल्याव।
म्हारी बिछिया लूब लगाये,
भंवर म्हाने खेलण दो गिणगीर॥

इस प्रकार यह गणगीर पर्व स्त्रियों के सुनहले और रंगीन स्वप्नों का पर्व है जो सदियों से परम्परागत ढग से इस अचल में महिलायें तथा कुआरी कन्यायें अमर सुहाग और सौभाग्य की अमिट साधना लिये हुये मनाती चली आ रही हैं।

3. आखा तीज

ग्रीष्म ऋतु में फसल काटने के पश्चात यह त्योहार आता है। इस समय कृषक लोग अपने कार्य से मुक्त होकर पारिवारिक उत्तरदायित्व को पूर्ण करने के लिये अवकाश पा जाते हैं। अत वे इस तिथि को अपने पुत्र पुत्रियों के विवाह करते हैं।

4. रक्षा बधन

श्रावण मास की पूर्णमासी को यह त्योहार सारे प्रदेश में बडे उल्लास पूर्ण वातावरण में मनाया जाता है। यह त्योहार भाई और बहिन के प्यार के प्रतीक के रूप में मनाया जाता है। बहिनें इस दिन भाई के माथे पर तिलक लगा कर राखी बाधती हैं, मिठाई खिलाती हैं। यह एक ऐसा त्योहार है जिसमें प्रत्येक धर्म और समुदाय के लोग किसी न किसी रूप में भाग लेते हैं जो हमारी सास्कृतिक विभिन्नता में एकता का प्रतीक है।

5. दशहरा

अश्विन शुक्ला दशमी को विजय दशमी का यह पर्व बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। यह पर्व मुख्यत क्षत्रियों का था लेकिन आज कल इसे सभी मनाते हैं। इस दिन दुर्गापूजा के साथ-साथ हथियारों की भी पूजा की जाती है। इस दिन राम ने

रावण का वध कर लका पर विजय श्री प्राप्त की थी। इसलिये इस दिन रावण का पुतला जलाया जाता है।

6. दीपावली

कार्तिक की अमावस्या के दिन दीपावली का यह त्यौहार मनाया जाता है। इस दिन मिट्टी के दीयों में तेल डालकर रोशनी की जाती है। हिन्दू धर्मावलम्बी इसे लक्ष्मी आगमन का प्रतीक मानते हैं। सेठ साहूकार के नये खाते आरम्भ होते हैं। जैन धर्मावलम्बी स्वामी महावीर के निर्वाण दिवस के रूप में इसे मनाते हैं। साधारण लोग इस पर्व को खुशी के साथ मिठाइयों का आदान प्रदान करते हुये उल्लास के साथ मनाते हैं।

7. मकर सक्राति

पौष या मघमास में 14 जनवरी को मकर सक्रांति का पर्व मनाया जाता है। इस दिन सफेद या काले तिल को गुड़ में मिला कर लड्डू बना कर खाये जाते हैं तथा दान पुण्य भी किया जाता है।

होली

होली भावात्मक साम्य भावना का इन्द्रधनुषी पर्व है जो एक तरफ तो हमारी मूर्खताओं की तरफ हमारी सामाजिक व्यक्तिगत औपचारिकता, ऊच नीच और मान मर्यादाओं की तरफ झाक रहा है। दूसरी तरफ हमारे अन्दर ही अन्दर ठहाके मार कर व्यग विनोद के ज्वार का असली प्रवाह भी हमें बता रहा है। इस प्रकार यह त्यौहार परस्पर सौहार्द्रय भाव बढ़ाता जन जीवन में नई आशा और उमग का सचार करता है।

फागुन मास में पूर्णिमा के दिन होली का दहन पर्व उस समय आता है जब किसानों की फसल खलिहानों में आ जाती है। यह एक राष्ट्रीय पर्व है जिसे छोटे-बड़े स्त्री-पुरूष, धनी-निर्धन बिना किसी भेद भाव के प्रसन्नता पूर्वक मनाते हैं। रात्रि का चग और ढोल की आवाज सऐ सम्पूर्ण वातावरण गूज उठता है। सायकाल या रात्रि को होलिका दहन किया जाता है एव भक्त प्रहलाद की जय बोली जाती है और गावों में सम्पूर्ण स्त्री पुरूष एक होकर इस समारोह में सम्मिलित होते हैं। स्त्रियां त्याहारों की गीत गाती हुई घरों से आती हैं और पूजन के बाद घर लौटती हैं। दूसरे दिन तक लोग रग गुलाल के साथ होली खेलते हैं तथा घरों में मिठाइयाँ तथा पकवान बनाये जाते हैं।

8. बसंत पंचमी

माघ मास की शुक्ल पक्ष की पंचमी के दिन इस उत्सव को मनाया जाता है। सभी लोग इस दिन पीले वस्त्र धारण करते है। प्राकृतिक दृष्टि से इस पर्व का महत्व पूर्ण स्थान है।

9. गणेश चतुर्थी

गणेश चतुर्थी का त्यौहार भाद्र पद शुक्ला चौथ के दिन मनाया जाता है। इस दिन गणेश देवता की प्रतिमा पर मोदक चढाये जाते हैं।

मुसलमानों के उत्सव

1. ईदुल्जुआ

यह मुसलमानों का महान पर्व हैं। ईदुहजुहा का अर्थ है "कुर्बानी" ऐसी मान्यता है कि अरबों के धार्मिक गुरु अब्राहम को स्वप्न में कहा गया कि वह अपनी बहुमूल्य वस्तु खुदा को समर्पित कर दे। इसलिये उन्होंने अपने पुत्र इस्माइल की कुर्बानी कर दी। उसी के प्रतीक स्वरूप बकरे की बलि दी जाती है तथा मास बनाया जाता है तथा पडौसियों में वितरित किया जाता है।

2. ईदुलफित्तर

इसे रमजान की ईद भी कहते हैं। रमजान के महीने में मुसलमान (रोजा) व्रत रखते हैं। इस महीने में चांद दिखने के दूसरे दिन ईद मनाई जाती है। इस दिन मुसलमान खैरात बाटते हैं और सामूहिक नमाज पढते हैं।

3. शब्बेबरात

शब्बेबरात का अर्थ है मुक्ति की रात्रि। मुसलमान लोग ऐसा मानते हैं कि इस रात्रि में मनुष्यों के कर्मों की जाच पड़ताल कर उनके कर्म के अनुसार भाग्य का निर्धारण होता है। अत इस दिन सब अपने किये पापों के लिये खुदा से मुआफी मागते हैं।

4. बारा वफात

इस त्यौहार को ईद ए मिलाद भी कहते हैं। रबीउलअव्वल महीने की 12 तारीख को यह पर्व पड़ता है। मोहम्मद साहब के जन्म और मृत्यु की स्मृति में यह पर्व मनाया जाता है।

5. मुहर्रम

यह मुसलमानों का शोक सन्तप्त त्यौहार है। यह त्यौहार मुहम्मद साहब के नाती इमामहुसैन के बलिदान के उपलक्ष्य में 10 दिन उपवास रख कर मनाया जाता है। इस त्याहार पर हुसैन के प्रतीक ताजिये बनाते हैं तथा उन्हें जुलूस के रूप में प्रदर्शित कर दसवें दिन कब्रिस्तान तालाब या नदी में दफना देते हैं।

जैनियों के पर्व

1. अष्टान्हिका पर्व

यह पर्व हर चौथे माह आषाढ, कार्तिक, एव फाल्गुन के शुक्ल पक्ष में अष्टमी से आरभ होकर पूर्णमासी तक 8 दिन तक मनाया जाता है। इसमें आठवें नन्दीश्वर द्वीप में स्थित बावन जिन चैन्यालयों की पूजा होती है तथा जैनी लोग व्रत उपवास आदि करते हैं।

2. सुगन्ध दशमी

यह पर्व भाद्रपद शुक्ला दशमी को मनाया जाता है। इस दिन सभी जैनी अपने देवालयों में जाकर धूप खेते हैं और यथा शक्ति उपवास करते हैं।

3. दश लक्षण

दिगम्बर जैन पर्व भाद्रपद शुक्ला पचमी से चतुर्दशी तक श्वेताम्बरों में भाद्रपद कृष्णा एकादशी से शुरू पक्ष की पचमी तक दस दिन को दश लक्षण पर्व के रूप में मनाते हैं। सभी जैनी इन दिनों यथाशक्ति दान, तप, पूजा पाठ करते हैं।

4. क्षमावाणी पर्व

यह पर्व आश्विन शुक्ल एकम को मनाया जाता है। इस दिन भाद्र पद मास में होने वाले जैनियों के सभी पर्व पूरे होते हैं। सभी जैनी एक जगह इक्ट्ठे होकर एक दूसरे से अपने दोषों की क्षमा मागते हैं, एव दिल से क्षमा करते हैं।

5. वीर जयन्ती

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर स्वामी का जन्म हुआ था। उनकी स्मृति में यह पर्व बडे उल्लास के साथ मनाया जाता है।

6. अक्षय तृतीया

वैशाख मास की शुक्ल पक्ष की तृतीया को यह पर्व मनाया जाता है। इस दिन

जैनियों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ स्वामी ने 6 माह उपवास के बाद आहार लिया था तभी से इस दिन की महत्ता है तथा इसे पर्व के रूप में मनाते हैं।

इस प्रकार त्याहारों का सास्कृतिक समन्वय में विशेष योगदान है। इन अवसरों पर हिन्दू , जैन और मुसलमान एक साथ एकत्रित होते हैं जिनके परिणाम स्वरूप भ्रातृत्व तथा आपसी सहयोग एव सद्भावना की पारस्परिक भावना जागृत होती है। यह त्याहार तथा उत्सव हमारे धर्म व सस्कृति के न केवल स्वस्थ प्रतीक हैं अपितु रक्षक भी हैं। लोग कहते आये हैं। विभिन्न धर्म और सम्प्रदायों में होते हुए भी इनमें भावात्मक एकता

परिलक्षित होती है। यहा की सस्कृति में त्याग, बलिदान, धर्म, सहिष्णुता कष्ट सहने की क्षमता आदि असाधारण बातें हैं। यहा के धार्मिक मेले, व्रत, धार्मिक मान्यतायें, लोक विश्वास लोक जीवन निर्वाह, लोक मान्यतायें, देव पूजा, उत्सव व पर्व और तीर्थ स्थल आदि इस इलाके के सास्कृतिक स्वरूप का दर्शन कराते है। शेखावाटी की जनता धर्मपरायण रही है। अलग-अलग धर्म सम्प्रदाय और जातियो में बँटे रहने पर भी यहा के लोग एक होकर रहे हैं। धर्म के नाम पर इस क्षेत्र में कभी लडाई नहीं हुई है।

शेखावाटी के धार्मिक स्थलों में लोहार्गल, जीण माता, हर्ष नाथ, श्यामजी खाटू, गणेश्वर, ढोंसी, सालासर का हनुमान, रैवासा के जैन मन्दिर, नरहड के पीर, झुझुनू के कमरुद्दीन शाह की दरगाह, झुझुनू की राणी सतीमन्दिर, जैन मन्दिर, शोभावति, त्रिवेणी, कदमा आदि हैं।

इन धार्मिक स्थलों पर वर्ष भर भारी सख्या में लोग आते हैं भजन कीर्तन, रात्रि जागरण में प्रत्येक समुदाय के लोग भाग लेते हैं। सस्कार युक्त होने के कारण स्त्रिया इनकी जात बोलती हैं तथा इन तीर्थों की यात्रायें करती हैं। इस प्रकार शेखावाटी संस्कृति और सभ्यता दोनों में अपनी विशिष्टता रखती है।

शेखावाटी के मेले

आधुनिक रहन-सहन की मजबूरियों ने हमारे सामाजिक जीवन में बदलाव ला दिये हैं, फिर भी परम्परागत मेलों और त्यौहारों, मध्य युगीन योद्धाओं और सतों द्वारा पवित्र किये गये, न अपने सामाजिक महत्व और व्यापारिक मूल्य नहीं खोये हैं। इनके अलावा पर्यटकों को आकर्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, क्योंकि मेले भारत में ग्रामीण लोगों के जीवन में आनन्दमय अवसर हैं। सामुदायिक नाच, धार्मिक प्रवचन, शक्ति और कौशल के करतबों का प्रदर्शन मिठाई की दुकानें आदि। ग्रामीण लोगों, विदेशी सैलानियों को आकर्षित करते हैं। मेले पिछडे लोगों,

निरक्षर आदिवासियों और अन्य श्रेणियों से अपील करने और सूचित करने के लिए, शिक्षित करने के लिए सही स्थान होने के अलावा आमदनी के भी स्रोत हैं।

रानी सती मेला

यह धार्मिक मेला झुंझुनू कस्बे में प्रतिवर्ष भाद्रपद वदी 15 को भरता है। जहाँ रानी सती का भव्य देवालय है। संगमरमर के पत्थर से बना रानी सती का देवालय भारत के विशाल देवालयों में से एक है जो अपनी कहानी पिछले 700 वर्षों से कहता आ रहा है। इस विशाल मेले में भारत के कोने-कोने से-लाखों की सख्या में भक्त लोग आते हैं। उस प्रसिद्ध मेले में धनाढ्य व्यक्तियों का विशेषकर वैश्य लोगों का आगमन अधिक होता है। प्रतिवर्ष लाखों की सख्या में स्त्री-पुरुष दर्शनार्थ यहा आते हैं। यह एक सार्वजनिक मेला है जिसे सभी मिलकर मानते है।

नरहर पीर जी का मेला

यह मेला चिडावा पिलानी सडके पर ग्राम नरहर में भाद्रपद बदी 4 को प्रतिवर्ष लगता है। यह एक धार्मिक स्थान है। इसकी पीर शक्कर शाह दरगाह के लिये प्रसिद्धि है। चूँकि उत्सव में भी समुदाय समिलित होते हैं। यह मेला सामुदायिक मेल-मिलाप का एक प्रतीक होना कहा जा सकता है। शेखावाटी का यह एक प्रमुख मेला है। यहा जोड चौहान का राज्य था।

बाबा रामदेव जी का मेला

शेखावाटी जनपद में झुझुनू से 18 मील दूर नवलगढ कस्बे में जो अनेक उद्योग-पतियों की जन्म स्थली एव जहा रेत के ऊचे-ऊचे टीलों और वैभव की प्रतीक विशाल हवेलियों और आधुनिक स्थलों से युक्त बहु आयामी गति विधियों का प्रमुख स्थल है और उसे रामदेव जी जैसे देवता का श्रावण मास को रसीली फुहारों के बाद जब भादवा सुदी 10 आती है तो दूर-दूर तक फैली इस मरुधरा भूमि पर मेले में हजारों स्त्री-पुरूषों के कारण मनोहारी दृश्य उपस्थित हो जाते हैं।

सुरीलेकठ से गाती भोपी और उसके गाने के तोड पर नाचता भोपा मेले में आये लोगों का मन मोह लेता है तो दूसरी तरफ मेले में भक्तों की इतनी भीड़ होती हैं कि पैर रखने को भी जगह नहीं होती, कहीं बोल बाबा रामदेव की जय का स्वर घोष गूजता है। तो कहीं खम्भा-खम्मा हो धणो रूपोचा रायणी गीत को स्वर लहरी वातावरण में गूजती हैं। वास्तव में यह मेला न केवल अपने आप में वरन् राष्ट्रीय एकता साम्प्रदायिक सद्भाव और पारस्परिक भाई चारे का भी एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। क्यों कि बाबा रामदेव ने स्वय पिछडी जाति व गरीबों का समर्थन, सत्य की स्थापना, धर्म महजबों से हटकर मानवता का संदेश दिया है। यही

कारण है कि इस मेले में चाहे बूढे हो या बच्चे, शोषित एव पिछडी जाति के हों या सवर्ण जाति के सबके सब बिना किसी भेद भाव के बाबा के दरबार में इक्ट्ठे होते हैं और श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

तीन दिन तक चलने वाले इस मेले में हजारों की सख्या में दर्शनार्थी पैदल चल कर आते हैं। नीले घोडे के सवार रामदेव जी के इस मेले के अवसर पर स्थानीय सूर्य मण्डल एव नवयुवक मडल द्वारा विभिन्न प्रतियेगिताए भी रखी जाती हैं। इस लखी मेले में ग्रामीण बडी सख्या में नाचते गाते आते हैं। धर्म निरपेक्ष राज्य का सही स्वरूप इस मेले में देखने को मिलता हैं। दर्शनार्थियों एव यात्रियों के जात जडूले के सस्कार भी यहा पूरे किये जाते हैं।

एक बडे खुले चौक में लगी दुकानों की सजावट और भारी चहल पहल के बीच हर और उल्लासपूर्ण वातावरण को देख कर मन मयूर नाच उठता हैं।

मेला स्थन पर ही रामदेव जी का मन्दिर बना हुआ है, कहते हैं कि यह मन्दिर नवलसिंह जी ने अपनी रानी जो मारवाड की थी और उनकी वहा के लोक देवता रामदेव जी में आस्था थी के कहने पर बनवाया था।

मेले में पुरूष तवूरा हारमोनियम खडतालमजीरा चिमटा बजाते हुए रामदेव जी का गुण गान करते हैं। इस दृश्य को देखकर सभी लोग भाव विभोर हो उठते हैं। पुरूषों की भाँति बड़ी संख्या में स्त्रिया भी उसी मेने में आती हैं। रंग बिरगी छींट के घाघरे गोटा किनारी से सजा लूगडा तथा पारम्परिक आभूषणों से सजी धजी महिलाए जब अपने सुरीले कंठ से लोक गीत गाती हैं तो मागलिक वातावरण छा जाता है।

इतनी भीड में भी मेले की व्यवस्था देखते ही बनती हैं।

खाटू के श्याम जी का मेला

सीकर जिले में रींगस कस्बे से 16 किलो मीटर दूरस्थ सडक मार्ग पर श्यामजी गाव में श्याम बाबा का यह पवित्र स्थान है। इस अध्यात्मिक स्थल पर दर्शनार्थियों का ताता लगा रहता है, भक्त जनों का प्रतिदिन एक मेला सा लगा रहता है, सुदूर क्षेत्रों से भक्तगन बाबा से मन वंछित फल प्राप्त करने की इच्छा लिये आते हैं। और श्याम बाबा के दरबार से कोई निराश नही लौटता।

श्याम बाबा का यह स्थान एक तीर्थ बन गया है जो प्राचीनता का प्रतीक एक गांव है। जहां प्राचीन छतरियां एव छोटा सा बाजार और श्याम हरियाणी धर्मशाला, गढ़वाली धर्मशाला पंचायती धर्मशाला दर्शनार्थियों के ठहरने के लिए शानदार आवास स्थल है। होली से पहले एकादशी एवं द्वादशी को गाव श्याम जी की खाटू में एक

विशाल मेला लगता है जिसमें लाखों दर्शनार्थी भाग लेते है। यों तो 50-60 व्यक्ति तो यंहा प्रति दिन आते रहते हैं। इस मेले में श्याम जी का शीश ही पूजित है। मुखार विन्द दाढी युक्त है। शेष शरीर को फूलों से आच्छादित कर दिया जाता है। भक्त गण मन्दिर तक कनक दण्डवत करते हुए जाते है। हाथों में ध्वजा लेकर जाने की पुरानी परम्परा है। यहा पर मनोती मागी जाती है। मनोती पूर्ण होने पर मुण्डन कराने की भी परम्परा देखने को मिलती है। मेले की छटा, विभिन्न सास्कृतिक कार्यक्रम लोगों की वेशभूषा देखकर खाने पीने के सामानों की दुकानें, करतब दिखाते लोगों के कारण देखते ही बनती हैं। भागवत पुराण के अनुसार यह खाटू नामक स्थान कभी खटाक नगरी थी यहा के राजा को स्वप्न में श्यामजी ने दर्शन देकर कहा कि तुम ग्राम में मेरा मन्दिर बनाकर उस गाय के मालिक से मेरी प्रतिमा लेकर स्थापित करो। तुम यशभागी बनोंगे। राजा ने ऐसा ही किया तब से यहा मन्दिर में श्याम बाबा की प्रतिमा स्थापित है। कहते हैं यह मन्दिर वि स 1777 में निर्मित हुआ था।

लोहा गढ का मेला

यह मेला उदयपुर वाटी तहसील में लोहागढ ग्राम में भाद्रपद बादी 15 को प्रतिवर्ष आयोजित होता है। इस स्थान पर हजारों लोग एकत्र होते हैं। इस तीर्थ की यह विशेषता रही है कि यहां कभी भी चोरी, दंगा या लडाई झगड़ा नहीं हुआ। यह इस इलाके की धार्मिक आस्था का प्रमाण है। किवन्दती के अनुसार लोहार्गल में पाण्डवों के लौहे के अस्त्र शस्त्र गल गये थे, तभी इसका नाम लोहर्गल पडा। लोग यहा पवित्र जल में डुबकी लगाकर प्रसन्न होते हैं।

6 शीतला माता का मेला झुझूनू कस्बे में चैत बदी 8 को प्रतिवर्ष लगता है। यह भी इस क्षेत्र का प्रसिद्ध मेला है।

रामेश्वरदास जी का मेला

खेतडी तहसील के ग्राम बसई में प्रत्येक माह की अमावस्या को यह मेला लगता है। रामेश्वर दास जी का मन्दिर चित्रों के कारण जिन पर पूरी रामायण खुदी हुई है दर्शन करने लायक है। वस्तुत प्राकृतिक दृश्यों के कारण यह स्थान मनोहारी बन गया है। मेले में हजारों भक्त जन आते हैं। लोगों में बाबा के प्रति गहरी आस्था है।

इसके अलावा खेतडी तहसील में ताजीजा तथा गाडराटा में क्रमश देही भाई तातीजा और सुन्दर दासजी ढोसी कुण्ड का मेला, बाधेश्वर का मेला, किरोड़ी के प्रसिद्ध सालासर प्रसिद्ध हनुमान जी के मेले हैं। इसी प्रकार शेखसर, सौलाना, लादूसर, मैहाडा जादूवास, भडूदा आदि में गोगा जी के मेले लगते हैं। गोगाजी सापो

का देवता माना जाता है। शेखावाटी में कहावत है कि मा केदेह।व्याह।दय; सालण के मेले पर आई। रैस्यूं आमतौर पर ये मेले समाज की आर्थिक पृष्ठभूमि में लगते है। मेलों का आयोजन रस्म के तौर पर तथा परम्परागत रूप से होता है। मेले समाज के लिये खाने पीने और खुशियाँ मनाने के अवसर उपलब्ध कराते हैं। इन अवसरों पर सामाजिक वधन ढीले पड जाते है तथा स्त्री पुरुषों को सामान्य अधिकार, आजादी मिल जाती है।

अध्याय ७ भाषा और साहित्य

भारतीय आर्य भाषा के सबसे प्राचीन रूप को सस्कृत कहते है। यह वेदों की भाषा है। वेदों के सब भाग एक ही काल में नहीं रचे गये। उनके विविध भागों में भाषा सबधी अन्तर दिखाई पडता है। वैदिक से सस्कृत का विकास हुआ। पाणिनी ने उसका व्याकरण लिख कर उसे अमर कर दिया। वैदिक से ही प्राकृत का विकास हुआ। मूल में सस्कृत और प्राकृत एक ही भाषा थे। धीरे धीरे सामान्य जनता की बोल चाल की भाषा शिष्ट जनों की भाषा से अलग पडती गई। शिष्ट जनों की भाषा सस्कृत कही जाने लगी। और सामान्य जनता की भाषा प्राकृत। प्राकृत से अपभ्रश का विकास हुआ। प्राकृत और अपभ्रश में प्रमुख अन्तर व्याकरण का है। प्राकृत की भाँति अपभ्रश में भी साधारण प्रान्तीय भाग रहे होंगे परन्तु इतना अन्तर नहीं था कि एक प्रान्त के लाग दूसरे की भाषा नहीं समझ सके। साहित्य में पश्चिमी अपभ्रश की प्रधानता रही।

वैदिक सस्कृत का परिवर्तित रूप पाली और लौकिक सस्कृत में प्रकट हुआ। पाली से शौर सेनी प्राकृत मागधी, प्राकृत महाराष्ट्र प्राकृत निकली। गुर्जरी अपभ्रश और शौर सैनी अपभ्रश का जन्म 33 शौर सैनी प्राकृत से हुआ था। गुर्जरी अपभ्रश से आगे चल कर प्राचीन राजस्थानी भाषा का जन्म हुआ। 1150 से 1500 वि तक गुजराती और राजस्थानी एक ही भाषा थी। विक्रम की पन्द्रहवीं शती से दोनों अलग-अलग हुई। इस प्रकार वर्तमान राजस्थानी भाषा का अस्तित्व 1500 के आसपास हुआ। राजस्थानी भाषा की मुख्य बोलियाँ मानी जाती है, वे ये हैं मारवाडी, मालवी, उत्तर पूर्वी राजस्थानी, पश्चिमी राजस्थान, भीली राजस्थानी आदि। शेखावाटी प्रदेश में बोली जानेवाली बोली शेखावाटी कहलाती है। रेवेरेन्ड जी मैकनिस्टर ने इसका उल्लेख सन् १८९८ में।

जार्ज ग्रियर्सन ने अपनी भाषा सर्वेक्षण में इस प्रदेश में बोली जानेवाली बोली को शेखावाटी नाम से ही अभिहित किया है। शेखावाटी बोली का क्षेत्र राजनैतिक सीमाओं को लांघ कर काफी विस्तृत हो जाता है। उत्तर में झुंझुनू, दक्षिण में उदयपुरवाटी और सीकर के आगे तक का भाग, पश्चिम मे नागौर से लगते हुये

भू-भाग तक तथा चूरू जिले के रतनगढ नगर तक इस बोली का क्षेत्र माना जा सकता है। शेखावाटी की बोली की अपनी व्यक्ति कला उसे आसपास की अन्य बोलियों से अलग करती है। पश्चिमोत्तर की मारवाड़ी, बीकानेरी उत्तर की कागडी पूर्वोतर की बागरू, पूर्व की अहीरवाटी की भाषा मेवाती, दक्षिण पूर्व की तोरावाटी बोली तथा जयपुर की ढूढाडी बोलियाँ शेखावाटी की बोली से भिन्न मानी जाती है। इन बोलियों और शेखावाटी की बोली में कई विभेदक तत्व हैं।

शेखावाटी की बोली के कुछ मूल तत्व हैं। यह आकारान्त बहुल बोली है जिसकी कुछ ध्वनिया हिन्दी भाषा में भी नहीं मिलती हैं। इसके कुछ प्रत्यय एव उपसर्ग अपने हैं। अपनत्व के द्योतक इनके अपने प्रत्यय ड, ल, टा आदि हैं। कुछ वर्णों के उच्चारण में भी विभिन्नता है। अपनी इन्हीं तथा कुछ अन्य भाषा वैज्ञानिक विशेषताओं के कारण शेखावाटी बोली की वैयक्तिकता भाषा विज्ञान के आधार पर प्रस्थापित हुई है। बोली अपनी साहित्यिक समृद्धि के बल पर आगे चल कर भाषा बन जाती है जैसे ब्रजबोली से ब्रजभाषा बनी।

साहित्य

शेखावाटी की भूमि अपनी प्राकृतिक सुषमा, शौर्य और धार्मिक जीवन के कारण प्राचीन काल से विख्यात रही है। यहा प्राकृतिक विविधता के कारण बडी सेनाओं का आगमन अधिक नहीं हुआ और लोग अपनी कला, साहित्य और सस्कृति की धरोहर संजोते रहे। इन राजनैतिक और भौगोलिक परिस्थितियों के कारण एक विशाल तथा प्रभावी साहित्य का सृजन इस प्रदेश में होता रहा।

यहा का अधिकतर साहित्य या तो चारणों द्वारा या फिर साधु सन्यासियों द्वारा विरचित हुआ। अन्य लोगों का भी इसमें यत्किंचित योगदान है। कायमखानी नवाबों में से भी अनेक नवाब साहित्य प्रेमी हुये जिनकी रचनायें भी साहित्य की निधि हैं।

केसरीसिह समर नामक वीर रस काव्य के प्रणे हरिनाम उपाध्याय का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने युद्ध का आखों देखा हाल काव्यात्मक रूप से स 1754 में प्रस्तुत किया। वीर रस की यह कृति भाषा भाव छन्द योजना रस और लकार की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी कोटि में कायमखानी नवाबों के घराने में जान कवि हुये जिनकी 80 रचनायें है। जिनमें कुछ प्रकाशित हो चुकी हैं।

शेखावाटी में दादूपन्थी साधुओं के कई सस्थान थे जिसमें कई गुणज्ञ एवं विद्वान साधू हुये हैं। दादूपन्थ के शिरोमणि सन्त सुन्दर दास वर्षों तक फतेहपुर में रहे। उन्होंने अनेकों ग्रथों की रचना की। जिनका सग्रह सुन्दर ग्रथावली के नाम से

प्रकाशन हो चुका है। इस पथ में ओर भी कवि हुये हैं। इनमें सन्तदास भीरवजन चतुरथ आदि प्रसिद्ध हैं। भीरवजन की भीरव बावनी और नाममाला सबल रचनायें। रैवासा मंदिर के महन्त समानन्दी वैष्णव थे। इस गछी में अनेकों सुकवि एव साहित्य सेवी हुये हैं।

शेखावाटी क्षेत्र में चारणों द्वारा साहित्य सृजन में महत्वपूर्ण योगदान किया गया है जो पूरी तरह प्रकाश में नहीं आया है। चारण कवियों में कृपाराम जी जगमगाते रत्न हैं। राजिये के सोरठे प्रसिद्ध हैं। किसनदास विडिया ने बिहारी सतसई का धनाक्षरी में रूपान्तर किया। सुखदान कवियों ने पाबू प्रकाश, गोपाल कविया ने लावा रासो तथा रामदयाल कविया ने कीरत, कीर्ति प्रकाश का प्रणयन किया है।

इतिहास के क्षेत्र में भी स्मरणीय योगदान हुआ, रामनाथ रत्नू ने इतिहास राजस्थान एव रामचन्द शास्त्री सिघाना निवासी ने शेखावाटी प्रकाश नामक ग्रथ रचे हैं। इनके अलावा हजारों वर्षों से चले आ रहे साहित्य की सृष्टि की यह एक झलक मात्र ही है। इससे इस क्षेत्र की कलाप्रियता की बात सामने आती है। कला और साहित्य के प्रति इस भूमि में सदैव ही ममत्व रहा है जिसके फलस्वरूप विशाल साहित्य का सृजन हुआ। शेखावाटी का साहित्य और साहित्यकार निम्न प्रकार हैं।

1. कृपारामजी विड़िया :

शेखावाटी के मूर्धन्य कवियों में से थे। ये उत्कृष्ट कोटि के कवि थे। भाषा एव भावों पर इनका असाधारण अधिकार था। वे मूलत श्रृगारी कवि थे। इनके रचे हुये ग्रथों में सोरठिये, कवित, चालेराय का षट्ऋतु वर्णन, गीत कवित, लक्ष्मण प्रकाश चालकराम नाटक प्रमुख हैं।

2. कवि भैरू :

कवि भैरू जाति के लुहार थे। अपनी कवित्व शक्ति के बल पर खेतड़ी राज घराने में सम्मान पाया। आपकी कवितायें सरस, सुन्दर और ओजपूर्ण हैं। छह ऋतु विलास एव वपु विलास आपकी सुन्दर रचनायें है। एक उपमा देखिये —

> "घटानु बतावे तू न पावे भेद भोरी ये तो
> आवें गजराज बाघराज शेखावत के।।"

3. रामनाथ कविया .

प्रसिद्ध कवि और विद्वान थे। ये सीकर के दक्षिण में चौंखा के रहने वाले थे। इनकी "द्रोपदी-विनय" नाम कृति साहित्यिक दृष्टि से बडी सम्पन्न है।

4. गोपालदास कविया :

चौखा के पास जिला सीकर आपका जन्म स्थान है। आपकी शिखर वशोत्पति एव लावा रासा प्रसिद्ध कृति हैं। सवत 1542 में उनका निधन हो गया।

5. अर्जुनदास जी केड़िया :

आपका जन्म महनसर में स. 1914 में हुआ था। आप अच्छे कवि और विद्वान थे। भारती भूषण आपका अलकार विषय का उत्कृष्ट ग्रथ है। आपका स्वर्गवास सवत 1988 में हुआ।

6. रामदयाल जी नेवटिया :

आपका जन्म 1882 में मडावा में हुआ था। आप उच्च कोटि के विद्वान थे। आप हिन्दी और सस्कृत दोनों भाषाओं में कविता करते थे। आपकी रचनाओं में प्रेमाकुर, बलभद्र विजय और लक्ष्मण मगला प्रसिद्ध हैं।

7. कन्हैयालाल पोद्दार :

आपका जन्म 1928 में रामगढ़ में हुआ था। आप अच्छे विद्वान थे। आपने लबे समय तक साहित्य सेवा की थी। गगालहरी, मेघदूत विमर्श, पचगीत आदि अनुवादित ग्रथ हैं। आपकी प्रसिद्ध रचनायें अलकार प्रकाश, काव्य कल्पद्रुम आदि।

8. देवीदास रावत :

देवीदास रावत गोत्रीय महाजन थे। आप शेखावत रायमल के दीवान थे। इनके नीति सबधी कवित मिलते हैं समय 17वीं शती विक्रमी का मध्यकाल है।

"कुमति से जसजात गरब ते लक्छी जात,
कुनारी से कुल जात जोग जात सगते।
मूख ते मजाद जात, सोचत शरीर जात,
लडाये से पुण्य जात शीलता कुसगते।"
कपट ते धर्म जात लोभ से बडाई जात,
मांगिबेते मान जात, पाय जागे गग ते।
नीति बिन राज जात, क्रोध से तपस्या जात,
देवीदास जात राजपूती मुरे जग तें।

9. हरिनाम उपाध्याय

पारीक कुल में खडेला में जन्मे थे ये शैडिल्य गोत्री ब्राह्मण थे। खडेला राजाओं के कुल गुरु थे। खडेला राजा केहरसिह के समय (1740-1754) तक विद्यमान थे।

1754 की हरिपुरा की लडाई में स्वय उपस्थित थे। इन्होंने प्रत्यक्षदर्शी के रूप में केसरी सिह समर की रचना की थी जो एक उत्कृष्ट रचना है। इस रचना का न सिर्फ शेखावाटी में बल्कि राजस्थान के वीर काव्यों में इस कृति का स्थान बडा उच्च है।

10. सुन्दरदास जी :

आपका जन्म स 1653 में हुआ था। आप निर्गुण धारा में सबसे विद्वान . शास्त्रज्ञ सन्त थे। आपने 42 ग्रथों की रचना की थी।

11. चन्दावन दास :

आप गौड ब्राह्मण थे। इनके पूर्वज बाहर से फतेहपुर में आकर बस गये थे। आप विद्वान और सुकवि थे। इन्होंने षटभूषण और वृन्द विलास ग्रथ बनाये थे। रचना काल 19 सदी विक्रमी है।

12. रामदयाल कविया का जन्म सीकर ठाने में फतेहसिह की ढाणी में हुआ था। इन्होंने रायमल जससरोज की रचना की। यह कलिकाओं का विशाल ग्रथ है।

13 महाकवि जान नवाब अलफखा के पुत्र थे। इनका नाम न्यामत खा था। जान कवि उपनाम था। आपने 50 वर्ष तक साहित्य सृजन किया और अनेकों रत्नों से हिन्दी साहित्य का भडार भरा। इनकी भाषा और शैली सुन्दर थी। अलकार रस, काव्य शास्त्र बधक एव इतिहास की रचनाओं के अतिरिक्त आख्यानक प्रेम काव्यों में कवि की विशेष रूचि थी। इनके 77 ग्रथ प्रकाश में आ चुके हैं। रस कोष बुद्धिसागर कायम रासा, ज्ञानदीप रस मजरी कनकावती, मधुकर मालती आदि प्रसिद्ध रचनायें हैं।

आधुनिक युग के राजस्थानी साहित्यकार

1. मुशी देवी प्रसाद जी :

आपका जन्म 1904 में हुआ था। वे गौड कायस्थ थे। आपने हिन्दी को स्थान दिलाने में बडा परिश्रम किया था। मुसलमानी काल के मुशी जी प्रामाणिक इतिहासज्ञ समझे जाते थे। बाबर नामा, हुमायू नामा, अकबर नामा, खानदाना नामा, जहागीर नामा, शाहजहा नामा, औरगजेब नामा, शेरशाह जीवनी उदयपुर के महाराणाओं की जीवनी जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिह जी की जीवनी और मारवाड की जातियों का इतिहास तथा कविरत्न माला आदि उतमोत्तम पुस्तकें लिख कर हिन्दी की महान सेवा की है। आपका सवत 1980 में देहान्त हो गया।

मनोविज्ञानिकता का स्फुरण हुआ है। इन गीतों के प्रत्येक शब्द में वात्सल्य रस की सृष्टि होती है। इन गीतों में मिठास, एक अपूर्वमस्ती अप्रतिम आह्लाद, शिक्षा, मनोरजन आदि तत्व पाऐ जाते हैं। मुडन के गीतों में शास्त्रीय औपचारिकता अधिक है। जब महिलायें आरोह व अवरोह के साथ तन्मयता से समवेत स्वर में गाती है। एक निराला ही वातावरण तैयार हो जाता है।

विवाह आदि सास्कारिक गीतों में लोक सस्कृति एव स्थानीय प्रथाओं के चित्र भी अंकित हैं। लोकगीतों का यह अध्याय, सरस, मौलिक और खोजपूर्ण है। जिसमें सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक जीवन के पक्षों पर भी प्रकाश डाला गया है। यहा के गीतों में प्राप्त भारतीय अन्य क्षेत्रों गुजरात, पजाब आदि की एकात्मक भावना है। बनडा, बनडी, भात तोरण फेरों के गीत, सीठणों विदा के गीत, राति जुमे के गीत आदि भावनाप्रधान गीतों में यहा के जीवन की झाकी प्रस्तुत की गई है। राति जुमे के गीतों में देवी देवता, कुलदेवता, बड़ी, दातण, जैतलदे, दिवलों भागडली, बभूतोसिद्ध आदि यहा गाये जाते हैं।

विवाह के गीतों में यहा बधावों भी अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। प्राय बीसों *प्रकार के बधावे यहा प्रचलित हैं। इन बधावों में समृद्ध परिवार की झाकी उपलब्ध* होती है मुसलमानों का मरसिया गीत भी विवेचय विषय है।

श्रावण के गीतों में पीपली, पणिहारी, तीज-त्यौहारों गीत, बारहमासा आदि है। प्राय ये वियोग श्रृगार के उत्कृष्ट दृष्टान्त हैं। इनमें वियोगिनी के प्रेमी हृदय में उत्ताल रगों का ज्वार आ रहा है तथा व्याकुलता की पराकाष्ठा हो गई है। कार्तिक गीतों में थवारी, कार्तिक स्नान महात्म्य, के भावभीनेनेगीत आरती आदि से सम्बन्धित गीत प्रमुख हैं। ये गीत भक्ति भावना से ओत प्रोत हैं। फाल्गुन के गीतों से वर्षोल्लास, मदोन्मन्ता, पारस्परिक स्नेह बधन के भावों की अभिव्यक्ति हुई है। प्रमुखत रसिया, नृत्य गीत, ढफ के गीत, लगुर के गीत यहा एक महीने गाये जाते हैं। गणगौर भी यहा का एक विशिष्ट त्यौहार है। तत्सम्बन्धी गीतों में तथा विवाहित बालिकाओं के साथ अविवाहित कुमारिया "ईसर गौर" के गीत 18 दिनों तक गाती हैं। इन गीतों में *नारी द्वारा सुयोग्य पति प्राप्ति एव सद्गृहस्थी सचालन की शिव प्रार्वती से याचना* निहित है।

जीवन गीतों में, जनजीवन की झाकी के सामाजिक, पारिवारिक तथा श्रम सम्बन्धी क्रिया गीतों के विभिन्न पक्ष हैं। इन गीतों से प्रतिभासित होता है कि स्वकीय प्रेम, वस्तुत सच्चा स्थिर और समाज प्रतिष्ठित्त है। स्थानीय प्राकृतिक सौंदर्य तथा कृषक की सम्पन्नता के साथ कृषि का महत्व भी इन गीतों में चित्रित हुआ है। यहा तेजस्वी कृषकों का स्वस्ति वाचन है। "हर्ष" और "जीर्ण" गीत में भाई बहिन का

अनुपम वात्सल्य है। विणजारा गीत में कठोर जीवन का अनूठा चित्र अंकित है और साथ ही नारी की व्यथा भी उद्वेलित करने वाली है। बाल और वृद्ध विवाह गीतों में नारी की करुण पुकार है और समाज की विकृतियों की विवेचना है।

शेखावाटी धार्मिक गीतों में सगुण और निर्गुण धारा के गीत उपलब्ध होते हैं। इन हरजसों में वातावरण पारिवारिक है और स्थानीयता की पुट के कारण, अलौकिक भी लैकिक धरातल पर अव्यवस्थित है। पौराणिक गीतों राग व कष्ण चरित विषयक, जानकी मगल, कालीय नागदमन, मोरध्वज आदि के गीता में सगुण भावधारा को विवेचित किया गया है। वैराग्यपरक गीत मेहता नरसी द्वारा नानी बाई के मायरे में सतो की निवृति के दर्शन होते हैं इसमें भक्ति भी माधुर्य भाव की प्रतिष्ठापित हुई है।

शिवजी के ब्यावले में, शिवपार्वती अलौकिक पात्रों में सासारिक रग समाविष्ट हुआ है। शेखावाटी में जो वैवाहित रीति रिवाज, प्रथायें आदि हैं, वे सब स्थानीय रग से इस ब्यावले में अनुरंचित है। गोपीचन्द भरथरी विषयक निर्वेद के गीत भी मर्मस्थल पर चोट पहुचाने वाले तथा करुण हैं। ये अभुतपूर्व रस-वार्षिकी धुन में यहा गाये जाते हैं। सतीमाता के गीत भी यहा काव्यपूर्ण महत्वशाली तथा भक्ति भाव समन्वित है। इन धार्मिक गीतों में आम देवतों तथा तीर्थाटन के गीत भी मिलते हैं। बाल गीतों में सरल, सहज, निश्छल, लघुदात्मक, मार्मिक अभिव्यक्ति दृष्टिव्य है। इनमें कौमार्यावास्था के क्रीडा प्रधान गीतों की गतिविधिया वर्णित हैं। इनमें बालक-बालिकाओं की नैसर्गिक प्रवृतियों तथा अभिरुचि का दिग्दर्शन होता है। ये बालगीत आनन्द, उमग उत्साह, स्फूर्ति आदि से ओतप्रोत हैं।

वर्गीकृत सामत वर्गीय गीत, शेखावाटी में कर्मठ जीवन के प्रतीक हैं। जिनके द्वारा समय की परतों के नीचे धुध से ढकी राजनैतिकता पर प्रकाश पडता है। ये गीत इतिहास के लुप्त तत्वों का उत्मेष करते ह। इन गीतों में यहा की अदम्य परपरा के परिवेश में ऐतिहासिक व्यक्तियों के कथा गीत भी सम्मिलित हैं, जिनमें जन हिताय एव कर्तव्य निर्वहणार्थ आत्माहुति की चरित्र उजाला दैदीव्य मान है। इन राजनैतिक गीतों की रचना में मध्यध्वनि भी निहित है। जब यहां के सामती वातावरण में युद्ध की ललकार, दुर्धर्ष, सैन्य पराक्रम-प्रदर्शन और राज्य विस्तार लिप्सा निरतर व्याप्त थी। "सजनागीत" ऐसे गीतों के मध्य प्रकृष्ट और विशिष्ट है। "सजनो" बारह वर्ष की उग्र एव कठोर तप परीक्षा में सफली भुत होती है। मुजरती गीत "तेजमल" ऐसी ही अनुकृति को प्रदीप्त करता है। "रतन राणा" गीत में राणा के वीर गति प्राप्त होने पर प्रेम सी का करुण क्रदन है। "झाली राणी" और "उमादे" भी सामती दाम्पत्य पुत्रों से सावद्ध ऐतिहासिक गीत है। उमादे तो सामती विकृतियों का शिकार बन जाती है। सपत्नी डाह ने उसे पति प्रेम से वंचित कर यावत् जीवन रुठी राणी के रूप में

रहने को विवश किया। विविध गीतों के प्रकोष्ठ में आधुनिकता की छाप स्पष्ट है। इनमें नवीन राष्ट्र निर्माण, विदेशी शासक, राष्ट्रीय चेतना, स्वराज्य, गांधी, नवीन रोशनी, विश्वयुद्ध, सिपाही की देश भक्ति, आविष्कृत यातायात के नवीनतम साधनों आदि की उल्लेखनीय अभिव्यक्ति हुई है। इन सबसे यह सिद्ध होता है कि शेखावाटी लोकगीतों में प्रगतिशील है और रूढ़िग्रस्त न होकर युग भावना पर चलने वाले हैं।

ख्याल-

शेखावाटी के ख्याल राजस्थान में ही नहीं अपितु भारत वर्ष में प्रसिद्ध हैं। गायकी, रगपर्व श्याध्य अक्रियात्मकता की दृष्टि से ख्यात सम्पदा भारत व्यपी रही है। अध्याय के प्रारम्भ में इन शेखावाटी लोक नाटयों के आधार का अन्वेषण किया गया है। वैदिक कालीन यज्ञ की समस्त प्रतिक्रियाएँ जिनमें संगीत, हावभाव प्रदर्शन और व्यंग्यात्मक नाट्य सम्मिलित थे। उन्हें ही लोकनाट्यों का प्रथम रूप कहा जा सकता है। राज यज्ञ में गविष्टी का अभिनय, ऋग्वेद में पाये जाने वाले संवाद मुक्त नाटक के अविर्भाव के ही प्रारूप हैं। वेदों की यह सामग्री लोक साहित्य की मौखिक परम्परा से ही गृहीत, लोक नाटकों के रूप में अवतरित हुई है। रामायण, महाभारत, जातक, अर्थशास्त्र, ब्रह्मपुराण, स्कंध पुराण, भगवत पुराण आदि के द्वारा वही नाट्य कला अप्रतिहत प्रवाहमान हुई है। अत यह विवेचित किया गया है कि धार्मिक एवं भौगोलिक क्रियाकलापों के साथ, नृत्य अभिनयादि कलाओं का अभिन्न सम्बन्ध अति प्राचीन काल से है। राजस्थान काष्ठपुतलिका नाट्य कला एवं बंगाली यात्रा भी इन्हीं लोक नाट्यो का प्रारंभिक रूप हैं। कालांतर में इसी कठपुतली नाट्य ने मानवी नाट्य का पूर्णांगी स्वरूप धारण किया। रासलीला और राम लीला की तरह 'फड़' ने भी लोक नाटकों की परम्परा में विशेष योग प्रदान किया है।

शेखावाटी ख्याल-सम्पदा समृद्ध एवं विशाल है। शेखावाटी में ख्यालों से पूर्व सागभरे जाते थे और प्राय 19वीं शती के उत्तरार्ध में इन ख्यालों का यहा प्रचलन हुआ। प्रारम्भ में समस्त पात्रों द्वारा गणेश सरस्वती, गुरु की समवेत स्वर में वदना उस्ताद परम्परा ख्याल अभिनीत होने के पूर्व भगी, भिश्ती, हलकोर आदि का आगमन तथा उनके द्वारा पद्यमय ख्याल की सूचना, भुमिल के पश्चात नायक का स्वयं आत्म परिचय कथा वस्तु का विकास कथोप कथन की विशिष्टता, तुमुल नृत्य व गीत की विपुलता, लावणी विहाग, माड़ सोरठ आदि रगतो में रसमग्नता, दृश्य परिवर्तन पाटकीय नेपथ्य आदि का नितात अभाव तथा प्रतीकात्मकता आदि विशिष्ट तत्व इनमें हैं।

पौराणिक ख्यालों में राजा नल, चीर हरण, भक्त पूरण, गोपीचन्द भरथरी नरसी मेहता का मात, राजा हरिश्चन्द्र, विराट पर्व आदि हैं। ऐतिहासिक ख्यालों में पृथ्वीराज

जगदेव कंकाली हमीर हठ, राजा रिसालू , हाडी राफी अमर सिंह राठौर आदि आदि आते हैं। सामाजिक ख्यालों के अतर्गत सेठ मुनीम कन्या, विक्रम, छोटा कथ, बुढ़ा बालम आदि अपना प्रमुख स्थान यहा रखते हैं। प्रेम परक ख्यालों में ढोला मरवण, चदमलयागिरी, हीर-राझा, चकवार्वेण, लैला मजनू, बीनबादशाह शहजादी, सौदागर-वतीरजादी, पठाण शहजादी, चत्र मुकुट, माधवानंद-कामकदला, छबीली भटियारी आदि ने लोकमानस पर अपना अधिकार जमा रखा है। हास्यप्रधान ख्यालों में छोटे कंथ की लावणी मनोरजक है।

"चिड़ावी शैली, जिसकी यहा बडी धूम है उसके प्रसिद्ध सूत्रधार एव अनुयायियों के अखानों का विवचन किया गया है। शेखावाटी में ख्यालों के उनके तथा अभिनेता प्रहलादीराम, झालीराम, नानूराणा, उजीरा तेली, दूलजी प्रभृति का इतिहास इस लोक धर्मी कला के अन्नयन व प्रसिद्धि में दिया गया है। उपरिमिर्दिष्ट गायक व अभिनेता स्वयं ख्याल के रचयिता भी रहे हैं। जिनके ख्याल शेखावाटी में उपलब्ध होते हैं इनके दल व अखाडे आज तक लोकप्रिय हैं। शेखावाटी ख्याल साहित्य की दृष्टि से अत्यधिक ख्याति प्राप्त है। आज भी नानू और दूलिए का नाम जन जुबान पर उनके ख्यालों की भांति नाच रहा है। उनकी रगत आज भी ख्यालों पर रग जमाए हुए हैं। गायन काव्य, सृजना, नृत्य, पोशाक, मच सज्जा आदि की दृष्टि से शेखावाटी के ख्याल-साहित्य का गौरव स्वीकार किया है। शेखावाटी का ख्याल साहित्य अति समृद्ध है। लगभग 100 अब तक प्राप्त हुए हैं। शेखावाटी के साहित्य गौरव को बनाये रखने में इनका विशेष महत्व है। यह साहित्य अपने आप में एक स्वतत्र विषय है।

लोक कथायें·

शेखावाटी जनपद में व्रत कथाओं, लोकप्रचलित सामान्य कथाओं, दादी-नानी की मनोरजक कहानियों, प्रौघ वार्ताओं की अपनी अनूठी शैली है। आनुष्ठानिक कथाओं का मूलाधार शास्त्रोक्त होते हुए भी प्रकारांतर से ये लौकिक बन गई है। इनका श्रवण अनुष्ठान, उद्यापन आदि यहा की नारियों तक ही सीमित है। नागपचमी, एकादशी, सोमवार, कार्तिक स्नानादि की कहानिया यहा तक बडे चाव और श्रद्धा से महिला-समाज में सुनी जाती हैं।

शेखावाटी लोक कथा काव्यों में हर्षजीण, पिरथीराज, सुरजा, लोक महाभारत में एमना कवार, स्यावकरण धोडी, अमारसा कबीरोवानों आदि महत्वपूर्ण हैं पाबूजी के जीवन प्रसगों पर रचित झीडे शेखावाटी में गाये जाते हैं। निहालदे सोलादे, रूपादे, आदि अनेक विशिष्ट नारियों की जीवन लीला सम्बन्धी जन काव्य यहा पाए जाते हैं। रामदेवजी, गूगा जी और तेजाजी के गीत भी इन्हीं के अर्न्तगत आते हैं। गद्य के अर्न्तगत वीर, चोर डाकू, धाडेती, भूत-प्रेत, जिद, वाणिया, जाट, चमार, राजा,

राजपुत्र सभी से सम्बन्धित लोक कथायें रची गई हैं। इन सबके सामाजिक गुणों बखान इन कथाओं में किया गया है। लोक कथाओं में नीति-प्रेम, शौर्य, हास्य, कुतुहल, पुण्य आदि विषयों पर रचित कथायें प्रमुखता से प्राप्त होती हैं। इनकी सजावट, बनावट तथा कथन शैली अपनी विशिष्टता रखती है। 'बात' और हुंकारो का ऐसा पारस्परिक मेल है कि इनको भिन्न रूप में नहीं देखा जा सकता। कतिपय कथाओं में पद्य-गद्य दोनों का प्रयोग हुआ है। गद्य को सवारने, सजाने तथा उसकी सरस अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए लोकोक्ति और मुहावरे भी यहाँ अपना अलग अस्तित्व रखते हैं।

सुभाषितों, पहेलियों और प्रवादों का यश अत्यधिक प्रचलन रहा है। कहावतों की विपुलता दृष्टव्य है। इन सबका पद्यात्मक रूप अपनी सरलता, सरसता और रोचकता से परिपूर्ण है। इसलिए ये जनकठ पर सुशोभित रहते हैं। जनमानस इनका प्रयोग कर सदा प्रभुझल्लित होता है। इनसे वातावरण में एक रस का सचार हो जाता है।

गद्य के अर्न्तगत चोर, डाकू, वीर, धाड़ेती, भूत, प्रेम, जिन्द, बाणिया जाट, चमार, राजपूत, आदि सभी से सम्बन्धित लोक कथाये रची गई हैं। इन सबके सामाजिक गुणों की बखान, इन कथाओं में किया गया है। सबकी जातिगत विशेषताओं का बड़ा रोचक एव सरस चित्रण इन लोक कथाओं में हुआ है।

लोकगाथा :

लोकगाथाओं में शेखावाटी प्रदेश के फावाड़े प्रसिद्ध हैं। तेजाजी, डुगन-जवारजी, पाबुजी आदि वीर नायकों की पराक्रम गाथाओं यहा चारण, भोपे, भाट आदि रावण हत्थे पर गाते हैं। ये युग पुरूष हैं इनकी मनौती मनाई जाती है और स्थान पर इनके देवरे बने हुए है। लोकगाथाओं में महाकाव्य की सी आनन्दोपलब्धी होती है।

शेखावाटी में तीन प्रकार के पवाड उपलब्ध हैं :—वीरगाथापरक, प्रेम कथात्मक और अद्‌भुत साहस द्योतक। वीरगाथात्मक पवाडों में वीर रस का सम्यक, पुट पाक हुआ है। पाबुजी का अदम्य साहस, दुर्घर्ष पराक्रम शौर्य सम्पन्न रणकुशलता, वचन निर्वहण आदि गुणों के फलस्वरूप इन पवाडों में उनका यश स्तवन हुआ है। इसके साथ ही इनमें सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा सास्कृतिक जीवन पक्षों का भी प्रतिबिम्ब प्राप्त होता है। प्रेमकथापरक पवाडो में यहा ढोला मारू और निहालदे सुलतान के पवाडे प्रख्यात हैं जिनमें प्रेमिका की उपलब्धि के लिए सच्चा वीर अनेक अवरोधक कठिनाइयों को साहस प्रदर्शन से पराभुत करता हुआ, अपने लक्ष्य की प्राप्ति करता है। इनमें प्रेम तत्व तथा वीरत्व परस्पर मिले जुले है। रोमाचक पवाडों में डूमजी-जवार जी का पवाडा यहा लोक प्रचलित है जिसमें अलौकिक कृष्य सुनकर सहसा रोमाच हो जाता है ऐसे पवाडों के मानवेत्तर तत्व रहस्यात्मक रूप में

असामान्य कार्य करते हैं।

पवाडों में लोक पूज्य गोभक्त एवं देशभक्त वीर पुरुषों की स्मृतिया हैं। उनके अनुकरणीय उदात्त चारित्रिक विशेषताओं का स्तवन करने के लिए लोक कवियों द्वारा कई प्रबन्ध गीत यहां रचे गए हैं। जिनमें पाबूजी, डूगजी-जवारजी, निहालेसुलतन तेजा जी आदि की वीरगाथायें भोपो के मुख से श्रवणकर शेखावाटी जनमानस आनन्दातिरेक से ओतप्रोत हो जाता है। इन प्रबन्ध गीतों में लोकादर्श गुम्फित है।

देश के अन्य भागों की तरह शेखावाटी में भी लोक कथायें सुनाने का भार अधिकतर परिवार के बूढे सदस्यों पर होता है। अधिकांश घरों में यह सामान्य दृश्य है कि दादी-नानी फुर्सत के क्षणों में सामान्यतया शाम के समय या रात को नाती पोतों से घिरी कई कथायें सुनाती हैं। जिन लोक कथाओं में कल्पना की उड़ान मुख्य गुण होता है। उन्हें बच्चे बडे ध्यान से सुनते है इन कथाओं से न केवल बच्चों का अपितु बडों का भी मनोरंजन होता है। पुरूषों द्वारा सुनाई जाने वाली कहानिया सामान्यतया हास्य विनोद और बुद्धि कौशल की होती हैं इनमें से अधिकतर उपदेशात्मक होती हैं।

ये लोक कथाए फतासी और सहज विश्वास के कारण ग्रामीण लोगों की प्रकृति में मनुष्य के अबूझ-अस्तित्व से सबंधित जिज्ञासा को तुष्ट करती हैं।

शेखावाटी क्षेत्र की समाज की स्थानीय विशेषताए तथा सास्कृतिक ताना बाना विद्यमान हैं। इनमें लोगों के धार्मिक रस्मों रिवाज, विश्वास, खान पान की आदतें, पहनावा, अन्ध विश्वास, स्वप्न और कल्पनाओं का चित्रण हुआ है।

शेखावाटी बोली की विशेषतायें:

भाषा शास्त्रियों के अनुसार शेखावाटी बोली अपनी अलग विशेषतायें रखती है, जिसके कारण उसे स्वतत्र भाषा इकाई माना जा सकता है।[1] इन्हीं विशेषताओं के कारण भाषा विदों ने शेखावाटी की पृथक बोली स्वीकार किया है।[2] शेखावाटी की निम्न विशेषतायें हैं-

(1) खडी बोली हिन्दी की अकारान्तता की तुलना में यह ओकारान्त भाषाऐं हैं। कुत्ता, कुत्तो, घोडा, घोडा, मेरा, मेरी, तेरा, तेरो, मीठा, मीठो खाना, खानो, पीना, पीनो आदि।[3]

---

1. डा. कैलाश चन्द्र अग्रवाल, शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन-29
2. डा सुनीतिकुमार चटर्जी, राजस्थानी भाषा, पृष्ठ-89
3. डा. हीरालाल माहेश्वरी, राजस्थानी भाषा और साहित्य पृष्ठ 335
4. डा. कैलाश चन्द्र अग्रवाल, शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन पृष्ठ 29-30

(2) खड़ी बोली में हिन्दी के संयुक्त स्वर ऐ, ओ, शेखावाटी में इ, ई, ओ, है जैसे—ऐसा, इसो, कैसा, किसो, पैसा, पिसो, दोड़, दौड़ आदि।

(3) स्वर मध्यवर्ती तथा शब्दांत महप्राण ध्वनियों के महप्राण का ह्रास शेखावाटी की उल्लेखनीय प्रवृत्ति है। साधु-सादु, आधा, आदो, धोखा, धोको, सीधा, सुदो आदि।

(4) खड़ी बोली की तुलना में शेखावाटी की अपनी कुछ विशेष ध्वनियां हैं जो *ध्वनि-ग्राम रूप में प्रतिष्ठित हैं—न्ह-नृाणा, न्होरा, म्ह-म्हे, म्ह, ल्ह-ल्हावणो,* लहकणो, ल-काल, कालो,

(5) कुछ शब्द शेखावाटी के अपने हैं—गडक, भोमर, भभूलियो, चूसो, सुनखो, बीड़ डुकाव, तोरण, इरानी, लकड़ी, खाजरू, मूण, डांफी डाफा, पुचरियो आदि।

(6) शब्द युग्म के प्रयोग कई प्रकार के होते हैं—पीर सासरो, भोलो-स्यालो माला-मणियो, नदी नालो, आदि।

(7) मधुरता के लिये अनेक शब्दों के साथ ली, ही, ण, का प्रयोग दृष्टव्य है। *चिडकली, रातडसी, मावडो, पदमण रुकमण, समयन आदि।*

(8) पुरूषवाचक में 'जी' सम्मान सूचक शब्द के विपरित भाव देने वाला शब्द इयो, लो, डो आदि।

इयो, रामियो, सुजनियो, किसानियो, तारियो, पूरणियो, लो-दामलो, येमलो, नेमलो आदि। डो-सवाइडो, रामूडो, गुमाईडो आदि।

(9) *सम्मान सूचक जो शब्द के विपरीत भाव देने वाला शब्द खातपात* मालणती, कुंजडती, बणियणटी आदि।

(10) डो का प्रयोग कहीं, कही, स्नेह, दया, या निकटता सूचक भी होता है। जवाइडो, मोइडो, बापडो, गुसाइडो, साथीडो आदि। शेखावाटी की उच्चारण सम्बन्धी विशेषता, अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शब्द की उदात्त और अनुदात्त ध्वनियों में अन्तर करते ही, अर्थ भेद हो जाता है—

कान (कृष्ण)	कान (कर्ण)
कोड (कुष्ठ रोग)	कोड (चाव)
नार (सिंह)	नार (स्त्री)

नाथ (बैलों के डालने की रस्सी) — नाथ (स्वामी)

बोलो (बहुत) — बोलो (बधिक)

मध्यम पुरुष तथा उत्तम पुरुष के बहुवचनीय सर्वनाम शब्द हिन्दी की तुलना में नितान्त भिन्न हैं—ये, तुम लोग, आप, म्हे, हम। आपिद हम तुम आदि।

उपर्युक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि शेखावाटी प्रदेश एक बोली विशेष का क्षेत्र है। जहा की बोली को एक स्वतत्र नाम शेखावाटी प्राप्त है।

अध्याय ८ कला और संस्कृति

कला से तात्पर्य है सौन्दर्य पूर्ण वह वस्तु या क्रिया जो सभी को मत्र मुग्ध का दें। जिसके दर्शन अथवा श्रवण से परमानन्द की प्राप्ति हो। हेमराज ने शिव सूत्र विकशिनीमें कला की परिभाषा देते हुए कहा है : कलयानि स्वरूप आवेश पति वस्तूनि वा तम यम प्रभातमृ कलनमेव कला। अर्थात नव नव स्वरूप प्रमोल्लेख शालिनी संवित् वस्तुओं में या प्रमाता में सब की आत्मा को परिमिति रूप में प्रकट करती है इसी क्रम का नाम कला है।

आधुनिक कला शब्द लेटिन भाषा के आर्ट शब्द का पर्याय है। जिसका अर्थ है कारीगरी। किसी विशेष अनुभूति का निपूर्णता द्वारा अभिव्यक्त करना ही कला है। कला के सम्बन्ध में भारतीय और पाश्चात्य मनीषीयों की अब धारणाएं भिन्न-भिन्न रही हैं। प्राचीन काव्य शास्त्रियों में कला को सकुचित रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने कला को मूल मनोरजन का साधन माना है। भृतहरि के अनुसार सामृत्य कला विहीन सासात पशु पुच्छ विषाणहीन प्राचीन भारतीय चिन्तकों ने कला में सौन्दर्य भावना की अपेक्षा बुध्दित्व पर बल दिया है। हमारे यहा कामसूत्र आदि ग्रन्थों में 64 कलाओं का वर्णन मिलता है। इनमें नृत्य, गीत, वाद्य, चित्रकारी स्थापत्य वस्त्र और आभूषण के साथ चोरी को भी कला रूप में स्वीकार किया है।

भारतीय आचार्यो ने इन 64 कलाओं की परिगणना उप विधावों में की है। वे

---

1 (क) डा मनोहर शर्मा, राजस्थान में ध्वनी प्रर्वतक पृ. 10
(ख) डा मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी भाषा और साहित्य पृष्ट 3

2 (क) डा अग्रवाल, शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन पृष्ट 30
(ख) सीता राम लालस, राजस्थानी शब्द कोश, पृष्ट-8
(ग) नरोत्तम दास स्वामी—राजस्थानी भाषा और साहित्य एक परिचय, पृष्ट-21-22
(घ) हीरालाल माहेश्वरी, राजस्थानी भाषा और साहित्य-पृष्ठ 335

उन्हें कला न मान कर शिल्पकौशल से अधिक निकट मानते हैं। शिल्प में नियमों की प्रधानता होती है। कला पर नियमों का बन्धन उतना नहीं रहता। कलाकार नियमों की चिन्ता किए बिना रूप की ऐसी अभिव्यक्ति पर बल देता है जो दर्शन श्रोता या पाठक की भावनाओं को उद्वेलित कर दे। उसका हृदय तभी कलाकारों को प्रकम्पित कर सके। कलाकार के मन मुकुट पर वाह्य पदार्थो दृश्य एव मानव व्यापार का जो प्रभाव पड़ता है यह उससे अपने माध्यम से रुचिर शैली में अभिव्यक्त करता है।

आधुनिक युग में मनीषियों ने कला को व्यापक रूप में स्वीकार किया है। भारतीय चिन्तकों ने सौन्दर्नुभूति की अभिव्यक्ति करने वाले सभी रूपों को कला माना है। रवीन्द्र ने कला को मूल सौन्दर्य स्वीकार किया है। बाबू गुलाब राय की दृष्टि में कला कलाकार के आनन्द की श्रेय और प्रेय तथा आदर्श और यथार्थ की समन्वित करने वाली प्रभावोत्पादक हैं।

पाश्चसत विद्वानों से प्लेटों में केवल कला से प्रकृति की प्रतीक्षा न मान कर उसे प्रकृति की बिम्ब प्रतिबिम्ब माना है। फायड़ ने कला को काम भावनो दृष्टिकोण से ही समझने का प्रयास किया है। वास्तव में दैनिक जीवन में जिन भावों को हम सकोच वश प्रकट नहीं कर पाते हैं, कला के माध्यम से व्यक्त कर देते हैं। वस्तुत भिन्न रुचि ही लोक और मुन्डे मुण्डे मूर्ति के कारण एक ही घटना दृश्य, वस्तु, अथवा व्यक्ति का भिन्न-भिन्न रूपों में प्रभाव पडता है। और प्रत्येक कलाकार उसी के अनुरूप अभिव्यक्ति कर देता है। उसी का प्रमाण है कि विद्वानों ने कला को विभिन्न रूपों में वर्गीकरण किया है। वस्तुत कलाओं को प्लेटों के अनुसार व्यवहार की दृष्टि से सौन्दर्य और उपयोगिता के आधार पर निम्न प्रकार किया गया है।

1 उपयोगी कलायें

2 ललित कलायें।

1 उपयोगी कलायें—उपयोगिता का सम्बन्ध भौतिक सुख सुविधाओं से जोड़ते हुए उन्होंने बढई व लुहार आदि की कलाओं को भी उपयोगी कला कहा है।

2 ललित कलायें—लालित्य और सौन्दर्य को आधार मान कर ललित कलाओं के 5 भेद किये हैं। वस्तु कला, मूर्ति कला, नृत्य, चित्रकला, सगीत तथा काव्य कला।

शेखावाटी में इनके संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है

1 वस्तु कला—वस्तु कला से तात्पर्य है भवन, मन्दिर, स्तप आदि की कला। भवन आदि का निर्माण स्थूल पदार्थो जैसे ईंट, चूना, लोहा, पत्थर आदि से होता है।

2 मूर्ति कला—इसमें किसी धातु या पत्थर के माध्यम से कलाकार पशु,

पक्षी, मानव आदि की आकृति बनाता है। सौन्दर्यानुभूति के अनुसार कलाकार आकृति का निर्माण करता है। इसमें स्थूल पदार्थों का प्रयोग वस्तु कला की अपेक्षा कम होता है। भाव ही प्रमुख रहता है।

3 चित्रकला—इसमें कागज, रग और कूची की सहायता से चित्रों का अंकन किया जाता है। इसमें वास्तु कला और मूर्ति कला की अपेक्षा स्थूल पदार्थों का प्रयोग कम मात्रा में होता है। इसमें सूक्ष्म तत्व की प्रधानता है जो स्मृति और मस्तिष्क में विद्यमान रहती है।

4 सगीत—नाद और ध्वनी की सहायता से अपने भावों को व्यक्त किया जाता है।

5. काव्य कला—स्थूल पदार्थों और अथवा भौतिक उपकरणों से स्वार्थ मुक्त है। कल्पना तत्व की प्रधानता होती है। जो कलाकार भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है।

लोक गीत

लोक गीत लोक जीवन के दर्पण हैं। सगीत, काव्य, सस्कृति रीति रिवाजों, की धरोहर, किसी भी रूप में लोकगीत देश की अमूल्य निधि है। जिसमें जन मानस की सारी भावनायें, सवेदनाओं, ईर्षा, द्वेष, स्नेह, सम्मान, माधुर्य, कटाक्ष, विरह तथा मिलन प्रतिबिम्बित होते हैं। किसी भी प्रदेश की सस्कृति की सम्पदा को जीवन्त रखने का पुनीत कार्य लोकगीत करते हैं। ये जन आकाक्षाओं के प्रतीक होते हैं।

शेखावाटी लोक सगीत, लोक नृत्य, लोक गीत एव समूह परम्पराओं अक्षय का खजाना रहा है। शेखावाटी के ग्रामीण अचलों में जिस किसी को भी यहा के पनघटों पर जल भरती ग्रामीण बालायें, मेलों तथा पर्वो पर नाचते हुए युवक-युवतिया, और बीरबान जंगल में पशुओं को चराते हुए चरवाहों को और ठडी रात में ऊट कतारियों को लोक संगीत की स्वर लहरी में बहते देखा और सुना है उन्हें यह अनुमान सहज ही हो सकता है कि यह अचल लोक गीतों की दृष्टि से कितना समृद्ध है। ब्रह्म मुहूर्त में चक्की पीसती हुई महिलाओं को देखिये, मध्यान्ह में कुऐं पर चरखा चलाते हुए किसानों को वे कोई न कोई लोक गीत गुन गुनाते हुए ही मिलेंगें।

लोक गीतों की अपनी अलग ही हस्ती होती है और वह नित्य बदलते फैशन से अप्रभावित रहते है। लोकगीत जाति की आत्मा को प्रतिबिम्बित करते हैं। जिससे वे नकल से बचे रहते हैं। हर जाति के अपने लोक गीत होते हैं, जो अपनी सस्कृति की पहचान बनाये रखते हैं। यहां लोक गीतों की अपनी पृष्ठभूमि होती है। एक सांस्कृतिक परम्परा के निर्वाह के साथ ही साथ मन की कोमल भावनाओं, व्यथा की

कसक, मान मनुहार भी इसमें रमा बसा रहता है। इसी में छुपी हुई है संघर्षरत समाज की अनोखी और अनूठी गाथायों जो अपनी संस्कृति की पहचान बनाये रखती है। यह लोकगीत अपनी मौलिकता और संवेदनशीलता बनाये हुए है, जो जन मानस के विभिन्न पर्दों को बड़ी स्पष्टता के साथ उजागर करते है। इन गीतों में जन साधारण के हास, रुदन, प्रेम और करूणा तथा सौजन्य की भावनाओं का बडा मार्मिक चित्रण होता है।

ये गीत जो लोक जीवन में परम्परा से गाये जाते रहे हैं लोक गीत कहलाये हैं, लोक गीत जन ह्रदय से बिना किसी लाग लपेट के निकलते हैं उनका प्रभाव भी सीधा ह्रदय पर पड़ता है। इन गीतों में लोक संस्कृति की दृष्टि में सदियों से बहुत बड़ा महत्व रहा है। लोक जीवन के भाव, विचार, कार्य इनमें स्पष्ट गुन गुनाते गूँजते सुने जा सकते हैं।

प्रकृति ने अपनी सुषमा को दान करने में शेखावाटी के साथ कृपणता की है। इसलिए सहज रूप में इस क्षेत्र के निवासी सौन्दर्य प्रेमी हैं। उनकी यह पीपासा लोक गीतों में बड़ी ही कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त होती है। मरुभूमि होने के कारण यहां वर्षा ऋतु का असीम महत्व है। वर्षा के मौसम में आनन्द और उल्लास के अनेक त्यौहार मनाये जाते हैं। जिन पर लोक गीत गाकर ये लोग अपनी सस्कृति और इस धरा के सुरों के प्रति एक नया आकर्षण जागृति करते हैं।

इस गीतों का वर्गीकरण करना आसान नहीं है, शेखावाटी में इन लोक गीतों का अटूट खजाना भरा पड़ा है। फिर भी इन गीतों का निम्नप्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है।

(1) प्रकृति सम्बन्धी लोक गीत

(2) परिवार सम्बन्धी लोक गीत

(3) त्यौहारों और पर्वों सम्बन्धी लोक गीत

(4) धार्मिक लोक गीत

(5) विविध लोक गीत

आइये शेखावाटी के कुछ प्रमुख लोक गीतों का रसावादन करें।

(गणगौर) लोक गीत

एक नायिका अपने पति से उसके लिए सोलह श्रृगार की वस्तुए जुटाने का अनुरोध करती है ताकि वह सलेहियों के साथ गणगौर मना सके। देखिये उसकी

मन की व्यथा—

भवर म्हाने खेलन दो गणगौर,
ऐजी सहेल्या म्हारी सलेत्या जोवे बाट,
भवर म्हाने पूजण दो गणगौर,
भल खेलो गणगौर सुन्दर गौरी,
भल खेलो गणगौर।
अेजी थाने देवे लाडला पूत,
सुन्दर गोरी भल खेलो गणगौर,
माथा ने मैमद लाय,
भवर म्हारे माथा ने मैमद लाय।
ओजी म्हारी रखडी रतन जड़ाय,
भवर म्हाने खेलण दो गणगौर,
कानों में कुण्डल लाय,
भवर म्हारे कानों न कुण्डल लाय,
ओजी म्हारे नवलखा हार घड़ाय,
भवर म्हाने खेलण दो गणगौर,
बट्या रे चुड़लो लाय,
भवर म्हाने बट्या रै चुडलो लाय,
ओजी म्हाने मुदड़ी बैठ जड़ाय,
भंवर म्हाने खेलण दो गणगौर,
पगल्यों रै पायल लाय,
भवर म्हारे पगल्या रै पायल लाय,
ओजी म्हारा बिछिया रतन जड़ाय,
भवर म्हाने खेलण दो गणगौर।

त्यौहारों के लोक गीत

होली (लोक गीत)

रंग रंगीले वस्त्रों में आभूषणों से लदी मालायें सामूहिक नृत्यों का जो जलवा उभारती है, उनमें पायल की झंकार, लोक वाद्यों की मधुरिमा और अबीर गुलाब की वर्षा से गली गली में इस लोक गीत की अनुगुंज सुनाई देती है।

होली आई ए. . . .
सहेल्या मिल खेल्या भूर,

होली आई ऐ . . . .
रिम झिम बिढ़ियां बाजे,
ढनक ढनक बाजे पायलडी,
होली आई ऐ . . . . .
कोई कोई ओढयां
झीणो दिखणो चीर,
होली आई ए. . . .
कोई कोई परहया पायलड़ी,
होली आई ए. . . . .

तीज (लोक गीत)

तीज के त्यौहार पर महिलायें लोक जीवन की मस्ती भरी अदाओं से लोक गीत गाती हुई अजीब उल्लास लिए होती हैं, प्रस्तुत है एक झलक :—

झुरे तो झुर अे,
काली बादली
झुर अे म्हारे
बाबो जी के देश
मेलो तो मेलो
ब्याणजी बेन ने
आई आई पैले
सावण री तीज

तारा की चुनड़ी (लोक गीत)

प्रस्तुत लोक गीत शेखावाटी का लोक प्रिय लोक गीत है। इस मधुर गीत में *नायिका अपने पति से जयपुर से तारा की चुँडी लाने का आग्रह करती है।*

"बाईसा रा बीरा जयपुर जाईजो जी,
आता तो लाईज्यों तारा की चुनडी।
बाईसारी भावज भात बताावो जी,
कशीक रग की तारा की चुँदडी,
बाईसारा वीरा हरया हरया पल्लाजी,
कसूमल रग की तारा की चुँनडी,
म्हारी मिरगा नैणी ओढ दिखावो जी,
कशीक सोहे, तारा की चुँदडी।

पियूसा म्हाका ओढण नाहीं दे सासू सा म्हाका ओढण नाहीं दे,-तास की चुनडी

तारा की चुँदडी,

बाईसारी भाभी, पिलगा पै औढो जी,

म्हारी मिरगा नैणी, महला में, प्रोढो ऐ,

महला में निरखा, तारा की चुदडी

वाईसा, रा बीरा देवरियो सैतान ओढण नाहीं दे। तारा की चुनड़ी

सेजा में निरखा तारा की चुँनडी।

मोरिया (लोक गीत)

प्रस्तुत लोक गीत एक सरस लोक गीत है जिसमें ऐसी बालिका की व्यथा है जिसके विवाह में देरी हो रही है।

मोरिया, आच्छो बोल्यो रै, ढलती रात में,

म्हारे हिवडा में वहगी रे दुधार,

हां ए, मारुणी, म्हें तो बौल्या म्हारी मौजसू, मौजसूं मौजसू,

थारे किण बैगी रे दुयार।

हां रे मोरिया, पिउ, पिउकी वाणी छोड दे, छोड दे, छोड, दे,

म्हारा पिऊजी बसे रे परदेश। मोरिया

मारुणी पिऊ पिऊ की वाणी, बोलस्यू, बोलस्यू, बोलस्यू,

म्हारे मौज उडे दिन रात।।

अरे मोरिया थारे बागा में काई-काई नीपजे, नीपजे, नीपजे,

जिणरी आवै है सुगन्धी बास।

गोरड़ी म्हारे बागो में मरवो, केवड़ो, केवडो, केवडो,

जिणरी आवे है सुगन्धी वास।

वावल अबके परण दे, आखा तीज ने, तीज ने-तीज ने,

न तर जाउली, मोरिया री लार।

ककड़ी मतीरा धाल्या घूब इटके (लोक गीत)

शेखावाटी का यह एक प्रसिद्ध लोक गीत है जिसमें ग्रामीण महिला अपने पति से शहरी जीवन से मुक्ति चाहती है और कहती है गाव तथा अपने, खेत में जाने को जी करता है यह गीत इस अभिव्यक्ति का परिचायक है।

काली रे कलायण उमडी ए पणिहारी जीयेलो
छोटोड़ा छोटां रो बरसे मेंह, बालाजो
आज धराऊँ धूधलो ए पणिहारी जीयेलो
मोटोड़ो धारा रो बरसै, मेंह, सैणाजो।।
भर नाड़ा भर नाडिया, ए, पणिहारी जीयेलो।
भरियो भरियो समद तलाब ।। बाजाजो।
किणजी खुदाया नाडा नाडिया जी पणिहारी जीयेलो।
किण जी खुदाया भीम तलाब, बाला जो।
सासूजी खुणाया नाड़ा नाडिया ए पणिहारी जीयेलो।
ससुरेजी खुणाया भीम तालाब सैणाजो।
नालेरा बधावा नाड़ा नाडिया ए पणिहारी जीयेलो।
मोतीडा बधावा भीम तालाब, सैणांजो।
सात सहेल्या रो झूलरो ए पणिहारी जीयेलो।
पाणी ने चाली रे तालाब, बालाजो।
घड़ो ना डूबे ताल में ए पणिहारी जीयेलो।
इडोणी रे तिर-तिर जाय बाजाजो।
सात सहेल्या पाणी भर चाली ए
पणिहारी जीयेलो।
पणिहारी रही रै, तालाब सैणा जो
ववडो ओठी ने हेला मारियो ए
लजा ओठी जीपेजो।
घड़िया उंचावतो जाय, सैणाजो।
सात सहेल्या रे ओढण चूदड़ी ए पणिहारी जीयेलो।
पणिहारी रो धुंधलो बेस, सेणाजो
घड़ो तो पटक दे ताल में, ए पणिहारी जीयेलो।
ये घालोनी म्हारे लार, सैणां जो
काटो तो थारी धारी जीभड़ी ए लजा ओठी जीयेलो
खायजो, धने कालो नाग बालाजो
देवर जी सरीखो ओठी फूंटरो ए म्हारी सासू जीयेलो।
नणदल बाई री आवे उणियार सैणाजो
ओठी तो बहु म्हारो डीकरो ए बहुबड़ जीयेलो।
ओठी थारो भरतार, बालाजो।।

पीपली (लोक गीत)

शेखावाटी क्षेत्र का यह बहुत प्रसिद्ध गीत है।

प्रस्तुत गीत में एक विरहिन अपने परदेशी प्रियतम के लिए जो दूरस्थ नौकरी में है प्रेम की अभिव्यक्ति कर रही है।

बाय चाल्या छा भवर जी। पीपली जी
होजी ढोला। हो गई घेर घुमेर
बैठण की रुत चाल्या चाकरी जी,
अेजी म्हारी सास सपूती, रा पूत, मतना सिधारो पूरब की चाकरी जी,
हा जी ढोला होय गई जोध जवान,
विलसण की रुत चाल्या, चाकरी जी,
ओ जी म्हारी लाल नणद वाइसा रा वीर
मतना सिधारो पूरब की चाकरी जी।
कुण थारा घुड़ला भवर जी,
कस दियाजी, हा जी कुण कस दिया जीण।
कुणया जी रा हुकुमा चाल्या, चाकरी जी
ओजी म्हैर हिवडै रा सिणगार
मतना सिधारो पूरब की चाकरी जी
बड़ोडे वीर धुडल्या गोरी कस दिया जी,
हो ये गोरी। साथीड़ा कस दिया जीन
भाभोशा रा हुकुमा चाल्या चाकरी जी
रोक रुपैयो भवर जी, म्हे बणूं जी
हाजी ढोला, वण जाऊगी पीली पीली मोहर भीड पडे, जद,
भवर जी, वरतल्यो जी
ओजी म्हारी सेजारा सिणगार पिया की पियारी
ने सागे ले चलो जी।।

कुरजाँ (लोक गीत)

सूजी छी सुख नींद में, सपनों भयो ए जजाल भंवर सुपने बतलाईजोए, थने सुपना मारस्यूँ रे घ् थारी कतल कराय, सुपनों बैरी झूठो क्यों आयो रे।

क्या ने गोरी म्हाने मारस्यो ए क्यू म्हारी कतल कराय,
गोरी थारे पीव ने मिलाया ए,
आज सवारी उठिया जी, गई मायड के पास,

सुण मायड़ थाने बात कहूं ए, कहता आवे लाज।
ब्याई छू के कुंवारी ए जै को अरथ बताय,
मायड़ म्हाने साच बतादे ऐ। थे ऐ ब्याहा था पीले पोतडे,
ए हो गई जोध जवान,
नल राजा को डीकरो ए परण दिसावर जाय,
बाई थाने साच सुणावाए।।
आज सवारी उठिया जी गई कुरुजा के पास,
थूं छै धरम की भायली ए एक सन्देश पुचाय,
पत्री लिख दू प्रेम की ए दीज्यो पियाजी जाय,

कुरजा म्हारे पीव ने मिला दे ए।
माणस हाथ तो मुख कहै जी, म्हासू बौल्यो ए न जाय,
भायली म्हारां पंगवा पर लिख दे ए,
दीं लसकरिया ने जाय कहो ए क्यू परणी ऐ मोय,
म्हारा भवर मिलादी जी ए।

खाटू का स्याम जी (लोक गीत)

धन खाटू, धन सावला नन्दलाल,
जी परभु, धन रे ढूढाडी लोग,
स्याम सुहावणा, बाबा स्याम,
कै रे कोसा में, थारो देवरो, बाबा स्याम।

जी परभु, कैरे कोशा मे जगाजोत,

स्याम सुहावणा बाबा स्याम।
अस्सी ऐ कोशा में थारो देवरो, बाबा स्याम।
जी प्ररभु, सगली सिस्टी में जगाजौत,
कुण चिणयो थारो देवरों, बाबा स्याम,
जी परभु, कण दिवाई गजनींव,
राजाजी चिणादो म्हारो देवरो।
बाबा स्याम जी परभु सेवकां दिवाइ गज नींव
जात्री तो आवै थारै दूर का, बाबा स्याम।
जी परभु सावनिया मोटूयार।।
जात्री तो आवे थारै कुलबहू, बाबा स्याम।
जी परभु, गोद जडूले पूत।
कुण्दा जी री गाड़ी हांकी, बाबा स्याम जी परभु,

संग कुण्याचद जी रो साथ,
चढे अे चढाले थारे चूरमों बाबा स्याम।
जी परभु, और चोटूपाला नाले र।।

रुत आइरे, पपइया, थारे बोलणरी (लोक गीत)

वर्षा ऋतु के आगमन का एक मनोहारी लोक गीत जो पपइये को सम्बोधित किया गया है

रुत आई रै, पपइया, थारे बोलणरी,
रुत आई रै।
जेठ मास की लूवा रै बीती, अबै सुरंगी रुत छाई रे।
रुत आई रै।
असाढ उतरयो श्रावण लाग्यो, काली घटा घिर आई रै।
मोठ बाजरी सूं खेत लहर कै, बन बन हरियाली छाई रै।
झिरमिर झिरमिर मेहूडो बरसै, श्याम बादली घिर आई रैं।
रुत आई रै पपइया।।

मेला देखन जाऊगी (लोक गीत)

(ग्रामीण सस्कृति का लोकप्रिय-लोक गीत)

जोडूं-हाथ बलम में तोरे,
मुख अपने से कह दूगी।
पाच रूपैया दे दे रे बालम,
मेला देखण जाऊँगी।
पाच आना की पाव जलेबी,
बैठ सड़क पर खाऊँगी।
लड्डूवा, पेड़ा और जलेबी सब ही माल आ जायेगे।
मेला में तोहे धुर्रा, प्यारी, नोच नोच खा जायेंगें।
ऐसी कामोहि निबल जान लई, उन पै नुचवा लूगी।
पाच पन्हा मोंडे पै मारु, सो सों गारी दऊगी।
गारिन को लोवे बुरो न मानें, ढिग तोरे आ जायेंगें।
सात पाच इक्ठौरे होकर ऊधर उठा ले जायेंगें।
कछू तो मैंने करोरे कोरया कछू पीहर तै लाई।
सब देखे तेरे पीहर बारे, माता पिता और भैया।
हमको कबहू बिदानाय दीनी, तुमको नकद रूपैया।

लोक-संगीत

सूक्ष्म और भाव प्रवण होने के कारण सगीत कला का सबसे अधिक लोकप्रिय रूप है। संगीत के स्वर में शब्द की ऐन्द्रिकता भाषा की शान्ति के सबसे अधिक निकट पहुँचती है। सामान्यतः इस सगीत के स्वर में भाषा के शब्द का भी सहयोग है। यद्यपी सगीत में स्वर ही प्रधान है और शब्द गौण है। मन की गहराईयों में उतर कर प्राणों के कर्म को स्पर्श करके उसे भाव से आन्दोलित कर देने की जो क्षमता सगीत में है वह अन्य किसी कला में नहीं हो सकती।

सगीत के शुद्ध रूप में विशेषत. वाद्य सगीत में केवल स्वर विधानों की दृष्टि है सगीत का शुद्ध स्वर विधान भी भाषा के सहयोग से जीवन के भावों को आधान करके अधिक सम्पन्न और अधिक लोकप्रिय बना।

सगीत के शास्त्रे में भी स्वर भाव और शब्द का सम्पन्य सहज सम्भव है, समानुपात में नहीं हैं। रूप की दृष्टि से स्वर भाव और शब्द समान धर्मा है। अत· उनका समन्वय सहज सम्भव है तथा सगीत और काव्य दोनों में प्राप्त मात्रा में हुआ है। शिष्ट और शास्त्रीय सगीत में भी परम्परा से सगीत के इसी पक्ष का विकास अधिक हुआ है। उस्तादों के अलावा और आचार्यों को जिन्हें सामान्य सगीत प्रमियों की प्रतिमा पूर्णत. ग्रहण नहीं कर सकती, शिष्ट और शास्त्रीय संगीत के महत्वपूर्ण चमत्कार हैं। इन आलापों और तानों में शुद्ध स्वर विधान का वैभव है इसमें भाव का सयोग ढूढना कठिन है। शब्द का भी इसमें कोई स्थान नहीं है। मध्यमयुग का सगीत माध्यमिक रूप में स्वर और भाव का समृद्ध समन्वय हुआ है। किन्तु इस समन्वय में भी शब्द की मात्रा और उसका महत्व अलग है। खयाल, ठुमरी, आदि सगीत के प्रचलित शिष्ट रूप स्वर सयोजन की विविध भंगिमाओं के द्वारा भाव के विविध पक्षों की अतिपशव्यक्ति ही प्रधान है। शब्द इस अतिष व्यक्ति के गौण और स्वरूप निमित मात्र है। स्वर सयोजनों के द्वारा कितनी विविधता के साथ और कितने समृद्ध रूप में भावों की अभिव्यक्ति के समान है। वह किसी सिद्ध कण्ठ गायक की कला का साक्षात प्रदर्शन देखने पर ही विदित हो सकता है। सगीत में एक अल्प मात्रा में अग भंगिमाओं का सयोग भी सम्भव हो सकता है। सगीत मुख्यत· स्वर भाजना अग भावाभिव्यक्ति है।

जिस प्रकार उत्कृष्ट शास्त्रीय सगीत अग भागिमाओं को चचाला से रहित केवल स्वर योजना का चमत्कार है। उसी प्रकार उत्कृष्ट शास्त्रीय नृत्य भी मौमकैर सगीत से रहित मौन अग भगिमाओं की गतियों की योजना है। वैसे यदि लय का एक सूक्ष्म क्रम सगीत का सामान्य लक्षण है तो नृत्य और गान दोनों सभान रूप से एक ही सगीत की परिभाषा के अन्तर्गत है। फिर भी सगीत की सामान्य जन गान में मिल

रूपों में साकार होती है। इस प्रकार लय कला का सामान्य लक्षण बन जाती है।

लोक सगीत का रूप भी सामूहिक था। वेद मत्रो का पाठ भी सामूहिक गान के रूप में होता था। बाणभट ने हर्षचरित्र में ऋषियों के सामूहिक वेद पाठ का उल्लेख किया है। आरम्भिक वैदिक युग के बाद देश में कृषि और उद्योगों के क्रमिक विकास के कारण पुरूषों के जीवन में कला के लिए अवकाश कम होता गया अत लेखन और गायन दोनों मुख्य रूप से स्त्रियों की जीवन चर्या के अग बन गये। खेत में हल चलाता हुआ किसान और वन में गाय चराता हुआ गोपाल भी अपनी मन चली तानों से श्रम और शून्यता का भार हल्का कर लेता है। किन्तु कला का समृद्ध रूप पारिवारिक और सामाजिक उत्सवों के अवसर पर ही देखने में आता है। कला के शास्त्रीय रूपों में पुरूषों का अधिपत्य बढ़ता रहा वहाँ उसके लोक सामान्य रूपों की ओर से पुरूष विरत होते गये। होली रसिया लाबनी बिरहा कजरी आदि के रूप में पुरूषों के सामूहिक सगीत बहुत काल तक सुरक्षित रहे हैं। किन्तु स्त्रियों की जीवन चर्या में वे अधिक व्यापक रूप में वर्तमान है जिनके लिए सगीत उतना ही आवश्यक है जितना अन्य दुख में सगीत ही मनुष्य का साथी होता है। शेखावाटी में सगीत की परम्परा बहुत ही प्राचीन है। लोक धुने को सुनने पर आपको पता चलेगा कि सगीत किस तरह शब्दों में प्राण डालता है। हमारे लोक सगीत ने जो रस और मस्ती छुपी हुई है यह अन्य में मिलनी दुलर्भ है। हमारी राग रागनियों की झलक लोक प्रस्तुतियों के माध्यम से स्रोताओं को आन्दोलित किया जाता है। शेखावाटी की पृष्ठभूमि सगीत और नृत्य प्रेमियों के लिए बराबर आक्रमण का केन्द्र बना रही है।

लोक नाटय

अपने पूर्वजों एव ऐतिहासिक महत्व के महान चमत्कारिक व्यक्तियों की पावन स्मृति के रूप में गाथायें रचने, कहने तथा उन्हें स्वाग-स्वरूप के रूप में प्रस्तुत करने की परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है। ये स्वाग-स्वरूप गीत नृत्य तथा गुणा-नुवाद से गायब होकर धीरे-धीरे अभिनय का रूप धारण करने में और भी मानवी शरीर पर उतारकर उसके चरित्र की हूबहू प्रतिकृति उत्पन्न करने की चेष्टा और पकडने लगी तथा त्यौहारों, उत्सवों, पर्वो तथा सार्वजनिक समारोहों के साथ जुडकर जन जीवन को आह्लदित करने लगी। मानव स्वभाव की अनुकृतिमूलक प्रक्रिया धीरे-धीरे रग मोचटा प्रदर्शन का रूप धारण करने लगी और जन समुदाय तथा समाज की भावात्मक अभिव्यक्ति का एक प्रबल साधन बन गई। मन्दिरों, प्रसादों तथा समाज के समृद्धिशाली अगों के प्रश्रय वह उच्चकोटी के कला पूर्ण, रगमीय अभिनय के रूप में विकसित हुई। साथ ही लोक धर्मों में नाटय परम्परा भी अपनी प्रारम्भिक अवस्था से ऊपर उठकर सधे हुए रगमचीय प्रदर्शनों में विकसित

हुई तथा उसके नाना रूप भारत के विधि क्षेत्रों में अपनी रंग-बिरंगी छटा दिखा लाने लगी।

ख्यालः

17 वीं शताब्दी में ख्यालों की एक लोक धर्म परम्परा शुरू हुई जिसका दायरा केवल काव्य रचना तथा किसी ऐतिहासिक तथा पौराणिक व्यक्ति जीवन से सम्बन्धित कथित रचना की प्रतियोगिता तक ही सीमित था। यही परम्परा प्रथम बार 18 वीं शताब्दी में राजस्थान के रंगमचीय ख्यालों के रूप में परिवासित हुई जो आज अनेक रूपों में राजस्थान के जनजीवन को आद्रित कर रही है। यह ख्याल सर्वप्रथम कल्पना और विचारों से उत्पन्न कविता रचना का ही दूसरा नाम था। परन्तु जब से वह रंग-मंच पर खेल तमासे का रूप धारण करने लगा वह ख्याल कहलाया।

ख्याल "नृत्य" नाट्य तथा गीत का एक सामिलिखित स्वरूप है, जो रंगमंच पर अनौपचारिक रूप से प्रस्तुत होता है। इन ख्यालों में संगीत की प्रधानता रहती है। नृत्य और नाट्य का प्रश्न गौण होता है। इनका कथानक भी गुथा हुआ नहीं होता और बहुधा अनेक प्रासंगिक कथानकों से उलझकर अपना अक्ष्य भी खो देता है। प्रासंगिक और अप्रासंगिक गाथाओं के धरातल पर नाना प्रकार के चरित्र प्रकट होते हैं और अपना पूर्ण उत्कर्ष बतलाये बिना ही लुप्त हो जाते हैं। चरित्रों के साथ अनेक घटनायें घटित होती हैं। इन लोक धर्मों, नाट्यों के कथानक बहुधा प्रचलित प्रेम गाथाओ, वीर गाथाओं, तथा धार्मिक प्रसंगों पर आधारित रहते हैं। इनके रंगमंच बहुत ही साल आडम्बरहीन तथा विविध दृश्य विधानों से रहित होते हैं। इन ख्यालों की सफलता में अभिनेताओं का जितना प्रयास रहता है उतना ही दर्शकों का भी रहता है। अभिनेता सिस्तियाँ उत्पन्न करता है तथा दर्शक उसकी पूर्ति करते हैं। किसी भी स्थिति या स्थल के लिए रंगमंच पर उसका कोई प्रतीक आवश्यक नहीं होता। वे सब प्रतीक दर्शक स्वयं ही अपने मन में उत्पन्न करते हैं। इन लोक नाट्यों को नीचे लिखे अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है।

(1) ऐतिहासिक—ये अपनी विषय सामग्री किसी लिखित इतिहास या तत्याडिह स्रोत से प्राप्त करें। जो गाथा समाज को हृदमगल हो चुकी हो, जिनका जनजीवन से घनिष्ठ लगाव हो, वही इनका इतिहास बन जाता। विश्वास और श्रद्धा पर आधारित यह पात्र तत्य अतत्य से कोई सम्बन्ध नहीं रखते। इन गाथाओं में वर्णित चमत्कारिक व्यक्तित्व इन ख्यालों का सर्वाधिक प्रिय विषय बन गया है।

डूंगजी, जुहारजी, बलजी भूरजी, अमर सिंह राठौड, पृथ्वीराज ऐतिहासिक दृष्टि से कोई वीर कितना भी पूज्य क्यों नहीं हो वह यदि जन मानस के हृदय का हार नहीं बना है तो वह भी अब ख्यालों का विषय नहीं बन सकता।

(2) स्मारिक नाटय—जन मानस को उल्लसित करने वाली जितनी भी प्रेम गाथायें हैं वे ही इनकी विषय सामग्री बन जाते हैं। जैसे लैला मूजन, ढोला मारु, सुल्तान निहाल दे, रामू चणना, प्रन्ता वीरनदे, ब्रजमुकुअ पद्मावली।

(3) धार्मिक नाटय.—इनमें वे धार्मिक प्रसग होते हैं जो सामान्य जनता की *आकाक्षाओं को छूते हैं जो धार्मिक प्रसग या व्यक्तित्व इन नाटयों में सर्वाधिक प्रकट* होते है। नरसी मेहता, राजा हरीशचन्द्र दयमन्त्री, गोपीचन्द्र मर्तहरि। उक्त प्रकार के ख्याल बहुत लोकप्रिय हैं।

शेखावाटी ख्याल.

शेखावाटी शैली के ख्याल भी अन्य ख्याल शैलियों से बिल्कुल भिन्न हैं। *शेखावाटी के फतेहपुर (सीकरी) क्षेत्र में आज से सैंकडों वर्ष पूर्व मलीराम और* प्रहलादराम नामक दो भाइयों ने रग मचीय प्रयोग में काफी नाम कमाया था। शेखावाटी शैली के ख्यालों के वे जन्म प्रिय प्रयोग में काफी नाम कमाया था। शेखावाटी शैली के ख्यालों के ये जन्मदाता थे। उनके प्रमुख शिष्यों में चिडावा, नानू, राणा प्रमुख थे, जिन्होंने बाद में अपना अलग दल बना लिया था। इस दल में उजला-लेली भी एक प्रतिभाशाली अभिनेता था। जिसने बाद में स्वय का अलग दल बनाया। इन दोनों ही व्यक्तियों ने इस क्षेत्र में बडा नाम कमाया और अनेक ख्यालों की रचना की। शेखावाटी शैली के प्रमुख ख्यालों की नामावली इस प्रकार है जगदेव ककाली, चक्वाबने, इन्द्र सभा, खींच आलमदे, सोदाग बजीजादी, पृथ्वीराज, ढल्हा, धाडवी राजा, चन्द्र मुकूट, हरिशचन्द्र, शहजादा सुल्तान, दया धाडवी, रूप बसन्त पद्मावत आदि।

शेखावाटी ख्याल ऊचे रगमच पर प्रदर्शित होते हैं। कभी ऊपर चन्दवा भी तान दिया जाता है। इन ख्यालों में नृत्य की प्रधानता होती है और गीत अत्यन्त ऊचे स्वरों में गाये जाते है इन ख्यालों की सगत नगाडा ढोलक सारगी से भी की जाती है। सर्वप्रथम रग मच पर आकर गीतमय स्तुति के रूप में अपना परिचय देकर रग मच पर ही बैठ जाता है। ख्यालों में राजस्थानी लोकगीतों की अनुपम छटा होते हुए भी निम्न रागों की अत्यन्त मनोरम भाषा विद्यमान रहती है। माडचन्दावली, काफी जजवन्ती, प्रेरज कारिगडा, भरनी आसावरी, सिन्धु, सौंरठ, मल्हार देश आदि।

इन रागों का समावेश इन ख्यालों में लोक धुनों के रूप में ही हुआ है उनके शास्त्रीय पक्ष को कोई स्थान नहीं दिया गया है।

शेखावाटी ख्यालों की नृत्य शैली की तरह उनकी सगीत शैली भी अत्यन्त पेचीदा बन गई। इनके छद इतने क्लीष्ट होते हैं कि सधे हुए कला कार ही उनमें कमाल

हासिल कर सकते है। इन छन्द वह धुनों और नृत्य बालों की बन्दिश अपनी क्लीष्ट होती है कि उनकी सगत करने वाले शेखावाटी में कुछ ही नगाडे बाज शेष रहे हैं। सच पूछिये तो लवकारी तथा अवकारी की पेचिन्दागियों ने इस ख्याल शैली के नाटय तत्वों को बहुत क्षति पहुँचाई है। सम्वाद ने इस ख्याल शैली के नाटय तत्वो को बहुत क्षति पहुँचाई और नृत्यकार के पाव उसका तूफान की तरह साथ देते हैं। इसलिए शेखावाटी के ख्यालों के रगमच अत्यन्त मजबूत और फौलादी तख्तों के बनाये जाते है। इन ख्यालों में जो छन्द प्रयुक्त हुए हैं वे इस प्रकार हैं। चन्द्रायनी, धुननी, गजकी लावणी, लावणी भी तीन प्रकार की होती है। जनकी लावडी तथा रानी। शेखावाटी ख्यालों में गीत नृत्यों की पेचिन्दागियों ने इतना आधिपत्य जमाया है कि अभिनेता के चेहरों के भाव तथा अन्य ग्रन्थ मुद्रा भी गौण बन गई है।

रम्मते

इनमें सगीत तथा नृत्य शहय गति से चलता है परन्तु अभिनय और आरम्भिक क्रियाओं के लिए उनमें अधिक स्थान होता है। इन रम्मतों का मच बहुत ही आकर्षक ढग से सजाया जाता है। गायक तथा साजिन्दे मच के एक ओर अपना स्थान ग्रहण करते है और पात्र अपनी वेश भूषा में सुसज्जित होकर रंगमच पर रखी हुई कुर्सियों पर आसीन होते हैं। अपने पाठ 27 के लिए वे मैदान में उतर जाते हैं और उसकी समाप्ति पर पुन अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। कुछ प्रमुख रम्मते इस प्रकार हैं। लैला मजनू अमर सिह राठौड़, पूरनमल, हरीशचन्द्र, गोपीचन्द भ्रतहरि, प्रह्लाद आदि हैं।

स्वाग·

स्वाग का नाटय प्रश्न बहुधा नही के बराबर होते हैं। प्रधानता केवल स्वाग की है। पात्रभूमि के स्वाग बनाकर एक मच पर आते हैं। इनमें नाटय नियोजन बहुत ही दुर्बल होते है। कभी-कभी पात्र अनियोजित ढग से जो भी उपजता है वही कह देता है। स्वाग अधिकतर श्रृगारिक होते हैं। तथा कभी-कभी अशलील भी होते हैं। लेकिन नाटय विहीन होते हुए भी सगीत प्रधान होती है। जिसमें दल का मुख्य अभिनेता ही इसका सचालन करता रहता है। पात्र रगमच पर ही उपस्थित रहते हैं और अपना-अपना पार्ट करने के बाद अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। शेखावाटी में निम्न पार्टी तथा स्वाग प्रसिद्ध रहे हैं। प० चिरजी लाल शर्मा सान्तोर निवासी , मानेलाल, पं लक्ष्मी चन्द शास्त्रिय स्वाग, हीर राझा, रूप बसन्त, लीली चमन आदि।

निम्न लोक वाद्य है —

(1) रावण हत्था (2) खेजरी (3) अलगोजा (4) बासुरी (5) डेरु (6) ढफ (7) पूगी (8) ढोल (9) हारमोनियम (10) सारगी।

लोक नृत्य

मनुष्य को अपने भरण पोषण के लिए सदैव से श्रम करना पडा है। श्रम को सरल और सुख प्रद बनाने के लिए उसने कलाओं को जन्म दिया है और प्रकृति उसकी सहायक रही है। अपनी छाया को हिलाने और उसमें विभिन्न मुद्रायें बनाकर क्रीडा करने से आदि मानव को सुख की उपलब्धी हुई और इस प्रकार अनुकरण की भावना से नृत्य कला का जन्म हुआ।

लोक नृत्य किसी क्षेत्र अथवा जाति विशेष के जातीय जीवन के अंग हैं। जाति विशेष के उत्सवों, पर्वों, काम धधों तथा उनकी प्रवृत्तियों की झलक उनके नृत्यों में हमें देखने को मिलती है। लोक नृत्यों में निम्न बातों का ध्यान रखना पडता है।

(1) वेशभूषा (2) मेकअप (3) वाद्य यन्त्र जैसे ढोलक, मजीरे, बासुरी, तुरई, चिमटा, थाली अलगोजा, चग, ढोल, हारमोनियम आदि। आइये शेखावाटी अचल के लोक नृत्यों पर एक दृष्टि डालें।

शेखावाटी अचल में नृत्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्षा ऋतु में छोटे-छोटे बालक, बालिकायें भी आन्नद मग्न होकर नाचते हैं। वर्षा ऋतु में मेघाछन्न आकाश के नीचे गावों की गुवाड में बच्चे एकत्रित होकर नृत्य करते हैं और मेघ बाबा से याचना करते हैं। और यह मधुर गीत गूज उठता है—

मेह बाबा आजा, घी में रोटी खाज्या,

आयो बाबो परदेशी, काकणी में ढोकलो, मेह बावे मोकलो।

युवतिया तीज और गणगौर पर और वैवाहिक अवसरों पर आनन्द विभोर होकर नाचती हैं। युवक ढफों पर होली के गीदड नृत्य में विविध स्वाग भरकर उल्लास के साथ नाचते हैं। विवाह के अवसर पर कुम्हार के घर चाक पूजते वक्त का नृत्य, होली पर घुमा, बारात के विदा होने पर लडके के घर की स्त्रियों के द्वारा टूटीया नृत्य, मेहन्दी नृत्य, गणगौर का नाच, दिवाली पर दीपक नृत्य, गृहस्थ स्त्रियों के पारम्परिक नृत्य हैं। होली के दिनों मे ढफ की तान के साथ-साथ घेरा बनाकर नाचना तथा नगाडे की ध्वनी के साथ एक दूसरे से डडा भिडाकर घेरा बाधकर नाचना और छारडी के दिन महरी का वेश बनाकर नाचना गृहस्थी पुरूषों के नृत्य हैं।

गोगा जी जिन्हें सापो का देवता माना जाता हैं। सभी जातियों द्वारा पूजे जाते हैं। इनके भोपा गूगाजी का निशान मोर पख, डमरू, कटोरा और छडी लिए गावों में गली गली में भादों के दिनों में चक्कर लगाते थे। एक भोपा जिसमें छाया आई समझी जाती है, झूमता

हुआ नाचता रहता था। यह जाति नृत्यों की रचना में बडी निपूण समझी जाती थी। जो यजमान वृति पर जीवन यापन करते थे। इनके दूर देहात के इन रगीन नृत्यों की खोज और जाच पडताल अभी पर्याप्त रूप से नहीं हुई है। और न ही उन्हें उचित प्रोत्साहन ही मिला है। नष्ट होती हुई इन सास्कृतिक निधियों के पुनरुद्धार की जितनी आवश्यकता आज हैं उतनी शायद पहले कभी नहीं थी।

शेखावाटी अचल के प्रमुख नृत्य निम्न हैं —

(1) चग नृत्य —रग और उमग की भावना लेकर आता है फागुन का महिना। इसमें मस्ती का एक अलग ही रग होता है। क्षेत्र विशेष की लोक सस्कृति की एक झलक इन दिनों मौलिकता और विशिष्टता के साथ आपको देखने को मिलेगी। इस अचल का चग नृत्य, यहा की उमग और मस्ती का मुह बोलता पयार्य है। फतेहपुर, झुन्झुनू, लक्ष्मण गढ, चूरू। सीकर की नृत्य मडलियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

फागुन के आगमन के साथ ही यहा चग की थाप पर फागों की स्वर लहरी गूँजने लगती है। ज्यों-ज्यों होली नजदीक आती है यह कार्यक्रम परम्परापूर्ण यौवन पर होते हैं। गावों में लोग टोली बनाकर नाचते गाते हैं। इस टोली में 10-12 नर्तक होते है, एक नर्तक महिला पोशाक में सजे नर्तक को महरी कहते हैं, और शेष नर्तक धोती कुर्ता पहनते हैं और सिर पर रूमाल बाधते है और कमर में दुपट्टा। इनका पार्टनर बासुरी वादक होता है जो चग नृत्य के दौरान मधुर लोक धुनों पर उसे जी भर के नचाता है। अन्य नर्तक चगों की लय के साथ झाझर बजाते रहते हैं और धमाल गाते हैं। धमाल का मुखडा पूरा होते ही बासुरी वादक धुन छेड देता है, विविध नृत्य मुद्राओं के साथ महरी के घूघरू बधे पाव थिरकने लगते हैं और चग वादक नृत्य करते हुए छितरा कर गोल घेरा बना लेते हैं। मध्य में बासुरी वादक, बासुरी बजाते महरी के साथ नृत्य करता रहता है। चारों तरफ डफ वादक नृत्य करते गोलाकार घूमते रहते हैं। 3-4 मिनट बाद फिर धमाल बोली जाती है। इसके पूरा होते ही फिर इसी प्रकार नृत्य शुरू हो जाता है। और रात भर यही क्रम चलता रहता है। बासुरी का बजाना, महरी का विविध नृत्य मुद्राओं में नाचना, चगों पर पडने वाली लय पूर्ण थपकिया दर्शकों का मन मोह लेती हैं। तभी तो उनके उत्साह वर्द्धन से रात भर धमाल, नृत्य चलते रहते हैं।

मद मस्त ऋतु के इस मस्ती भरे नृत्य के साथ गाये जाने वाली धमाल के भी अपने अलग रस हैं, जैसे प्रेम, विरह गीत:—

(1) तू मन जाणै कान्हा, आई मैं अकेली, सात सहेल्या,

(2) पाउणीडो भरवादे, म्हारे सग है रे।

भरवादे मदन गोपाल ।

इस प्रकार परदेश जा रहे साजन को रोकती हुई नायिका कहती है कि —

थारे चाल्या है भवर जी पीपली जी,

हा जी, ढोला, होय रही घेर घूमेर,

बेठण की रुत चाल्या चाकरी जी,
ओजी म्हारी सास सपूतरा पूत,
मतना सिधारों पूरब की चाकरी जी।

इस नृत्य की अपनी अलग पहचान बन चुकी है। यह नृत्य अपनी सास्कृतिक ख्याती की पहचान करवाते हैं। इस तरह यह नृत्य इस अचल की लोक सस्कृति से जुडा है। यह नृत्य यहां के लोक मानस में पूरी तरह समाया हुआ है।

(2) घूमर नृत्य—*यह नृत्य शेखावाटी का प्रसिद्ध नृत्य है, इसका सम्बन्ध लोक जीवन* तथा लोक मानस से है। यह इस अचल की महिलाओं का सामूहिक नृत्य है जो गणगौर के त्यौहार तथा सभी विशेष पर्वों, त्यौहारों तथा उत्सवों पर किया जाता है, इस नृत्य के साथ कई सरस तथा मधुर गीत गाये जाते हैं, घूमर हमारी सस्कृति से पूरी तरह जुडा हुआ है। नृत्य के साथ गीत इस प्रकार है—

(1) म्हारी घूमर छै नखराली ए माय
घमर रमवा म्हे जास्या ।

(3) गीदड नृत्य—*गीदड नृत्य शेखावाटी क्षेत्र का एक प्रमुख लोक नृत्य है जिसकी* परम्परा सीकर, लक्ष्मणगढ, फतेहपुर, चूरू, झुन्झुनू, चिडावा में अब भी उत्साह के साथ जारी है। इस नृत्य में डके एक साथ भिड़ाये जाते हैं। ताल नगाडे पर होती हैं, चार मात्रा का टेका बजता है, लोग स्वाग भर कर नाचते हैं। बासुरी की धुन पर एक के बाद एक धुन बजती रहती है तथा नृत्य चलता रहता है। बसन्त पंचमी से ही गीदड नृत्य शुरू हो जाता है तथा होली का दहन के 2 दिन पूर्व यह नृत्य रात भर चलता है। इस नृत्य में डके की ताल, बासुरी की धुन, नृत्य की गति, गीत के बोलों में पूर्ण सामजस्य होता है।

गीदड खेलण म्हे जास्या,
खाड बिचाले गीदड माडी, पड रही नोबत चोर,
खेलन म्हें जास्या।
बाध कसूमल पागडी, केसरिया बडी पैर
लोग ओ घाल्यों घेटियों, लुगाया गावे गीत
खेलण म्हें जास्या।
बाध पगा में घूघरा कोई
गीदड रही मचाय
खेलन म्हें जास्यां।
गीदड में रग अशी लाग्यों कोई गिणयैन,
बूढो जवान,
खेलन म्हें जास्या।

(4) घेर नृत्य —विभिन्न त्यौहारों के अवसर पर शेखावाटी में स्त्रिया और पुरुष मिलकर नृत्य करते हैं। इस मनोहारी नृत्य को देखकर हर दर्शक के कदम थिरकने लगते

हैं।

(5) पनिहारी नृत्य—इस नृत्य में स्त्रिया अपने सिर पर मिट्टी के अनेकों घडे रखकर नाचती हैं जो बड़ा मनोहारी होता है।

(6) कच्छी घोडी नृत्य —शेखावाटी में यह नृत्य बहुत लोक प्रिय है। इसकी लोकप्रियता को देखते हुए इसे भारत महोत्सव में भी प्रदर्शित किया गया। इस नृत्य की भाव भंगिमायें लोक प्रियता में आज भी अपनी पहचान बनाये हुए हैं।

(7) लावणी नृत्य—इस नृत्य द्वारा खेतों में लावणी करते समय का सजीव दृश्य उपस्थित किया जाता है जिसे देखकर दर्शक भाव विभोर हो जाते हैं।

(8) चकरी नृत्य—यह नृत्य बडा ही मनोहारी तथा आकर्षक प्रदर्शिण करता है। इसे देखने के लिए भारी जन समूह उमड पडता है।

इनके अतिरिक्त निम्न लोक नृत्य भी प्रचलित हैं और दर्शनीय हैं —

(1) भोपा भोपी नृत्य

(2) मुवाई नृत्य

(3) कान बेलियों का नृत्य

(4) डमरू नृत्य

(5) गणगौर नृत्य

इन नृत्यों के साथ कई सरस तथा मधुर गीत गाये जाते हैं।

शेखावाटी के धमाल

शेखावाटी की धरती पर यहा का जन-जीवन बसन्त आते ही झूम उठता है और नाचने गाने लगता है। गांवों की चौपालों एवं शहरों के चौराहों पर ढफ नृत्य की धूम शुरू हो जाती है जो होली तक विशेषरूप से चलती है और इसका समापन गणगौर के मेले पर होता है। काठ की पतली शलाकाओं से बने गोलाकार या नोकदार घेरों पर मेढें जैसे पशु की बारीक खाल से मेढ़े चगों पर गाये जाने वाले लोकगीतों को राजस्थानी भाषा में धमाल कहते हैं।

ये लोकगीत 'धमाल' अधिकाशत धार्मिक या श्रगारिक होते हैं। दूधिया चादनी रात में मोहल्ले के चौराहों पर चंग रसियों का जमाव शुरू हो जाता है जो आधी रात तक ढफ नृत्य में घूमते रहते हैं। इन 7-8 या 10-15 नर्तकों के गोलाकार घेरे में दो तीन नर्तक स्त्रियों के वेश में होते हैं जो बासुरी वादन पर नृत्य करते हैं। नर्तकों की वेशभूषा में अधिकाशत राजस्थानी धोती कुर्ता या चोला एवं सिर पर घुरंगेदार पीला या केशरिया रग का रूमाल होता है। जनाना महरिया बने नर्तक प्राय घाघरा-ओढणी पहनते हैं। सभी नर्तकों के पैरो में घूघरू बधे होते हैं। जो एक साथ कर्णप्रिय झकार करते हैं।

इस नृत्य में बासुरी का बजाना, महरी का विविध नृत्य मुद्राओं में नाचना और चगो पर पड़ने वाली लयबद्ध सामूहिक थपकियां दर्शकों को रोमांचित कर देती है वे झूमने लगते हैं। इस लोक नृत्य के साथ गायी जाने वाली धमालों का शुभारम्भ प्रतिदिन अपने इष्टदेव

हनुमान जी, शिवजी, एवं भवानी आदि देवी देवताओं की धमालों को गाकर किया जाता है।

बजरगबली की महिमा मनौती भरी धार्मिक धमाल जो प्राय गाई जाती है
जय बोलो हे बजरंग बली की रे जय बोलो . . .
वाले की रे अजनीलाल की रे जय बोलो. . .
सूरज स्यामी बाबा बण्यो रे देवलो
लाखा तो आवे थारे नरनारी र जय बोलो . . .

इसी प्रकार शिवजी की मनौती बड़े ही चाव से गाई जाती है
गाजो पीग्या रे सदा शिव भोला अमली रे
भोला अमली रे, शकर भोल अमली रे . . . .

इसी तरह मा भवानी को स्मरण करते हैं—
रात सुमरु मैं मात रे भवानी
इसके बाद अन्य धमाल गाये जाने का दौर शुरू हो जाता है।
राजा बली के दरबार मची रे होली
गोरी रुलज्या ए बास रुले लटको
तथा
मैं तो पीली पड़ गई
रसिया बैठी पीहर माय
तथा
रग बरसै भीजें चुनड़वाली . . .
और
मले बोरलो घडा दे रै
सोने में घडा बोरलो तेरा बीस सवारु काम
जिन्दगानी भर गुण नहीं भूलू
झुक झुक करु सलाम
ज्यानी माथै पै राखूगी तन्नै

इस बीच बासुरी की स्वर लहरियाँ पारम्परिक लोक रागों में—पीपली-कुरजा, पणिहारी रामू चन्दणा, घूमर व गणगौर और तीज पर गाये जाने वाले लहरिया जैसे रगीले लोकगीतों की धुनों पर आधारित होती हैं। इन लोक धुनों पर घुघरु बाधे महरिया बने नर्तक अपने मनोहारी नृत्य से दर्शकों को भाव विभोरकर देते हैं।

इसी समय चौंदनी रात में मोहल्ले-मोहल्ले से गृह ललनायें सुकुमारियों के साथ होली के गीतों में 'रगीलो चग बाजणों तथा, काहे को बजाओ चग रसिया' गीत गाती हैं इन चग रसियों के नृत्य देखने के लिए सभी वर्गों के लोग देर रात तक जगे रहकर आनन्द लेते हैं। होली के इन दिनों इस क्षेत्र के मडावा, मुकुन्दगढ, डूडलोद

लक्ष्मणगढ, फतेहपुर, रामगढ, नवलगढ़ आदि कस्बों में ढफ नृत्य के मजमे खूब जमते हैं।

शेखावाटी अपने मनोहारी भाव भीने और सरस लोक नृत्यों से धनी है इस क्षेत्र के कोने-कोने में सास्कृतिक परम्पराए फैली हुई हैं और इसे नर्तकों की रग स्थली कहा जाय तो अतिश्योक्ति न होगी।

इन नृत्यों में महकता बचपन, युवकों की राग रग रास-रस से परिपूर्ण तरुणाई और वृद्धों के आनन्द के क्षण सभी में लोकनृत्यों का एक विशेष महत्व होता है। ये लोक नृत्य अपने क्षेत्र के लौकिक पक्ष का प्रतिनिधित्व बखूबी करते हैं और सास्कृतिक चेतना के परिचायक हैं। और कला के क्षेत्र में निरन्तर अपना योगदान दे रहे हैं।

में उस्ताद जीवन खाँ, सुखे खाँ, जुगल खाँ, मास्टर दुलीचन्द, नारायण प्रसाद कलावटिया, केशरदेव सराफ के नाम उल्लेखनीय है। जयपुर नृत्य शैली के नृत्यकार जयलाल ने विधिवत तबला वादक और नृत्य रचनाओं के गठन की शिक्षा सुखे खाँ से प्राप्त की थी। नारायण प्रसाद कलावटिया ने यहां के लोकगीतों की स्वर लिपियां बनाई उनकी रचनायें पांच भागों में राजस्थानी स्वर लहरी नाम से प्रकाशित है। अगडे खाँ ने कैलाश गायिका को तबला वादन में पारंगत किया था

चूरू --यहां के निवासियों का अधिकतर संबंध रामगढ, बिसाऊ, फतेहपुर आदि शहरों में रहने से यहां की लोक कला और लोक संस्कृति शेखावाटी के समान ही रही। यहां के कलाकार हैं प बक्सीराम बावरिया, प हाफचन्द शर्मा, मुरलीधर, भूलराम स्वर्णकार, मास्टर मदनलाल घरड, डा जयचन्द्र शर्मा, सागर पंडित, भरत व्यास, ब्रजमोहन व्यास, सम्पतकुमार शर्मा, जीवन कुमार शर्मा, डा मुरारी शर्मा, अशोक शर्मा, श्यामसुन्दर शर्मा, कृष्णानन्द व्यास इनके अतिरिक्त चूरू में अन्य भी कई कलाकार और हुए है। रामचन्द्र पुरोहित, दुर्गादत्त मोदी, बालू दमामी, गंगू खाँ, जान मोहम्मद खाँ, अमीर खाँ, मिश्री खाँ, गफूर खाँ, भैसूराम नाई, मामरा वैष्णव आदि।

अध्याय ९ स्थापत्य कला व मूर्तिकला

"संस्कृति की धरोहर शेखावाटी के गढ":

शेखावाटी के लोग सदैव ही कला प्रेमी रहे है। तथा उन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में कला को प्रोत्साहन दिया है। कला में सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् का समावेश होता है। कला का विकास मुख्य रूप से दो क्षेत्रों में हुआ है

1 स्थापत्य कला

2 चित्र कला।

स्थापत्य कला की दृष्टि से शेखावाटी के गढ बडे ही महत्वपूर्ण हैं शेखावाटी में पग-पग पर किले मिलते हैं। यदि हम यात्रा पर निकलें तो हर बीस किलोमीटर के बाद कोई न कोई किला अवश्य मिलेगा। प्रत्येक शेखावत सरदार ने अपने निवास, सुरक्षा सामग्री सग्रह के लिए, आक्रमण के समय अपनी प्रजा की सुरक्षा और सम्पत्ति को छिपाने के लिए किले बनाये। इन दिनों किलो में रहकर शासन करने की एक परिपाटी बनी हुई थी। अधिकाधिक राज्य में किले अपने अधिकार में रखना एक महत्व की बात समझी जाती थी। किले बनाते समय ऊँची दीवारें और चारों ओर चौडी खाई और उसके भी दोनों ओर पक्की दीवार बनाई जाती थी। गढ का भीतरी भाग शासकों के निवास और रनिवास के रूप में काम आता था जो पूर्णतया सुरक्षित होता था। गढों में गोपीनाथ जी का मन्दिर तथा दुर्गामाता के मन्दिर भी होते थे। इसके बाद किला निर्माण में एक नया मोड आया। ऊँची-ऊँची पहाडिया जो उपर से चौडी हो और जिसमें खेती और सिचाई के साधन हों किले बनाने के उपयोग में लाई जाने लगी। वैसे तो शेखावाटी में 50 किले है, किन्तु विशेष ऐतिहासिक महत्व के किले झुन्झुनू का अखयगढ, खेतडी का भोपाल गढ़, फतेहपुर का किला, लक्ष्मण गढ़ का किला, अमर सर, बाघोर गढ खेतड़ी, बिसाऊ तथा नवलगढ के किले दृष्टान्त हैं उनका

संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(1) बिसाऊ का किला—1755 ई में केशरी सिंह ने विशाले की ढाणी का नाम बिसाऊ रखा और यहा 1808 में एक सुदृढ गढ का निर्माण करवाया और उसका नाम केशरगढ़ रखा। यह किला 9 बीघा 6 बिस्वा में स्थित है। इसके तीन मुख्य द्वार हैं।

किला दो गज मोटी दीवाल उठाकर बनाया हुआ है इसमें कुल 7 बडी-बडी बूर्जें हैं। जिसमें एक हजारी बूर्ज कहलाती है। इसमें सुरक्षा का पूरा प्रबंध किया हुआ है गढ के चारों ओर की दीवारों में तकनीकी छेद बने हुए हैं जिने से होकर बन्दूकों से गोलियाँ दागी जाती थी। गढ का मुख्य दरवाजा पूरा लोहे की पत्तियों से जडा हुआ है। इसके मध्य में लोहे के बडे-बडे भालों के फलक लगे हुए है जिसे हाथी भी तोडने में असमर्थ रहता था। इसको पार करने के बाद करीब 40 गज की दूरी पर गढ का दूसरा दरवाजा आता था। इसमें बैठकर मुसाहब राज कार्य किया करते थे। इसके दाहिनी ओर विशाल दीवान खाना है जिसको बलदेवदास (जनान खाना) का आना है। जिसमें चन्द्रमहल, शीश महल तथा *बिसन निवास विशेष प्रसिद्ध हैं। गढ के बाहर दक्षिण दरवाजे की ओर एक राजकीय कुआ* और एक मन्दिर है। कुआ और गढ सुरग से जुडे हुए बताते हैं। गढ के चारों ओर बस्ती को भीतर समेटे हुए मजबूत परकोटा बना हुआ है। जिसके चारों दिशाओं में चार दरवाजे बने हुए हैं उत्तरी, दक्षिणी व पूर्वी दरवाजे तो अब नष्ट प्राय हैं। किन्तु पश्चिमी दरवाजा आज भी पूरी तरह कायम है। जिसमें पिछले वर्षों तक बिसाऊ ठिकाने के अन्तिम कामदार श्री धारीसिंह जी रहा करते थे। इस दरवाजे पर एक छोटा पत्थर श्री गणेश मूर्ति प्रतिष्ठित है। जिसे बिसाऊ की प्राचीनतम मूर्ति मानते हैं। परकोटा अब भी काफी दूर में शेष है। इसकी चौडाई काफी है जिस पर एक आदमी आसानी से दौड सकता है।

गढ के भीतर एक बडा शस्त्रागार था। आजादी के बाद सभी शस्त्र राज्य सरकार को दे दिये हैं। पूर्वी दरवाजे के पास तोपखाना था। जिसमें अनेक बडी-बडी तोपें भी सालगिरह आदि उत्सवों पर अथवा किसी प्रतिष्ठित राज पुरूष के पधारने पर 17 या 21 तोपों की सलामी देकर सम्मान किया जाता था। गढ के भीतर महलों में भित्ति चित्र नहीं हैं। *किन्तु दीवान खाने में ठाकुर शार्दुल सिंह, केसरी सिंह, सूरज मल, श्यामसिंह, हमीरसिंह आदि* के स्वर्णिम चौखटों में मढे हुए आदमकद चित्र लगे रहते थे। जो चित्र कला के उत्कृष्ट नमूने कहे जा सकते हैं।

लक्ष्मण गढ का किला (दुर्ग)—यह किला 1805 में सीकर के राव राजा लक्ष्मण सिंह द्वारा बनवाया गया था। लक्ष्मण गढ़ का यह किला कस्बे के दक्षिण पश्चिम में एक छोटी सी पहाडी बेड पर खडा सुदृढ दुर्ग एक विशेष पद्धति से बना है जो प्राय दुर्गो में नहीं देखी जाती है। सामान्यतया दुर्ग प्राचीन और बूर्जों से मिलकर बनते है। परन्तु इस दुर्ग की बाहरी रक्षा पंक्ति पूर्ण रूप से लघु बूर्जों से बनी है। राजस्थान के दुर्ग में यह विशेषता

परिलक्षित नहीं होती। दूसरी विशेषता इसके मुख्य प्रवेश द्वार की सकीर्णता है। सुरक्षा को ध्यान में रखकर किया गया है। इस दुर्ग में सभी विशेषताएं मौजूद हैं यह प्राचीनता, मजबूती तथा विस्तार की दृष्टि से एक महान दुर्ग है। न तो इसने दुश्मनों के आक्रमण सहे और नहीं कोई ऐतिहासिक घटना का सम्बन्ध है। बल्कि यह एक सुदृढ तथा रक्षा करने में पूर्णतया समर्थ दुर्ग है। दुर्ग निर्माण की शैली सामान्य नहीं थी। राजस्थान में सुरक्षा की दृष्टि से यह दुर्ग राजस्थान में अपना कोई सानी नहीं रखता।

यह क्षेत्र घने टीवों वाला तथा ऊंचे-ऊंचे बालू के ढेर इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। इस रेतीली बालूमय भूमि में यह पहाडी अपना विशेष स्थान रखती है। और एक तरह से इस कस्बे को प्रकृति की एक अनुपम भेंट है।

दुर्ग की प्राचीर में बन्दूकों के लिए कोई सुराख वगैरह नहीं है, सम्पूर्ण चार दीवारी गुम्बज और बूर्जों से ठोस तथा मोटी बनाई गई है, इसकी बूर्जें एक कडी की तरह जुडी हुई हैं। बुर्जों की बेसिक चौडाई 40 फुट से कम नहीं और बुर्जों की श्रृखला अर्द्ध गोलाकर रूप में पहाड़ी को चारों तरफ से घेरे हुए है जो एक सुदृढ प्राचीर का काम करता हैं। बुर्जों की चोटी पर तोपों के रखने के लिए स्थान बनाये गये हैं। दुर्ग के बाहर का निर्माण कार्य अन्दरी दीवारों की सुरक्षा करता है।

बूज इस प्रकार से बनाये गये हैं कि कई स्थानों पर सुरक्षा की दोहरी लाइन बनी हुई है। बुर्जे के ऊपर बूर्ज कुछ स्थानों पर तथा दूसरे कुछ स्थानों पर अकेली बुर्ज बाहर की सम्पूर्ण सुरक्षा बनाये हुए है।

दुर्ग की दूसरी विशेषता इसके प्रवेश का रास्ता जो एक चक्कर दार चढाव तथा विशिष्टता लिए हुए है। दुर्ग का मुख्य प्रवेश द्वार इतना ऊचा नहीं कि हाथी उसमें आसानी से प्रवेश कर सके इसकी चौडाई भी साधारण ही है। दुर्ग में हाथी, घोडों तथा सैनिकों के लिए पर्याप्त स्थान है जो सुरक्षा के लिए जरूरी था। यहा दरवाजे का पता नहीं चलता। सीढ़ियों की जगह अचानक दाहिनी तरफ मोड लेते ही यहा एक छोटा-सा दरवाजा है, केवल एक खिड़की नुमा जो मुश्किल से 5 गुणा 3 का होगा। चमकीले बुर्जे (मीनार) जो काफी ऊंचाई पर हैं। दुर्ग का तीनों तरफ से किले की रक्षा की बाह दीवार का काम करती हैं। यह छोटा दरवाजा पहाडी की सतह से मुश्किल से ही देखा जा सकता है। यह केवल मानप्रमुख द्वार है जो बाहर की ओर खुलता है। सीढियों पर चढकर दुर्ग के ऊपरी हिस्से पर पहुचा जा सकता है। सीढियों की दोनों तरफ सकेड़ा रास्ता है। पहाडी की साइड की अन्दरुनी दीवार का काम करती है। इस हिस्से में कुछ निवास के मकान तथा मन्दिर ऊपरी हिस्से में बने हुए हैं। मुश्किल से 50 व्यक्ति ही इस स्थान पर खडे रह सकते हैं। यह पहला घेरा है सीढ़िया ऊपर को जाती हैं जो एक शानदार घेरे में खुलती हैं। जहा शानदार महल बने है। सामने तथा साइडो में दुमंजिले महल बने हुए हैं ज्हा मैदानी भाग का विहगम

दृश्य दिखाई देता है। यहां हथियारों के लिए स्थान भी बने हुए हैं।

वर्षा के पानी को इकट्ठा करने की विशेष व्यवस्था की गई है। जो बहुत कम दुर्गो में मिलती है। घेरों के नीचे के स्थान खुले हुए एव शानदार एक दूसरे से सटे हुए है। जिनके नीचे कुड बने हुए हैं कुण्ड करीबन 20 फीट गहरे जिसके दो दरवाजे रखे गये हैं। घेरे के नीचे पानी है जो एक बडी सेना के लिए लेम्प सभा के लिए काफी होता था।

दुर्ग का पुन उद्धार गत वर्षो में हुआ है। ऊपरी हिस्से में शानदार बगीचे लगायें गये हैं। और राजमहलों की सजावट तथा पेंटिग करवाई गई है। दक्षिण भाग में एक शानदार मन्दिर जो दुर्ग की शोभा को द्विगुणितकरता है। कुछ छोटी बालकनियाँ जो जा सकता है। पहाडी के ऊपर हाथी तथा घोडों के ऊपर रहने के मकान तथा सिपाहियों के लिए बैरक बने हुए हैं।

किले पर 1825 ए डी में जयपुर की सेना ने कब्जा कर लिया था, सीकर के राव राजा लक्ष्मण सिह ने राजमाता से सम्पर्क किया और आर्मी से किला खाली करवाया।

किले में कई आकर्षण के केन्द्र हैं लेकिन शेखावाटी के लिए इस शानदार दुर्ग पर दुश्मन कभी कब्जा नहीं कर सके।

आज भी यह किला शान से अपना मस्तक ऊँचा उठाये अपने गौरवशाली अतीत की कहानी कह रहा है।

शौर्य की कीर्ति से झिलमिलाता दुर्ग "फतेहपुर"

शेखावाटी के उत्तरी पश्चिमी कोने पर झुन्झुनू से 26 मील पश्चिम में फतेहपुर का दुर्ग है। जिससे फतेह खाँ ने 1451 ए डी में बनवाना शुरू किया और मुख्य हिस्सा ही बनवाया था। मुख्य द्वार जलाल खाँ ने बनवाया था। किले के निर्माण के समय यह स्थान चारों तरफ से घने वृक्षों से आच्छादित था। सुदूर क्षेत्र में दूर-दूर तक फैले हुए रेतीले भू भाग तथा घने तथा दुर्ग के चारों ओर आकाश को छूने वालें पेड तनें से तना सटा कर खडे-मेड ऐसे लगते थे जैसे आसपास एक भयानक वातावरण से डरकर यह एक दूसरे से लिपट कर खडे हो गये। चारों तरफ घोर सन्नाटों और हिंसक जानवरों का भय, इने सभी कारणों से यह दुर्ग सुरक्षा की दृष्टि से मध्यकाल में यह दुर्ग शेखावाटी का सबसे सुरक्षित दुर्ग समझा जाता था।

जलाल खाँ ने किलें के चारों और 24 मीटर जमीन जगलात और चारागाह के लिए खाली करवाई थी। इस जमीन में खेती करना वृजित था।

किला 7000 सात हजार वर्ग मीटर लम्बाई तथा 3500 वर्ग फीट चौडाई में फैला

हुआ था। किले के चारों और परकोटा फैला हुआ था। जिसके कोनों पर बड़े-बड़े बुर्ज थे। जिनमें छिद्र बने हुए थे। जिनसे शत्रु सेना पर निगाह रखी जा सकती है और समय समय पर उनसे निकले तीर और बन्दुक आदि से शत्रु सेना पर प्रहार भी किया जाता था। किले की प्राचीर की मोटाई 15 से 25 फीट तक थी। तथा ऊचाई 20 से 25 फीट तक थी। किले के चारों तरफ एक गहरी खाई उसकी रक्षा के लिए बनाई गई थी। जो किले के परकोटे से 20 गज की दूरी छोड़कर बनाई गई थी। ताकि खाई को किसी तरह पार भी कर लिया जावे तो शत्रु के आक्रमण को इस खाली स्थान में रोका जा सके।

दुर्ग का पहला दरवाजा जिसका मुँह दक्षिण दिशा में है जो आधुनिक ढग का है सामान्य रूप से तैयार किया गया है।

दुर्ग की प्राचीर इस द्वार से पूर्व तरफ अर्द्ध गोलाकर में फैली हुई है। दूसरा दरवाजा जो पूर्व दिशा में खुलता है। जरा बड़ा सुरक्षित तथा मजबूत है। इस दरवाजें से विशेष व्यक्ति प्रवेश करते थे। बाई दिशा में जहाँ महल बने हुए है। दुर्ग के प्रमुख बुर्जो दीवारों की बुर्जों पर तेलीन का मशहूर महल था बना हुआ है। जारे नवाब सरदार खाँ की प्रेमिका थी। सरदार खाँ एक कामी पुरूष था। लेकिन इसके साथ ही वह बड़ा बहादुर तथा साहसी भी था। तेलीन महल के कुछ फासलें पर औरतों के लिए रामनिवास तथा शासकों के लिए राजमहल बने हुए थे। स्थापत्य की दृष्टि से यह महल कलात्मक तथा आकर्षक है।

सिपाहियों के लिए बैरक तथा हथियारों के लिए तहखाने सुरक्षा की दृष्टि से बनाये गये थे। किले में नाहर खाँ द्वारा बनायें गये महल भी दर्शनीय हैं और इसके अलावा किले में कई मन्दिर बनायें ही यह महल खाटू के पीले पत्थरों से बनाये गये है। जो उस जमाने में इस कार्य में सर्वोत्तम समझे जाते थे। किले के दूसरी तरफ एक बडी बालकोनी जो पश्चिम दिशा में खुलती थी। शासकों द्वारा सेना नायकों से सम्पर्क करने हेतु बनाई थी, क्योंकि इन सरदारों के क्वाटरर्स इससे सटे हुए थे। अत कुछ भवनभग्नाव स्थान में है। फतेहपुर का किला ऐसा दर्शनीप स्थान है जिसे घंटो निहारने के बाद भी मन नहीं भरता, जो स्थापत्य कला के बेजोड नमूनें तथा मन मोहक राजमहलों को देखकर दर्शक मत्र मुग्ध रह जाते हैं। यह किला आज भी मरुधरा में क्यामखाँनियों तथा शेखावतों के अद्भुत साहस, वीरता, तथा रणो कौशल की गौरवपूर्ण कहानी कह रहा है। किले की सबसे बडी विशेपताएँ ऊँची-ऊँची प्राचीर, जो अत्यधिक चिकनी होने से बडी आकर्षक दिखाई देती हैं। परकोटे में स्थान-स्थान पर बुर्जेबूनी हुई थी जहाँ पर रखी हुई तोपें आज भी अतीत के इतिहास की गाथा गा रहे हैं। क्याम खानी जो अपने समय के महान योद्धा थे, और जिन्होंने लम्बें चौडे क्षेत्र को अपनी विशाल शक्तिशाली सेना के बलबूते पर अपने कब्जे में किया था और फतेहपुर के नवाब कहलाये थे। द्रोणापुर छापर के मोहिला, जोधपुर के राठौड़, नागौर, बीकानेर, के बीका इन नवाबों से सीधे सघर्ष में भिडे और आगे चलकर नवोदित शक्ति

शेखावत इनके सबसे खतरनाक दुश्मन साबित हुए।

"किले पर आक्रमण"

1 बीदा, दिलवार खाँ ने एक बड़ी सेना के साथ फतेहपुर पर आक्रमण किया, लेकिन नवाब जलाल खाँ तथा दौलत खाँ ने उनको करारी मात दी, और उनकों वहाँ से भगाने में कामयाब हुए।

2 जोघा ने 1474 ए डी में फतेहपुर पर आक्रमण किया, तीन दिन की घमासान लड़ाई के बाद किला आक्रमणकारियों के हाथ पड़ गया। कस्बे में आग लगा दी गई और भारी जानमाल का नुकसान हुआ। जब देहली की फौज फतेहपुर पहुँची तो जोघा ने द्रोणपुर की देखरेख अपने लडके जोगा को सौंपकर स्वय जोधपुर लौट गया। राव माल्देव ने 1541 ए डी में फतेहपुर पर आक्रमण करके कब्जा कर लिया।

3 सरदार खाँ 2 के समय "1735-1793 ए डी" के दौरान ज्यादातर क्याम-खानी सरदार नवाब से अपनी प्रेमिका तेलनी के सम्बधियों को ऊँचे पद देने के कारण नाराज होकर राज्य छोडकर चले गये थे। हालात यहाँ तक पहुच गये थे कि नवाब का प्रमुख सरदार खान जोदास मजबूर होकर खेती करने लगा और छोटे-मोटे तेली घोड़ों पर सवार होकर चलने लगे। कवि ने हालात का वर्णन करते हुए इस प्रकार कहा है

> खान जादा खती करें तेली चढे तुरग
> नवाब तेरे राज में दो ही बात दुरग

इन क्याम सरदारों ने सीकर के राजा शिवसिंह से सम्पर्क किया और नवाब को अपदस्त करने में मदद करने की शपथ ली। सयुक्त सेना ने फतेहपुर पर जबरदस्त आक्रमण किया। नवाब ने परिस्थितियों की गम्भीरता को देखते हुए आत्म समर्पण कर दियो और शीघ्र ही वह सीकर के राजा की तरफ से देखरेख के लिए छोड दिया गया। इससे सीकर के राजा को किले पर आक्रमण करने में मदद मिली लेकिन अन्त में किला आक्रमणकारियों के कब्जे में आ गया और सरदारे खाँ बुरी तरह से घायल हो गये और 1735 में हिसार में मर गये।

1801 ए डी जार्ज थोमस ने फतेहपुर पर आक्रमण किया, लेकिन जयपुर की सेना और शेखावतों की सयुक्त सेना के सामने वह टिक नहीं सका। बौद सिंह के समय कुछ काल के लिए फतेहपुर पर पुन कब्जा रखने में कामयाब हुए। 1779 ने शाह आलामन के फतेहपुर में अपनी फौजे भेजीं, जो किले पर कब्जा करने में असफल रहीं।

फतेहपुर का किला सवाई जयसिंह 2 की फौज से घिरा हुआ था। नवाब की तरफ से आक्रमणकारी को मुँहतोड़ जवाब दिया, सागा और गोड राजपूत सरदार नवाब की

सेना में था। उन्होंने अद्वितीय बहादुरी का और साहस का परिचय दिया, और अपने आपको न्यौछावर कर दिया और वीरगती को प्राप्त हुए।

अपने मन चाही मौत पाई, और फतेहपुर पर दुर्ग किये गये हमले का बहादुरी के साथ मुकाबला किया, और सग्राम सिह गोड़ लोग आपको हमेशा याद करेंगे। और आपके महान बलिदान और त्याग को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा।

मनचाहो पायो मरण हुई फतेहपुर कत्ल
रसीरे सग्राम सिह गौड़ घृण दिनर्गल

इस विशाल किले पर क्याम खाँ ने लगातार 279 वर्षों तक शासन किया और उसके बाद उस पर शेखावतों का अधिकार हो गया। अब किला जीर्णशीर्ण हालत में है। जो शौर्य और प्रतिष्ठा का प्रतीक है। क्यामखानियों की बहादुरी तथा बलिदानों की गाथा सुनाता हुआ यह विशाल रेते के टीलों के बीच खड़ा यह दुर्ग शेखावाटी के अतीत की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी दे रहा है।

प्रचीन राजपूती गौरव का प्रतीक अखयगट झुझुनू :

झुझुनूं में इन्होंने अपने नाम से एक विशाल गढ अखयगढ के नाम से बनाना शुरू किया था जिसको बाद में नवलसिह जी ने सनू में पूर्ण करवाया। इसके नजदीक ही जोरावरगढ भी है जिसका निर्माण कार्य जोरावर सिह जी ने सनु 1741 में शुरू किया था। शेखावाटी के सुदूर क्षेत्र में दूर-दूर तक फैले इस रेतीले भूभाग में यह दुर्ग अखयगढ स्थित ह। प्रात काल में जब सूर्य की किरणें इस पर पडती हैं तो यह सोने की तरह चमकने लगता है।

नगर के मध्य बना यह दुर्ग अपनी मजबूती के लिये तो प्रसिद्ध है ही, शिल्प कला की दृष्टि से भी बेजोड है।

किला 5 से 7 फीट मोटी और 10 से 15 फीट ऊची मजबूत प्राचीर से घिरा हुआ है। किले में भव्य राजमहल तथा कलात्मक मंदिर बने हुये हैं जो दर्शक को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। स्थापत्य कला में बेजोड़ बुर्जे, झुके हुये कलात्मक छज्जे तरह तरह की भाव भंगिमा दर्शाने वाले भिति चित्र मजबूत पत्थरों से बना किए ला परकोटा इस किले को शेखावाटी के अन्य किलों से विशिष्ट बना देता है।

शहर के मध्य पहाडी पर स्थित यह किला समय पर झुझुनू के राज परिवार पर होने वाले आक्रमणों में सुरक्षित रहा और यहां राज परिवार तथा आस पास की प्रजा तथा पशुओं ने यहा सुरक्षा प्राप्त की इस दुर्ग का उपयोग सैनिक सुरक्षा तथा निवास दोनों अभिप्रायों को लेकर होता था जो इसके स्थापत्य से स्पष्ट है। दुर्ग के चारों और सुदृढ प्राचीर बनी ही हुई है जिससे दुर्ग के मुख्य द्वार के अलावा अन्य किसी साधन से प्रवेश पाना मुश्किल है। इस किले के निर्माण में झुझुनू शहर की सुरक्षा का प्रश्न प्रमुख था।

दुर्ग में कुछ स्थापत्य नमूने है जो जीर्ण शीर्ण अवस्था में हैं। यहां एक मंदिर भी है जो साधारण नगर शैलियों में बना हुआ है।

किले की दीवारें इस प्रकार से बनाई गई हैं जहा सीढियों की सहायता से भी चढ़ना कठिन था। दुर्ग में खाद्यान्न और युद्धोपयोगी सामग्री इकट्ठा करने के लिये गोदाम भी बने हुये थे। दुर्ग में प्रवेश के लिये मुख्य मार्ग पर एक भारी भरकम फाटक लगा हुआ है जिसमें लम्बी लम्बी कीलें गाडी हुई हैं ताकि हाथी भी सुगमता से फाटक को न तोड सके।

यह किला शौर्य व प्रतिष्ठा का प्रतीक है। आज भी यह किला शान से अपना मस्तक उठाये अपने गौरवशाली अतीत के इतिहास की गाथा सुना रहा है। यों तो सारा किला ही स्थापत्य कला की दृष्टि से आकर्षण का केन्द्र है लेकिन यहा से दिखाई देने वाले प्राकृतिक दृश्य भी दर्शकों का मन मोह लेते हैं।

इस गढ के बलिदानों की कथायें और स्मारक देश प्रेमियों के जीवन को नई प्रेरणा देते रहेंगे।

अमरसर गढ

शेखावतों के उद्गम-स्थल अमरसर में राव शेखा द्वारा सन् 1477 में दुर्ग का निर्माण कराया गया जो अमरसर गढ़ के नाम से जाना जाता है। यह गढ़ अमरसर कस्बे से पूर्व में है। इसके प्रवेश द्वार का मुख पश्चिम की ओर है। गढ के अन्दर प्रवेश करते ही उत्तर दिशा में पुरानी शैली के एव साधारण स्तर के मरदाने तथा जनाने मकान बने हुए है। गढ़ के अन्दर का शेष भाग खुला मैदान है, जहाँ शायद घोडे और ऊंट-बधते रहे होंगे। गढ की प्राचीर के भीतर ही पूर्व दिशा में एक कुआ है, जिससे गढ़ में रहने वालों के लिये पेयजल का प्रबन्ध किया जाता रहा होगा। कुए की नाल से सटकर उसके दोनों तरफ दो जीने जमीन के अन्दर उतरते हैं। जीने द्वारा अन्दर उतरने पर एक सुरग का मुख्य द्वार नजर आता है। इस सुरग में होकर गढ के बाहर बने हुये कल्याण जी के मंदिर में जाने का गुप्त मार्ग है। गढ की प्राचीरों के उत्तर, पूर्व और दक्षिण तीनों तरफ गहरे बरसाती नालों की प्रकृतिकार निर्मित गहरी खाई बनी हुई है जिसके द्वारा पैदल या घुड़सवार सेना आसानी से उस तरफ से आक्रमण करने में असमर्थ नहीं हो सकती। गढ की प्राचीर चौड़ी तथा मजबूत है।

बाघोर का किला

समुद्रतल से लगभग 3200 फुट की ऊचाई लिये जो अरावली पर्वतमाला की दूसरे नबर की ऊची चोटी है, खेतडी से प्राय तीन मील की दूरी पर स्थित यह प्रसिद्ध किला है। इसका परकोटा 25 मील के घेरे में है और राजस्थान के प्रसिद्ध किले (गढ़) चितौड़गढ़

और रण थम्भोर की तरह बाघोर का किला भी दुर्गम और प्राचीनता का प्रतीक है। आश्चर्य तो तब होता है कि इसका मुख द्वार जो बाघोर ग्राम से किले की ओर चलते हुये लगभग 3-4 फर्लांग की दूरी पर है जो इस समय खडहर स्थिति के है उस दरवाजे के निर्माण में प्रयोग में लिये हुये जो बडे-बड़े तराशी हुई पत्थरों की शिलये हैं वे प्रथम तो दर्शक के मन में यह धारणा पैदा करती हैं कि ये इतने बड़े पत्थर की कटाई किस मशीन ने की और फिर कर भी ली गई तो इन्हें सामूहिक रूप से किस वाहन के जरिये इतने दुर्गम स्थल पर पहुचाया गया और किस प्रकार कारीगर ने ऐसे एक से एक पत्थर को जोड़ा। किले की प्राचीर में भी यही तराशे हुये पत्थर लगे हैं जिनके एक ओर पश्चिम की ओर पहाड़ है पर पूर्व में खड़े होने का कोई स्थान नहीं। सीधी 1000 फुट की गहराई है जिसको झाक कर देखने में गिरने का डर लगता है। उन पत्थरों को प्राचीर में लगाने के लिये किस प्रकार उस पत्थर की ढुलाई 3000 फुट की ऊचाई पर की गई और फिर वहा किस प्रकार कारीगर ने उसे प्राचीर में जोडा। यह पत्थर आज भी देखे जा सकते हैं।

पहाडों से घिरे एक ऐसे दुर्गम किले का दृस्य साकार हो उठता है जो शत्रुओं की पहुच से दुर्भेद्या माना जाता है या अरावली पर्वतमाला में स्थित किला राजपूती शौर्य की कीर्ति से झिलमिला रहा है। चारों तरफ पहाड, नाले होड लगाते पर्वतमालायें तथा भयानक वातावरण और चारों तरफ घोर सन्नाटा और हिंसक जानवरों का भय। एक पत्ते की खड़खडाहट भी आदमी के रोंगटे खडे कर देती है। इस दूरी से यह किला बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है।

किले का निर्माण कब हुआ यह सही-सही ज्ञात नहीं लेकिन यह किला धुला के राजावतों के अधिकार में था। उसे खेतडी के राजा बख्तावरसिह जी ने अपने पिता के कहने से विजय किया था। बाघोर का दुर्भेय दुर्ग पहाड़ पर बना हुआ है। बौद्धकाल की मूर्तिया इसकी प्राचीर को दर्शाती है। इसके पास ही बीलवा का प्रसिद्ध घाटा भी है। यहा की खोह में बघेरे तथा शेर कभी-कभी देखे जा सकते हैं। किले में शानदार महल तथा बगीचा भी है। किले के चारों और परकोटा बना हुआ है जिसमें स्थान-स्थान पर गोलाकार बुर्ज और छिद्र बने हुये हैं जो सामरिक दृष्टि से अत्यत महत्वपूर्ण हैं जिनसे शत्रुसेना की गतिविधि पर नजर रखने के साथ इनसे तीर तथा बदूक आदि से प्रहार भी किया जाता था। प्राचीर की ओट में किला अपने आप में इतना आत्म निर्भर और सुरक्षित बनाये है कि बाद में यह खेतडी के राजाओं का प्रमुख आश्रम स्थल बन गया था।

बाघोर का यह किला अपनी मजबूती के लिये तो प्रसिद्ध था ही लेकिन खेतडी राजघराने की रक्षा करने में भी इसका अत्यधिक महत्व रहा है। किला इतना लबा चौड़ा है जिसमें पूरा शहर भी बस सकता था और खेती भी की जा सकती थी। आज इस किले का उतना महत्व नहीं रहा जितना अतीत काल में था।

दुर्ग के चारों ओर सुदृढ़ प्राचीर बना हुआ है जिससे दुर्ग द्वार के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान से प्रवेश समव नहीं है। यह पुरातन दीवारें इस प्रकार बन हुई हैं कि किसी साधन से भी उन पर चढना कठिन है।

किले का दूसरा उल्लेखनीय पहलू यहा बौद्ध कालीन मुर्तिया हैं। जिनमें प्राचीन काल की शिल्प कला की झलक मिलती है। दुर्ग सुदृढ पत्थर से बनाया गया है। प्रवेश द्वार के फाटक पर लबी लबी कीलें गाडी गई थीं ताकि हाथी भी सुगमता से फाटक न तोड सके।

बाघोर विजय में स्मरण निमित आज तक भी खेतडी के गढ पर पहरेदार इस दोहे को सस्वर गाकर बताते हैं

"पतालिये अलवर लई, माधव रणथ्थम्भोंर।
रामचन्द्र लका लई, बख्तावर बाघोर।।"

वैसे तो यह एक ऐतिहासिक और गौरवशाली किला है जो देखने योग्य है। यह किला केवल सुदृढ़ता व सैनिक व्यवस्था का ही परिचय नहीं देता वरन् उस समय के राज परिवार तथा जन साधारण के जीवन स्तर को भी दर्शाता है।

भोपालगढ़ का किला

राजस्थान में तो हर मील पर एक किला मिल जाता है। सिर्फ शेखावाटी में 32 किले हैं। जिनके निर्माण के प्रमुख कारण प्रत्येक राजा आक्रमण के समय अपनी प्रजा की सुरक्षा सामग्री सग्रह के लिये किले बनाता था। राजाओं ने किले में रह कर शासन की एक परिपाटी बना ली थी। तथा अधिकाधिक सख्या में किले अपने अधिकार में रखना एक महत्व की बात मानी जाती थी। शेखावाटी में वैसे तो छोटे बडे अनेक गढ है परन्तु उनमें प्रसिद्ध भोपालगढ, नवलगढ़, डूडलोद के हैं मीलों दूर से इस किले के कोट, महल आदि दिखाई देते हैं। श्री भोपालसिह जी ने सवत 1812 में अपने नाम से खेतड़ी की पहाडी पर भोपालगढ़ बनाया था। इस किले की ऊँचाई समुद्रतट से 2337 फीट है।

यह किला प्राकृतिक स्थिति एव बनावट के कारण अपना सानी नहीं रखता। पहाड की चोटी पर बना होने पर भोपालगढ का किला दूर से दिखाई नहीं देता जबकि किले में खड़ा व्यक्ति दूर-दूर तक शत्रुओं की गतिविधियों को देख सकता है। ऊँची पर्वत चौटिया गहरी एव विशाल प्राकृतिक खाईयों से घिरा यह किला अपने आप में इतना सुरक्षित दुर्गम और अभेद्य है। शायद ही शेखावाटी में ऐसा दूसरा किला हो। दुर्ग की परिधि लगभग 3 किलोमीटर होगी। इसकी सबसे बडी विशेषता यह है कि यह सीधे पहाड़ पर स्थित है और पापडा सीढियों की सहायता से ही इस पर चढना समव है।

यह किला वर्षों तक खेतड़ी की राजधानी रहा।

यह किला शक्ति और प्रतिष्ठा का प्रतीक था। यह किला अपनी मजबूती के लिये प्रसिद्ध रहा है। किले का प्रमुख द्वार इतना मजबूत है कि उसको तोडना सभव नहीं था। दरवाजे पर बड़ी-बड़ी लोहे की भैरव लगी हुई थी जो सुरक्षा की प्रतीक हैं। किले के चारों और प्राकृतिक पहाडी खाई और पहाडियों पर बना हुआ परकोटा प्राचीरों के साथ जुडी बडी-बडी बुर्जे सीधा दुश्मन को मौत का निमत्रण देती हैं।

किले में बने हुये सुन्दर राजप्रसाद, जिसमें शीशमहल छतरिया और निवास के मकान दर्शनीय हैं। पहले खेतडी की अधिकतर आबादी गढ के ऊपर ही थी और वहा जीवन यापन के सभी साधन उपलब्ध थी। लेकिन धीरे-धीरे अधिकाश आबादी नीचे आ गई। गढ़ के ऊपर से शहर का विहगम दृश्य बड़ा मनोहारी लगता है। यही नहीं किला शरणागत की रक्षा करने में समर्थ रहा है। राजा अभयसिह जी ने धौंकल सिह को किले में शरण दी जिसका स्मरण इस किले के पहरेदार रात को पहरा देते समय ऊचे स्वर में गाते थे।

"खगातु बाकी खेतडी, भट बाको अनमान।
गढपति राख्यो गोद में, नौकूटी को लाल।।

विदित रहे कि रियासत जोधपुर जो क्षेत्रफल मे नौ कूटा में अवस्थित है का धणी शत्रु द्वारा वशविहीन हो रहा था और उनका अन्तिम धणी बालक अवस्था में होने के कारण जीवन रक्षा के लिये किसी सक्षम सुभट को ढूढ रहे थे तो उन्हें खेतडी नरेश अभयसिह जी याद आये और वे बालक को लेकर उनकी शरण खेतडी में आये जो उन्हें दी गई और जोधपुर महाराजाओं की अन्तिम ज्योति को प्रज्वलित रखा। तभी से उपरोक्त दोहे का गायन सस्वर नित्य प्रति होता था।

आज भी यह किला शान से अपना मस्तक उठाये अपने गौरवशाली अतीत की कहानी कह रहा है। या तो सारा किला ही शैलानियों के लिये आकर्षण का विशेष केन्द्र है। यहा के महल मंदिर छतरी के अतिरिक्त यहा से दिखाई देने वाले प्राकृतिक दृश्य भी दर्शकों का मन मोह लेते हैं।

शेखावाटी के प्रसिद्ध स्मारक– छतरियाः
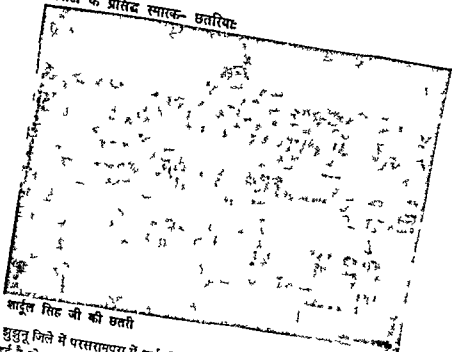
1 शार्दूल सिंह जी की छतरी

झुंझुनू जिले में परसरामपुरा में शार्दूलसिंह जी की एक सुन्दर गुम्बजदार श्वेत छतरी बनी हुई है जो शार्दूलसिंह जी की स्मृति में उनके पुत्रों ने विक्रम सवत 1807 तदनुसार सन् 1750 ई में बनवाई थी जो शेखावत शक्ति के सस्थापक थे। यह छतरी भिति चित्रों और अपनी विविधता की दृष्टि से शेखावाटी क्षेत्र में सर्वाधिक सुन्दर छतरी है। आज भी छतरी उस बहादुर की गौरव गाथा सुना रही है।

2 जोकी दास की छतरी

यह छतरी मोहन साह की बावडी के पास उदयपुर में स्थित है। यह छतरी जोकीदास जी का स्मारक है और इसे बिजेराम व देवा ने बनवाया था। जोकीदास उदयपुर के शासक टोडरमल जी के समकालीन मोहन साह के पुत्र श्री भगवानदास के पुत्र थे। भगवानदास के तीन पुत्र थे। (1) जोकीदास (2) देवीराम व (3) बिजैराम। शेखावाटी अचल में भिति चित्रों की दृष्टि से यह छतरी विशेष महत्व रखती है। इस छतरी के चित्र प्राचीनतम हैं। इसमें रग और काली स्याही में हिजरी 1114 सन् 1701 का फारसी अभिलेख है।

3 लालसिंह की छतरी

माडण की लड़ाई में नवलगढ के प्रतिष्ठाता व नवलसिंह जी के वीर पुत्र लालसिंह ने वीरगति पाई थी। उन्होंने युद्ध में महान कौशल और वीरता का परिचय दिया था। उनके

स्मारक सूचक माडण में उस महान योद्धा की छतरी बनाई गई थी जो आज भी उस बहादुर की गौरव गाथा सुना रही है।

झुंझुनू की भूत बावडी

इस बावड़ी का निर्माण शेखावत काल में हुआ। शार्दूल सिंह की रानी मेडतनी ने 1742 ई में इसका निर्माण करवाया था। इस बावड़ी के निकट ही एक कुआ है। इस बावड़ी में नीचे तक जाने के लिए 159 सीढिया है। इसकी दीवारें बहुत ऊची हैं। दीवारों की चौड़ाई 4 फुट है। उसके सामने मुख्य दरवाजा है जिसकी बनावट तिवारे जैसी है। इसकी छत डाट से बनी है। बावडी गहरी है इस कारण इसका नाम भूत बावडी पड़ गया। कुए का पानी तथा बावडी के पानी दोनों की नाल मिली हुई हे। बावड़ी में पानी स्पष्ट दिखाई देता है। 20-30 सीढियों के बाद एक झौंपडा दे दिया है। इसके अन्दर के हिस्से में बारह दरिया बनी हुई हैं जो उस समय के प्रवाह के साथ बन्द हो गई हैं। इस प्रकार झुन्झुनू की यह भूत बावडी स्थापत्य कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसकी लम्बाई करीब 17 मीटर और गहराई करीब 32 मीटर है।

खेतानों की बावड़ी, तुलस्योनों की बावड़ी आदि झुन्झुनूं की प्रमुख थीं। बावड़ी के पानी में गन्धक का मिश्रण बताया जाता है। इसके जल में स्नान करने से दाद, खुजली जैसे रोग मिट जाते हैं।

फतेहपुर की बावडी

एक शिलालेख 15 वीं सदी का मिला है, जिसके अनुसार शेखावत काल से पहले की दूसरी महत्वपूर्ण बावडी है। यह झुन्झुनू की भूत बावडी से भी बडी है। इसमें दूर-दूर तक बारहदरी (कोठरियाँ) बनी हुई हैं। यह भूत बावडी से अधिक गहरी तथा लम्बी है। इसकी बनावट भी करीब-करीब वैसी ही है। फतेहपुर में बाडीगेट का नाम इसी के कारण पड़ा है। इस बावड़ी को नवाब असफ खाँ ने बनवाया था।

नवलगढ की बावडी

यह बावडी छोटी है तथा लम्बाई भी कम है। यह ज्यादा गहरी भी नही है। नवलगढ़ का पश्चिमी द्वार बावड़ी दरवाजे के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा अन्य छोटी-छोटी बावडिया अन्य स्थानों पर भी हैं। जो समय के साथ मिट्टी से भर गई हैं और इनके अब अवशेष मात्र रह गये हैं।

चेतनदास की बावडी

लोहार्गल में चेतनदास की बावडी इस काल की सबसे बडी बावड़ियों में से एक है।

इसकी गहराई कम है तथा लम्बाई अधिक है।

दरगाह (मस्जिद)

1 झुन्झुनू में शेखावत काल की दरगाह कमरुद्दीन शाह की दरगाह है जो मुगल हिन्दू-शैली के सम्मिश्रण से बनी हुई है। इसका मुख्य द्वार बुलन्द दरवाजे की भांति विशाल और ऊँचा है यहा इसकी बहुत अधिक मान्यता है। कमरुद्दीन एक बहुत बड़े सन्त थे। जो प्रारम्भ में बिसाऊ में रहते थे तत्पश्चात यहाँ आकर मृत्यु को प्राप्त हो गए। अत बिसाऊ के शासक श्यामसिह ने इस दरगाह का निर्माण करवाया था। इसका विशाल मुख्य द्वार राजपूत शैली पर आधारित है।

2 रजिया मस्जिद—मुवालो के मोहल्ले में स्थित यह मस्जिद सुल्तान रजिया के नाम से बनी है। इसे भी आधुनिक रूप दे दिया गया है।

3 सिघाना की दरगाह 500 वर्ष पुरानी है।

4 मुबारक शहीद की दरगाह —यह झुन्झुनू में पीपली चौक के पास है और 400 वर्ष प्राचीन है। इस प्रकार झुन्झुनू की ये दरगाहें प्राचीन स्मृति लिये हुए कायम हैं।

5 नरहद (मूर्धन्य विद्वान)

शेखावाटी के प्रसिद्ध तालाब-बाव

1. पन्नालाल शाह का तालाब-खेतडी

शेखावाटी में खेतडी के इस शानदार तालाब को शाह जी ने सन् 1870 में एक लाख रूपये की लागत से बनवाया था। इसके चारों और ऊँची-ऊँची दीवारें, स्त्रियों और पुरूषों के अलग-अलग घाट, परिभ्रमण के लिये चौतरफा पक्का फर्श, रहने के लिये कई बाराहदरी तथा तिबारिया बनी हुई हैं। राजा अजीतसिंह जी ने इस तालाब तक एक पक्की नाली बनवादी थी जिससे वर्षा ऋतु में पहाडी का पानी ढल कर तालाब को भर देता था (खेद है अब हिन्दुस्तान कापर लिमिटेड ने तालाब में पानी आने के इस स्रोत को समूल नष्ट कर दिया है और फल हुआ कि तालाब में पानी नहीं आता)। यहा पर हरिदास जी का प्रसिद्ध मंदिर भी है।

तालाब का क्षेत्रफल विस्तृत होने के अतिरिक्त इसकी बनावट में कई एक खूबिया भी जो अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। सबसे पहले इस तालाब की बनावट इस प्रकार की है कि इसका जनाना घाट ढूढने पर भी सहज ही नहीं मिलता। यह कृति मुगलकालीन होने से पर्दा प्रथा का पौषक रही है और जनानाघाट इसीलिये पर्दे में है। दूसरे जनाना घाट इस प्रकार से बनाये गये हैं कि तालाब की पूरी भराई हो जाने पर भी स्त्री के कुचों से ऊपर पानी नहीं आयेगा और वह आराम से निडर होकर स्नान कर सकती हैं।

तालाब की घाटी पर प्राचीन कलात्मक मूर्तिया चिपकी हुई हैं जिन्हें देख कर यहाँ की वास्तुकला की प्राचीनता अनुभव की जा सकती है इतना कलात्मक और चित्ताकर्षक तालाब शेखावाटी में मिलना दुर्लभ है। इस महान कार्य के लिये श्री शाह सदैव याद किये जावेंगे। और यह तालाब उनका महान स्मारक बना रहेगा।

2. समस तालाब झुंझुनू

यह भव्य तथा कलात्मक तालाब झुंझुनू के नबाव समसखा ने अपने नाम से झुंझुनू से 4 मील पूर्व में समसपुर नाम का एक गांव बसाया और पहाडी के नीचे समस तालाब बनवाया था। यह तालाब ऐसी जगह बना हुआ है जहाँ का वातावरण मनोहारी है। इसके आसपास हरे भरे वृक्ष दर्शकों को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। यह तालाब सुरक्षा की दृष्टि से बडा उपयोगी है। तालाब के पास तिबारे व छतरिया मुगल शैली की हैं। तालाब की दीवारें मजबूत हैं और उनकी सजावट में मुगल शैली की स्पष्ट झलक मिलती है। स्थापत्य कला की दृष्टि से यह तालाब शेखावाटी के प्रमुख तालावों में से एक हैं और आज भी अपने निर्माता समसखा की याद जनता में ताजा किये हुये है। आदमी आते हैं और चले जाते हैं लेकिन उनके द्वारा किये गये कार्य हमारे नवनयुवकों और देश प्रेमियों के जीवन को नई प्रेरणा देते हैं और देते रहेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं।

बंध अजीतसागर

स्वनामधन्य राजा अजीतसिंह जी बहादुर खेतड़ी के इतिहास में एक महान विकासशील, विचारशील और कल्याणकारी शासक हुये हैं। उन्होंने सर्वप्रथम सिचाई द्वारा खेती करने के महत्व को समझा और अपनी योजना को मूर्त रूप दिया। कस्बा खेतड़ी जो एक पूर्णतया पथरीला और पहाड़ी स्थान है जहा पानी की सतह अत्यत गहरी है और पीने का पानी भी सहज ही सुलभ नहीं वहाँ कस्बे के चारो दिशाओं में छोटे-छोटे बाध बँधवाये जिनमें संचित/एकत्रित पानी झरने बन कर कुओं में आये और पानी की सतह को बहुत ऊचा किया यहा तक कि कस्बे में एक नदी बारह महीनों बहा करती थी और तटवर्ती कुओं में पानी की सतह 7-8 हाथ की गहराई तक आ गई जो कि निकटवर्ती क्षेत्र के कुओं के 60-70 हाथ की गहराई के मुकाबिले में एक महत्वपूर्ण प्रगति थी।

उन्हीं राजा अजीतसिंह जी ने खेतडी से 7 मील पूर्व में एक बाध बनवाया जिससे नहरें निकाली गई और जो सभीपवर्ती क्षेत्र को सींचती थी। इस बध का नाम अजीतसागर बंध है। इसका महत्व इसलिये अत्यधिक है कि उस युग में इस प्रकार बंध बाध कर सिचाई करने की योजना जयपुर रियासत में भी एक दो बाधो को छोड कर अन्यत्र नहीं थी।

यह स्थान दर्शनीय और पर्यटकों का आकर्षण का केन्द्र है, और अपनी सिचाई योजना के लिये प्रसिद्ध है। बाध काफी लबा चौड़ा है और पूरा भराव लगभग 40 फुट का है।

शेखावाटी के मन्दिर

2 मन्दिर:—शेखावाटी के भू भाग पर बने हुए अनेक मन्दिर प्रसिद्ध है। हर्ष, जीणमाता, मनसादेवी, शाकम्बरी, गोपीनाथ जी, नवलगढ बिसाऊ, खेतड़ी, पिलानी, सीकर, खण्डेला, सिघाना आदि स्थानों के मन्दिर देखे जा सकते हैं। अधिकाश मन्दिर रघुनाथ जी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हैं। जिसमें भगवान श्रीराम की स्थापना की गई है। राधाकृष्ण के नाम से जो मन्दिर है उनमें भगवान श्रीकृष्ण और राधिका की मूर्तिया विराजमान हैं। इनके अलावा लगभग प्रत्येक मन्दिर में शिवलिग स्थापित किया गया है। अपने इष्ट के रूप में शक्ति की प्रतीक दुर्गा के मन्दिर स्थान-स्थान पर देखने को मिलते हैं जो मनसा देवी के नाम से विख्यात हैं।

मन्दिरों की विशेषतायें —

ऊँच्चे चबूतरे पर स्थित भीतर कलात्मक चित्र और भीतरी भाग में मूर्ति की प्रतिष्ठापन, रचना गुम्बदाकार, ऊपर कलश नुमा गोल शक्ल का सुनहरी रग का पीतल का शिखरवाद जिस पर ध्वजा हेतु कलमी निकली होती हैं। ये इन मन्दिरों की सामान्य विशेषताएँ हैं। इस प्रकार हिन्दू शैली पर निर्मित ये मन्दिर स्थापत्य कला के अद्भूत नमूने हैं। प्रत्येक मन्दिर के नीचे जमीनों के निशुल्क पट्टे दिये हुए हैं। ये पट्टे उसी इलाके के ठिकानेदार द्वार

जारी किये जाते थे जो आज तक चले आ रहे हैं और कानूनन वैध हैं। मन्दिर की सेवा करने वाले पूजारी का जीवन बसर इन्हीं जमीनों से होता था शेखावाटी में स्थित कुछ मन्दिरों का विवरण इस प्रकार है—

(1) **जीण माता**:—सीकर से 16 कि. मी. दूर जीण माता का भव्य मन्दिर है। यह मन्दिर 10 वीं शताब्दी का बना हुआ है। यह मन्दिर शेखावत शासकों के लिए इष्टा देवी के रूप में मान्य रहा है। मन्दिर के पुजारी पाराशर गोत्रीय ब्राह्मण और साभरिया खाप चौहान राजपूत हैं।

राव शेखा ने यहीं पर खेजडे के पेड के नीचे अपने प्राण त्यागे थे। मन्दिर की भितियों पर तांत्रिकों एव बाम मार्गियों की प्रतिमायें चिपकी हुई हैं। यहां देवी की अष्टभुजा वाली बड़ी प्रतिमा है। इस मन्दिर की बहुत अधिक मान्यता है। यहा अधिकतर बच्चों के जड़ूले उतरवाने तथा जातृ देने लोग बडी सख्या में आते हैं। यहा प्रतिवर्ष चैत्र एव आश्विन के नवरात्रों में मेले लगते हैं।

यहा मंदिर में सवामणिया की जाती हैं। और छत्र, झारी, नौबतें, कलश भेंट स्वरूप चढ़ाये जाते हैं।

(2) **रामदेव जी का मन्दिर**--नवलगढ कस्बे में स्थित रामदेव जी का मन्दिर आसपास के क्षेत्र में प्रसिद्ध है। ठा. नवलसिह जी द्वारा शेखावत काल में मन्दिर की प्रतिस्थापना करवाई गई थी। तभी से रामदेव जी लोक देवता के रूप में माने जाते रहे हैं। सेक्सरिया हवेली के पास खुले स्थान में प्रतिवर्ष भादों सुदी 9 को यहा विशाल मेला लगता है। बच्चों के जड़ूले तथा जात भी दी जाती है। इस लक्खी मेले में ग्रामीण बड़ी सख्या में नाचते गाते यहा आते हैं। धर्मनिरपेक्ष राज्य का सही स्वरूप इस मेले में देखने को मिलता है। इस रामदेव जी के मन्दिर को सिद्ध पीठ कहा जाता है।

शेखावाटी के प्रमुख मन्दिर

(1) **गोपीनाथ जी का प्राचीन मन्दिर झुन्झुनू**—झुन्झुनूं शहर के नौ महला क्षेत्र में गोपीनाथ जी का प्राचीन व ऐतिहासिक मन्दिर स्थापित है। यह मन्दिर नौ महल क्षेत्र में स्थित है। इन महलों के अपने अपने इतिहास रहे हैं जो विभिन्न शासकों की शान शौकत की याद दिलाते हैं। वैसे तो वो दिन चले गये और उन लोगों की कहानी भी अतीत के दास्तान मात्र रह गयी हैं। लेकिन आज भी इन महलों के रगों में यहा के निवासियों के मन रमें हुए हैं।

वि. स. 1868 में ठाकुर श्याम सिह जी द्वारा श्री गोपीनाथ जी की प्रतिमा को स्थापित किया गया था। मन्दिर के बाहरी भाग में शिवजी और हनुमान जी के स्थान बने हुए हैं।

बध अजीतसागर

स्वनामधन्य राजा अजीतसिंह जी बहादुर खेतडी के इतिहास में एक महान विकासशील, विचारशील और कल्याणकारी शासक हुये हैं। उन्होंने सर्वप्रथम सिचाई द्वारा खेती करने के महत्व को समझा और अपनी योजना को मूर्त रूप दिया। कस्बा खेतड़ी जो एक पूर्णतया पथरीला और पहाडी स्थान है जहा पानी की सतह अत्यंत गहरी है और पीने का पानी भी सहज ही सुलभ नहीं वहाँ कस्बे के चारों दिशाओं में छोटे-छोटे बाध बँधवाये जिनमें सचित/एकत्रित पानी झरने बन कर कुओं में आये और पानी की सतह को बहुत ऊचा किया यहा तक कि कस्बे में एक नदी बारह महीनों बहा करती थी और तटवर्ती कुओं में पानी की सतह 7 8 हाथ की गहराई तक आ गई जो कि निकटवर्ती क्षेत्र के कुओं के 60-70 हाथ की गहराई के मुकाबिले में एक महत्वपूर्ण प्रगति थी।

उन्हीं राजा अजीतसिंह जी ने खेतडी से 7 मील पूर्व में एक बाध बनवाया जिससे नहरें निकाली गई और जो समीपवर्ती क्षेत्र को सींचती थी। इस बध का नाम अजीतसागर बध है। इसका महत्व इसलिये अत्यधिक है कि उस युग में इस प्रकार बध बाध कर सिचाई करने की योजना जयपुर रियासत में भी एक दो बाधो को छोड कर अन्यत्र नहीं थी।

यह स्थान दर्शनीय और पर्यटकों का आकर्षण का केन्द्र है, और अपनी सिचाई योजना के लिये प्रसिद्ध है। बाध काफी लबा चौडा है और पूरा भराव लगभग 40 फुट का है।

शेखावाटी के मन्दिर

2 मन्दिर —शेखावाटी के भू भाग पर बने हुए अनेक मन्दिर प्रसिद्ध है। हर्ष, जीणमाता, मनसादेवी, शाकम्बरी, गोपीनाथ जी, नवलगढ बिसाऊ, खेतडी, पिलानी, सीकर, खण्डेला, सिघाना आदि स्थानों के मन्दिर देखे जा सकते हैं। अधिकाश मन्दिर रघुनाथ जी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हैं। जिसमें भगवान श्रीराम की स्थापना की गई है। राधाकृष्ण के नाम से जो मन्दिर है उनमें भगवान श्रीकृष्ण और राधिका की मूर्तिया विराजमान हैं। इनके अलावा लगभग प्रत्येक मन्दिर में शिवलिंग स्थापित किया गया है। अपने इष्ट के रूप में शक्ति की प्रतीक दुर्गा के मन्दिर स्थान-स्थान पर देखने को मिलते हैं जो मनसा देवी के नाम से विख्यात हैं।

मन्दिरों की विशेषतायें —

ऊँच्चे चबूतरे पर स्थित भीतर कलात्मक चित्र और भीतरी भाग में मूर्ति की प्रतिष्ठापन, रचना गुम्बदाकार, ऊपर कलश नुमा गोल शक्ल का सुनहरी रग का पीतल का शिखरवाद जिस पर ध्वजा हेतु कलमी निकली होती हैं। ये इन मन्दिरों की सामान्य विशेषताऐं हैं। इस प्रकार हिन्दू शैली पर निर्मित ये मन्दिर स्थापत्य कला के अद्भुत नमूने हैं। प्रत्येक मन्दिर के नीचे जमीनों के निशुल्क पट्टे दिये हुए हैं। ये पट्टे उसी इलाके के ठिकानेदार द्वार

जारी किये जाते थे जो आज तक चले आ रहे हैं और कानूनन वैध हैं। मन्दिर की सेवा करने वाले पूजारी का जीवन बसर इन्हीं जमीनों से होता था शेखावाटी में स्थित कुछ मन्दिरों का विवरण इस प्रकार है—

(1) **जीण माता**—सीकर से 16 कि मी दूर जीण माता का भव्य मन्दिर है। यह मन्दिर 10 वीं शताब्दी का बना हुआ हैं। यह मन्दिर शेखावत शासकों के लिए इष्टा देवी के रूप में मान्य रहा है। मन्दिर के पुजारी पाराशर गोत्रीय ब्राह्मण और सामरिया खाप चौहान राजपूत हैं।

राव शेखा ने यहीं पर खेजडे के पेड के नीचे अपने प्राण त्यागे थे। मन्दिर की भितियों पर तान्त्रिकों एव बाम मार्गियों की प्रतिमायें चिपकी हुई हैं। यहा देवी की अष्टभुजा वाली बड़ी प्रतिमा है। इस मन्दिर की बहुत अधिक मान्यता है। यहा अधिकतर बच्चों के जड़ूले उतरवाने तथा जात् देने लोग बडी सख्या में आते हैं। यहा प्रतिवर्ष चैत्र एव आश्विन के नवरात्रों में मेले लगते हैं।

यहा मंदिर में सवामाणिया की जाती हैं। और छत्र, झारी, नौबतें, कलश भेंट स्वरूप चढाये जाते हैं।

(2) **रामदेव जी का मन्दिर**—नवलगढ कस्बे में स्थित रामदेव जी का मन्दिर आसपास के क्षेत्र में प्रसिद्ध है। ठा नवलसिह जी द्वारा शेखावत काल में मन्दिर की प्रतिस्थापना करवाई गई थी। तभी से रामदेव जी लोक देवता के रूप में माने जाते रहे हैं। सेवसरिया हवेली के पास खुले स्थान में प्रतिवर्ष भादों सुदी 9 को यहा विशाल मेला लगता है। बच्चों के जड़ूले तथा जात भी दी जाती है। इस लक्खी मेले में ग्रामीण बडी सख्या में नाचते गाते यहा आते हैं। धर्मनिरपेक्ष राज्य का सही स्वरूप इस मेले में देखने को मिलता है। इस रामदेव जी के मन्दिर को सिद्ध पीठ कहा जाता है।

शेखावाटी के प्रमुख मन्दिर

(1) **गोपीनाथ जी का प्राचीन मन्दिर झुझुनू**—झुझुनू शहर के नौ महला क्षेत्र में गोपीनाथ जी का प्राचीन व ऐतिहासिक मन्दिर स्थापित है। यह मन्दिर नौ महल क्षेत्र में स्थित है। इन महलों के अपने अपने इतिहास रहे हैं जो विभिन्न शासकों की शान शौकत की याद दिलाते हैं। वैसे तो वो दिन चले गये और उन लोगों की कहानी भी अतीत के दास्तान मात्र रह गयी हैं। लेकिन आज भी इन महलों के रगों में यहा के निवासियों के मन रमें हुए हैं।

वि स 1868 में ठाकुर श्याम सिह जी द्वारा श्री गोपीनाथ जी की प्रतिमा को स्थापित किया गया था। मन्दिर के बाहरी भाग में शिवजी और हनुमान जी के स्थान बने हुए हैं।

और भीतरी भाग में प्राचीन आकर्षक भीति चित्र बने हुए हैं। स्व. गनेश नारायण जी मन्दिर के प्रथम पुजारी थे।

विशेषकर राजपूतों में गोपीनाथ जी के प्रति विशेष श्रद्धा व भक्ति रही है और शेखावाटी में इसकी उल्लेखनीय मान्यता थी। मन्दिर के निकट ही देवी जम्वाई जी का मन्दिर भी है जिसके शेखावत उपासक रहे है।

पहले गोपीनाथ जी के मन्दिर को पचपानों की तरफ से योग के लिए जमीन जागीर भेंट की गई थी और उससे मन्दिर की देख रेख होती थी। नौ महलों में पहले नवाब फिर शेखावत राजपूत तथा राज धराने के लोग दरबारी रहा करते थे। हर हिन्दू जाति में विवाह, शादियों, जात जडूलो, मात, छूछक, जलवा आदि अवसरों पर मन्दिर की भेंट निकाली जाती थी। ठिकानों की तरफ से मन्दिर की लाग बधी हुई थी। उस जमाने में मन्दिर का बडा महत्व था और गोपीनाथ की सेवा करने वाले पुजारियों को बडी श्रदा से देखा जाता था। वैसे देखे तो यह मन्दिर शेखावाटी के ऐतिहासिक मन्दिरों की पंक्ति में आता है। आजकल मन्दिर, स्कूल व धर्मशाला बनाना कोई नई बात नही लेकिन कुछ ऐसे स्थान होते हैं जो अपना इतिहास लिये हुए होते हैं और अतीत की पुनरावृति करते हैं। यह मन्दिर न केवल धार्मिक स्थल हैं वरन् जन जीवन की आस्था के केन्द्र भी हैं।

(2) प्राचीन जैन मन्दिर "झुझुनु"—झुझुनू शहर के चोमालों के मोहल्ले में श्वेताम्बर जैन मन्दिर में भगवान महावीर की एक आकर्षक प्रतिमा स्थापित है। इसको एक काच के कक्ष में विम्बायित किया गया है। बिजली की रोशनी में यह एक अनूठा देदीप्यमान दृश्य उपस्थित करता है।

कोई बीस सीढियाँ चढकर मन्दिर के मुख्य भाग में पहुचने पर लगता है जैसे मन्दिर नहीं बल्कि कोई साधना स्थल है। पहले यह मन्दिर छोटे रूप में था बाद में इसका विस्तार कर दिया गया।

जैन समाज द्वारा निर्मित इस मन्दिर का अन्दरग श्वेत दर्पण से जडित और रग बिरगा है। जहा जैन धर्म के 22 तीर्थंकर नेमीनाथ जी के जीवन की गाथा चित्रित की गई है। यहा 16वें शीथाकर शान्तीनाथ स्वामी की 1031 में निर्मित प्रतिमा भी स्थापित है। वहाँ प्रथम तीर्थंकर कृपादेव की प्रतिमा एक अलग कक्ष में स्थापित की गई है। मन्दिर में श्री महावीर जी की भी प्रतिमा स्थापित है।

कहते हैं महावीर जी की प्रतिमा के तीन स्वरूप देखने में आते हैं। सुबहबाल स्वरूप में दोपहर में उदास प्रकृति लिए हुए और सायकाल तेजस्विता युक्त दिखाई देती है। विशेष बात यह है कि इस मन्दिर में भगवान महावीर के श्वेताम्बर एव दिगाम्बर दोनों ही रूपों की प्रतिमायें में स्थापित की गई हैं।

मनुष्य को ईश्वर या शक्ति से भी अधिक महत्व देने में महावीर स्वामी की भूमिका मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में कम कारगर सिद्ध नहीं हुई बल्कि उनके अपरिग्रह, सत्य, अहिंसा और सरस मुक्ति के सिद्धान्त को जनता का प्रबल समर्थन भी मिला। जैन धर्मावलम्बियों ने देश के विशाल क्षेत्र में अनेकों स्थलों पर महावीर स्वामी की प्रतिमायें स्थापित करके जन मानस को उनके सिद्धान्तों की तरफ आकर्षक किया है।

यह जैन मन्दिर न सिर्फ वास्तुकला व शिल्पकला की दृष्टि से इतना महत्वपूर्ण तथा आकर्षक है बल्कि अपनी धार्मिक जन आस्था तथा श्रद्धा के लिए भी विख्यात हैं।

झुझुनू के जैन मन्दिरों का नाम शेखावाटी के प्राचीन जैन मन्दिरों की श्रृखला में है। और इस मन्दिर में जैन धर्मावलम्वियों के साथ सभी जातियों की आस्था है।

(3) **पिलानी का सरस्वती मन्दिर**—पिलानी का सरस्वती मन्दिर शेखावाटी का शानदार तथा कलात्मक भव्य मन्दिर है। यह मन्दिर चिडावा से 15 कि मी दूरी परें स्थित है। इस कलात्मक एव मन भावन नगरी में भगवती सरस्वती की आराधना के लिए मनोरम श्री शारदा पीठ की रचना की है। इस मन्दिर के निर्माता लक्ष्मी और सरस्वती के वरद् पुत्र प्रसिद्ध समाज सेदी व प्रमुख उद्योग पति श्री घनश्याम दास बिडला हैं। यह मनोहारी व भव्य सरस्वती मन्दिर शुभ्रवर्ण सगमरमर की शीलाओं से अत्यन्त कलापूर्ण शैली से विपुल धन राशि से निर्मित किया गया है। इस मन्दिर की प्रमुख प्रतिमा मा सरस्वती की है। मन्दिर के सभा मडप, द्वार, स्तम्भ, छत, शिल्प कला के उत्तम नमूने हैं।

मन्दिर में एक प्रशस्त चित्रावली का भी कुशल शिल्पियों द्वारा अकन करवाया गया है। इन सबका दर्शन करके आने वाले दर्शनार्थियों को हृदय आनन्द से भर जाता है। इस चित्रावली में श्री गणेश राम, कृष्ण, शेषशाभी श्री विष्णु, शिव, पार्वती, सूर्यदेव, ब्रह्म, वामनावतार, विश्वनाथ, वेदव्यास, बृहस्पति, वालमिकि, तुकाराम, मनु, पाणिति, पातञ्जलो, कौटिल्य, मालवीय जी, पालीदास, दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, तिलक, रामानुचार्य, राजेन्द्रनाथ, धनवन्तरी कार्तिकेय, रमण, लुईसपामघर, थामस एडिसन, लेनिन महावीर जैन, न्यूटल, शकराचार्य, चैतन्य महाप्रभु, तुलसीदास अब्राहीम लिकन, नटराज, गुरु नानक, बुद्धदेव, श्री बलदेव दास बिडला, श्री युगल किशोर बिडला, श्री रामेश्वर दास, श्री घनश्याम दास जी, आदि नाना देवता मय महर्षि आचार्य, कवि, शास्त्रकार, वैज्ञानिक देश सेवक, सभी विद्वान इसके अलावा मन्दिर में कृष्णलीला तथा शीतों प्रदेश विशेष उल्लेखनीय हैं। इस मन्दिर की मूर्तियों को देखकर दर्शक मुग्ध हो जाते हैं। ये पूर्तियों हाव भाव से परिपूर्ण हैं।

मन्दिर का स्वच्छ चकमता हुआ फर्श, मोहक भक्तिमय वातावरण में आकर दर्शक बाहरी जगत को भूल जाता है। और एक ऐसे अनोखे आनन्द को अनुभूति होती है जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

इस मन्दिर की महिमा का गान तथा उसके सौदर्य एव कला की प्रशसा देश तथा विदेशी सैलानियों ने भी की है। पिलानी की यात्रा सरस्वती मन्दिर को देखने से ही पूरी मानी जाती है। मन्दिर के आस-पास का वातावरण बडा पवित्र और नेत्ररजक है यहा आकर दर्शक उत्कृष्ट वास्तुकला को देखकर अपनी सुध-बुधे खो बैठते हैं। यह मन्दिर आस्था के लिए इतना महत्वपूर्ण नही हैं जितना कला की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

जब तक पिलानी का मन्दिर विद्यमान रहेगा इसको बनाने वाले श्री घनश्यामदास बिडला का नाम इसके साथ अमर बना रहेगा।
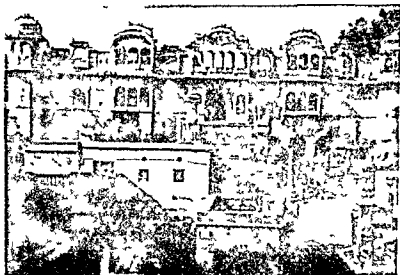
(4) घुडावत जी का बडा मन्दिर खेतडी.—खेतडी के राजा बख्तावर सिह जी को द्वितीय राज महर्षि घुडसवत जी ने खेतड़ी में सवत 1814 में एक उत्तम कलात्मक, भव्य तथा विशाल मन्दिर बनवाया था, जो खेतड़ी में बडा मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी प्रतिष्ठा 1814 में माघ क्ल 5 के दिन हुई थी, मन्दिर की देख रेख के लिए ठिकाने की तरफ से लाग बधी हुई थी, हर हिन्दू जाति पर विवाह शादियों, जात जडूलो, भात, छूछक, जलवा आदि अवसरों पर मन्दिर की में निकाली निकासी जाती थी, उस जमाने में मंदिरों का बडा महत्व था मन्दिर की पूजा करने वाले पुजारियों को बडी श्रद्धा के साथ देखा जाता था।

शहर के मध्य बना यह भव्य मन्दिर आज भी भक्ति एव श्रद्धा का केन्द्र है। मन्दिर का द्वार तथा मन्दिर स्थापत्य कला का अनूठा नमूना बन पडा है। मन्दिर की ऊंची दीवारें गज की भांति मजबूत हैं। यहा पूजन सामग्री के बर्तन तथा छत्र भी जो चादी के बने हुए

ये मन्दिर की सीढिया चढकर जब दर्शक विशाल एव भव्य मन्दिर में प्रवेश करता है जिसमें आकर्षक और गरिमापूर्ण मूर्तियों को देखकर अनायास ही दर्शक मत्र मुग्ध हो जाते हैं। क्षण भर के लिए लगता है जैसे सचमुच ही भगवान के दर्शन हो रहे हैं। भव्य सिहासन पर प्रतिमा प्रतिष्ठित है। मन्दिर का विशाल शिखर जहा ध्वजादड लगा हुआ है, मन्दिर में हनुमान जी आदि अन्य देवताओं की कुणकाये हैं। मन्दिर के बीच भीतरी परिक्रमा है। यों तो सभी मन्दिरों में नित्य सेवा पूजा होती है। किन्तु प्रात काल धूप सेवन होता हैं। जिससे मन्दिर के चारों और पवित्र गध व्याप्त हो जाती है। इसके बाद पूजन आरम्भ होता है। करीब दो मिनट तक आरती होती है। सायकाल भी आरती भजन कीर्तन का कार्यक्रम चलता रहता है।

यहा भटियानी जी का मन्दिर आदि उल्लेखनीय है। कला की दृष्टि से तो यह मन्दिर इतना उल्लेखनीय नहीं जितना आस्था की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यहाँ नगरवासी भगवान के दर्शन करने आते हैं और श्रद्धा से पुष्प चढाकर अपने को धन्य समझते हैं।

इस मुख्य मन्दिर के अतिरिक्त यहा भटिया जी का मन्दिर भी है जो 1882 में बनाया गया था जो बख्तावर सिह जी की द्वितीय राज महिषी थी। इसके अलावा हरिदास जी का मन्दिर भी उल्लेखनीय है। जहा श्री मक्खनदास जी प्रसिद्ध सन्त साधु हुए है। जो खेतडी में ही नहीं अपनी त्याग, तपस्या व साधना से जन-जन के हृदय में समाये हुए हैं।

(5) भव्य विशाल रानी सती मन्दिर झझनू—झुझनू में बने रानी सती मन्दिर का सिहद्वार राजस्थानी शिल्पकला का अप्रतिम उदाहरण है। राणी सती जैसा भव्य व विशाल मन्दिर न सिर्फ राजस्थान में बल्कि पूरे देश में मिलना दुर्लभ है।

डेढ किलोमिटर क्षेत्र में बने इस मन्दिर में निरन्तर विकास कार्य चलते-रहते है। तीन चौक के इस मन्दिर में पहले व दूसरे चौक में 173 और तीसरे चौक में 74 कक्ष बने है जो यात्रियों की सुविधा के लिए हैं।

मन्दिर परिसर में श्री हनुमान जी की एक विशाल प्रतिमा स्थापित है जिसके दोनों और विशाल शिवालय बने हुए हैं। मन्दिर क्षेत्र में ही बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय एव माटेसरी स्कूल, छात्रावास, पुस्तकालय, बैंक, डाकघर, होमियोपैथिक औषधालय और दुकानें विद्युत तथा पेय जल आदि की सुविधायें हैं। यह मन्दिर उन प्रवासी राजस्थानी की धार्मिक आस्था का केन्द्र है जो कभी शेखावाटी में जन्में और जीविकोपार्जन के लिए बाहर चले गये और जो यहा वहा रच बस गये। फिर कभी लौटे तो भौगोलिक सस्कारों या जात जडूलों के लिए लेकिन वे जहा भी रहें, इन्होंने अपनी जन्म भूमि को भुलाया नही, यहा प्रतिदिन हजारों, दर्शनार्थी आते हैं और स्तुति के स्वरों में आस्था की गंध बहती रहती है।

यह विशाल मन्दिर जो अपनी उत्कृष्ट वास्तुकला के लिए विख्यात है, शिल्पकला के जितने उत्कृष्ट नमूने यहा दिखाई देते हैं वैसे शायद ही अन्य कहीं हो। वास्तव में यह मन्दिर वास्तुकला का अनूठा नगीना ही नहीं, भारतीय संस्कृति का गौरव भी है। मन्दिर में विशालकाय घंटे भी है। आरती के समय इनसे निकलती दिव्य ध्वनि से सारा वातावरण गूंजता रहता है। वस्तुत यह मन्दिर अपनी विशालता और कलात्मकता की दृष्टि से अनोखा है।

मन्दिर के प्रवेश द्वार पर ही शहनाई की मधुर ध्वनि, वहा का शान्त और पवित्र वातावरण, मन्दिर का सुन्दर शिखर बन्ध हमारे दर्शकों के मन को मोह लेता है।

मन्दिर में शाम सवेरे जाने वालों की कतार लगी रहती है। मन्दिर में दर्शनों के समय जो भक्तिमय वातावरण बनता है वह देखते ही बनता है। मन्दिर के आस-पास का वातावरण बडा पवित्र तथा मन मोहक है। मन्दिर के सामने सेठ मोतीलाल कालेज तथा उद्यान म विभिन्न प्रकार के हरे-भरे पौधे सचमुच एक अनोखा दृश्य उपस्थित करते हैं।

आस्था तथा आध्यात्मिक दृष्टि से चाहे इस मन्दिर की इतनी ख्याति नहीं रही हो, परन्तु कला की दृष्टि से यह मन्दिर उल्लेखनीय है।
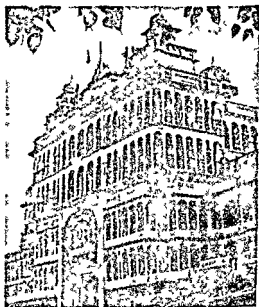
रैवासा के जैन मंदिर

सीकर से लगभग 16 किलोमीटर दूरी पर स्थित यह रैवासा ग्राम आदिनाथ के जैन मंदिर के लिये प्रसिद्ध है। यहा प्रचलित एक किवदन्ती के अनुसार कुछ यक्ष इस मंदिर

के लिये अन्यत्र उड़े जा रहे थे। परन्तु जब वे इस गाव के ऊपर से गुजर रहे थे तब यत्रस्थ एक सन्त ने उन्हें कील दिया और उन यक्षों को यह मंदिर यहीं स्थापित करना पडा, किन्तु यहा प्राप्त सवत 1661 के एक शिलालेख के अनुसार इस मंदिर का निर्माण साह जीतमल एव नथमल ने करवाया जो महाराजाधिराज रायसल के मत्री श्री देवीदास के पुत्र थे।

बिना चूना अथवा सीमेन्ट का उपयोग किये सम्पूर्ण रूप से पत्थर का बना यह ऐतिहासिक मंदिर विशाल एव कलापूर्ण रूपेण 100 से अधिक पत्थर के खभो पर खडा है और ऐसा प्रतीत होता है कि चारों ओर की दीवारों का निर्माण बाद में कर इसे मंदिर का रूप दिया होगा। उसका निर्माण विशुद्ध ज्योमिति के आधार पर हुआ है और खभों की स्थापना इस कोण से की गई है कि साधारण दर्शक के लिये इन खभों को गिन लेना आसान नहीं होता खभे कभी दो बढ जाते हैं तो कभी चार घट जाते हैं और विशेष कर इसी कौतुक से प्रभावित होकर दर्शक इन खभों को गिनने प्राय इस देवालय में दर्शनार्थ आते रहते हैं।

बालाजी का मन्दिर-सालासर

श्री राम पायक हनुमान जी का यह मन्दिर राजस्थान के चूरू जिले में है। गाव का नाम सालासर है। इसलिए "सालासर वाले बालाजी के नाम से लोक विख्यात है। बालाजी की यह प्रतिमा बडी ही प्रभावशाली है। यह प्रतिमा दाढी मूँछ युक्त है। मन्दिर काफी बडा है। चारों ओर यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालायें बनी हुई हैं। जिसमें हजारों यात्री एक साथ ठहर सकते हैं। काफी दूर-दूर से यात्री अपनी मनोकामनायें लेकर आते हैं और इच्छित फल पाते हैं। यहा सेवा पूजा तथा आय व्यय सम्बन्धी सभी अधिकार स्थानीय दायमा ब्राह्मणों को हैं जो कि मोहनदास जी के भाजें उदय राम जी के वशज हैं।

मोहनदास जी ही इस मन्दिर के सस्थापक थे। यह बडे वचनसिद्ध महात्मा थे। असल में मोहनदास जी रूपयाणी (जो कि सालासर से 16 मील दूर है) के रहने वाले थे। इनके पिता श्री का नाम लच्छीराम जी था। लच्छी राम जी के छ पुत्र एव एक पुत्री थी। पुत्री का नाम कानी बाई था। मोहनदास जी सबसे छोटे थे। कानी बाई का विवाह सालासर ग्राम के सुखराम जी से हुआ था पर विवाह के पाच साल बाद उदयराम नामक पुत्र प्राप्ति के बाद सुखराम जी का देहान्त हो गया तब कानी बाई अपने पुत्र उदयराम जी सहित अपने पीहर रूल्याणी चली गई। कुछ पारिवारिक परिस्थितियों के कारण अधिक समय तक वहा नहीं रुक सकी और वापिस सालासर आ गई। यह सोचकर कि विधवा बहिन कैसे जीवन निर्वाह करेगी मोहनदास जी भी साथ चले आये। इस प्रकार कानीबाई मोहनदास जी, व उदयराम जी साथ साथ रहने लगे। श्री मोहनदास जी प्रारम्भ से ही विरक्त वृत्ति वाले आदमी थे और श्री हनुमान जी महाराज को अपना ईष्ट मानकर पूजा करते थे।

यही कारण था कि यदि वे किसी को कोई बात कह देते तो वह अवश्य ही पूरी होती। इस तरह उनको सभी लोग जानने लगे थे। इसी तरह दिन गुजरते रहे। एक दिन मोहनदास जी व उदयराम जी अपने खेत में काम कर रहे थे। मोहनदास बोले "उदयराम जी मेरे पीछे कोई देव पडा है जो मेरा गडासा छीनकर कर फेंक देता है। उदयराम जी ने पूछा—"मामाजी कौन देव है। तो मोहनदास जी बोले बालाजी है। उदयराम जी को यह बात कुछ कम समझ में आई। घर लौटे तो उदयराम जी ने कानाबाई से कहा "मा, मामाजी के भरोसे तो खेत में अनाज नहीं होना। और यह कहकर खेत वाली सारी बात कह सुनाई। सुनकर कानीबाई ने सोचा कहीं मोहनदास सन्यास न ले ले यह सोच कर उसने एक स्थान पर मोहनदास के लिए लड़की तय कर सम्बन्ध पक्का करने हेतु नाई को कुछ कपड़े व जेवर देकर लड़की वाले के घर भेजा। पीछे से थोड़ी देर बाद ही जब मोहनदास घर आये तो कानी बाई ने विवाह की सारी बात उन्हें कही तब वे हसकर बोले "पर बाई वह लडकी तो मर गई है।" कानी बाई सहम गई क्योंकि वह जानती थी कि मोहनदास जी के वचन सिद्ध हैं। दूसरे दिन नाई लौटा तो उसने बताया कि लड़की तो मर गई। इस तरह मोहनदास जी ने विवाह नहीं किया और पूरी तरह से श्री बालाजी बजरग बली की भक्ति में प्रकट हो गये। एक दिन मोहनदासजी, उदयराम जी, कानीबाई तीनों अपने घर में बैठे थे कि दरवाजे पर किसी साधु ने आवाज दी पर कानी बाई जब आटा लेकर द्वार पर गई तो वहा कोई नजर नहीं आया इसलिए इधर-उधर देखकर वापिस आ गई और बोली भाई मोहनदास दरवाजे पर तो कोई नहीं था। तब मोहनदास जी बोले बाई ये खुद बालाजी थे पर तू देर से गई। तब कानीबाई बोली भाई मुझे भी बालाजी के दर्शन करवायें। मोहनदास जी ने हा भी भर ली। 2 महीने बाद ही उसी तरह द्वार पर फिर वही आवाज सुनाई दी। इस बार मोहनदास जी खुद द्वार पर गये। देखा बालाजी स्वय हैं और वापिस जा रहे हैं। मोहनदास जी पीछे हो लिये आखिर बहुत निवेदन करने पर बालाजी वापिस आये। पर वह शर्त रखकर की खीर खाड के भोजन खिलाओ और सोने के लिए बिना काम में ली हुई खाट देओ तो चलू। मोहनदास ने मान ली। बालाजी महाराज घर पधारे। दोनों बहिन भाईयों ने बहुत सेवा की कुछ ही दिन पूर्व ठाकुर सलम सिह के लडके का विवाह हुआ था। उसके दहेज में आई हुई बिल्कुल नयी खाट थी। सो वह बालाजी के लिए सोने के वास्ते लाई गई। तात्पर्य यह है कि मोहनदास जी बालाजी के अनन्य भक्त थे और बालाजी की भी उन पर असीम कृपा थी।

इस तरह एक दिन और मोहनदास जी के मन में आया कि यहा एक बालाजी का मन्दिर बनवाना चाहिये। यह बात ठाकुर सालम जी तक पहुची पर बात विचाराधीन ही चल रही थी कि तभी एक दिन गाव पर किसी की फौज चढ आई। अचानक इस स्थिति के कारण सालमसिह व्याकुल हो गये तब मोहनदास जी बोले डरने की बात नहीं है एक तीर पर नीली झण्डी लगाकर छोड दो। बजरग बली ठीक करेगा। और यही किया गया

और आपत्ति टल गई। इस घटना से मोहनदास जी की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। सालम सिह ने भी श्री बालाजी की प्रतिमा स्थापित करने की पूरी ठान ली। तब समस्या यह आ गई कि मूर्ति कहा से मगाई जाये। तब मोहनदास जी ने कहा आसोटा से मगवा लो। आसोटा के सरदार के यहा सालम सिह का पुत्र ब्याहा गया था। सो तुरन्त ही आसोट समाचार दिया गया कि एक बालाजी की प्रतिमा भिजवाओ। उधर आसोटा में उसी रोज एक खेत में किसान जब हल चला रहा था तो अचानक एक किसी चीज से अड गया। जब किसान ने खोद कर देखा तो बालाजी की मन मोहक प्रतिमा थी। वह तुरन्त उस मूर्ति को लेकर ठाकुर के पास गया और मूर्ति को देखकर बोला "महाराज मेरे खेत में यह मूर्ति निकली है। ठाकुर साहब ने मूर्ति महलो में रखवाली। ठाकुर साहब भी विस्मित थे उन्होंने मूर्ति की यह खासियत देखी की हाथ फेरने पर सपाट पत्थर मालूम पडता है और देखने में मूर्ति लगती है। यह घटना सावन सुदी 9 शनिवार सवत 1811 की है। अचानक आसोटा ठाकुर को प्रतिमा में से आवाज सुनाई दी कि "मुझे सालासर पहुचाओ। दो बार आवाज आई तब तक तो ठाकुर साहब ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। परन्तु जब तीसरी बार बहुत तेज आवाज आई कि मुझे सालासर पहुचाओं तभी सालम सिह द्वारा भेजा गया आदमी पहुच गया। इस तरह थोडी देर में बैल गाडी पर मूर्ति रखवाई गई और गाडी सालासर के लिए रवाना हो गई। दूसरे रोज इधर सालासर में मूर्ति पहुचने वाली थी तो मोहनदास जी सालमसिह तथा सारा गाव हरि कीर्तन करते हुये अगवानी को पहुचे। सब तरफ बहुत उत्साह तथा उल्लास था। अब समस्या खडी हुई कि प्रतिमा कहा पर स्थापित की जाये। आखिरकार मोहनदास जी ने कहा कि इस गाडी के बैलों को छोड दो जिस स्थान पर अपने आप रूक जावे वहीं स्थापना कर दो। ऐसा ही किया गया। बैल अपने आप चल पडे और एक तिकोने टीले पर जा रूके। इसी धेरे पर श्री बालाजी की मूर्ति स्थापित की गई। वि. स. 1811 में श्रावण सुदी 10, इतवार को हुई। मूर्ति की स्थापना के बाद यह गाव यहीं बस गया। इससे पूर्व यह गाव वर्तमान नये तालाब से इतना ही पश्चिम में था जितना अब पूर्व में है। क्योंकि सालम सिह ने इस नये गाव को बसाया था इसलिए सालासर (सालासर अपभ्रष्ट) नाम पडा। इससे पहले वाले गाव का नाम क्या था यह पता नहीं चला। कई लोगों का ख्याल है कि यह नाम पुरोनगाव का ही है पर इसके पीछे कोई तर्क सगत प्रमाण नहीं है। अस्तु प्रतिमा की स्थापना के बाद तुरन्त ही तो मन्दिर का निर्माण किया नहीं जा सकता था। अत ठाकुर सालम सिह के आदेश पर सारे गाव वालों ने मिलकर झोंपडा बना दिया। जब झोंपडा बन रहा था तो पास के रास्ते से ही जूलियासर के ठाकुर जोरावर सिह जा रहे थे। उन्होंने जब यह नयी बात देखी तो पास ही खडे व्यक्तियों से पूछा यह क्या हो रहा है। उन लोगों ने उत्तर दिया। बावलिया स्वामी ने बालाजी की स्थापना की है उसी पर झोंपडा बना रहे हैं। जोरावर सिह जी बोले मेरी पीठ में अदीठ हो रही है। उसे यदि बालाजी मिटा दें तो मैं मन्दिर के लिए पाच रूपये चढ़ा दू। यह कहकर वे आगे बढ़ गये। अगले स्थान पर पहुच कर स्थान के लिए कपडे खोले तो देखा कि पीठ

यही कारण था कि यदि वे किसी को कोई बात कह देते तो वह अवश्य ही पूरी होती। इस तरह उनको सभी लोग जानने लगे थे। इसी तरह दिन गुजरते रहे। एक दिन मोहनदास जी व उदयराम जी अपने खेत में काम कर रहे थे। मोहनदास बोले "उदयराम जी मेरे पीछे कोई देव पड़ा है जो मेरा गडासा छीनकर कर फेंक देता है। उदयराम जी ने पूछा—"मामाजी कौन देव है। तो मोहनदास जी बोले बालाजी है। उदयराम जी को यह बात कुछ कम समझ में आई। घर लौटे तो उदयराम जी ने कानाबाई से कहा "मा, मामाजी के भरोसे तो खेत में अनाज नहीं होना। और यह कहकर खेत वाली सारी बात कह सुनाई। सुनकर कानीबाई ने सोचा कहीं मोहनदास सन्यास न ले ले यह सोच कर उसने एक स्थान पर मोहनदास के लिए लड़की तय कर सम्बन्ध पक्का करने हेतु नाई को कुछ कपड़े व जेवर देकर लड़की वाले के घर भेजा। पीछे से थोडी देर बाद ही जब मोहनदास घर आये तो कानी बाई ने विवाह की सारी बात उन्हें कही तब वे हसकर बोले "पर बाई वह लडकी तो मर गई है।" कानी बाई सहम गई क्योंकि वह जानती थी कि मोहनदास जी के वचन सिद्ध हैं। दूसरे दिन नाई लौटा तो उसने बताया कि लड़की तो मर गई। इस तरह मोहनदास जी ने विवाह नहीं किया और पूरी तरह से श्री बालाजी बजरंग बली की भक्ति में प्रकट हो गये। एक दिन मोहनदासजी, उदयराम जी, कानीबाई तीनों अपने घर में बैठे थे कि दरवाजे पर किसी साधु ने आवाज दी पर कानी बाई जब आटा लेकर द्वार पर गई तो वहां कोई नजर नहीं आया इसलिए इधर-उधर देखकर वापिस आ गई और बोली भाई मोहनदास दरवाजे पर तो कोई नहीं था। तब मोहनदास जी बोले बाई वे खुद बालाजी थे पर तू देर से गई। तब कानीबाई बोली भाई मुझे भी बालाजी के दर्शन करवायें। मोहनदास जी ने हा भी भर ली। 2 महीने बाद ही उसी तरह द्वार पर फिर वही आवाज सुनाई दी। इस बार मोहनदास जी खुद द्वार पर गये। देखा बालाजी स्वयं हैं और वापिस जा रहे हैं। मोहनदास जी पीछे हो लिये आखिर बहुत निवेदन करने पर बालाजी वापिस आये। पर वह शर्त रखकर की खीर खाड के भोजन खिलाओ और सोने के लिए बिना काम में ली हुई खाट देओ तो चलू। मोहनदास ने मान ली। बालाजी महाराज घर पधारे। दोनों बहिन भाईयों ने बहुत सेवा की कुछ ही दिन पूर्व ठाकुर सलम सिह के लडके का विवाह हुआ था। उसके दहेज में आई हुई बिल्कुल नयी खाट थी। सो वह बालाजी के लिए सोने के वास्ते लाई गई। तात्पर्य यह है कि मोहनदास जी बालाजी के अनन्य भक्त थे और बालाजी की भी उन पर असीम कृपा थी।

इस तरह एक दिन और मोहनदास जी के मन में आया कि यहा एक बालाजी का मन्दिर बनवाना चाहिये। यह बात ठाकुर सालम जी तक पहुंची पर बात विचाराधीन ही चल रही थी कि तभी एक दिन गाव पर किसी की फौज चढ आई। अचानक इस स्थिति के कारण सालमसिह व्याकुल हो गये तब मोहनदास जी बोले डरने की बात नहीं है एक तीर पर नीली झण्डी लगाकर छोड दो। बजरग बली ठीक करेगा। और यही किया गया

और आपत्ति टल गई। इस घटना से मोहनदास जी की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। सालम सिह ने भी श्री बालाजी की प्रतिमा स्थापित करने की पूरी ठान ली। तब समस्या यह आ गई कि मूर्ति कहा से मगाई जाये। तब मोहनदास जी ने कहा आसोटा से मगवा लो। आसोटा के सरदार के यहा सालम सिह का पुत्र ब्याहा गया था। सो तुरन्त ही आसोट समाचार दिया गया कि एक बालाजी की प्रतिमा भिजवाओ। उधर आसोटा में उसी रोज एक खेत में किसान जब हल चला रहा था तो अचानक एक किसी चीज से अड गया। जब किसान ने खोद कर देखा तो बालाजी की मन मोहक प्रतिमा थी। वह तुरन्त उस मूर्ति को लेकर ठाकुर के पास गया और मूर्ति को देखकर बोला "महाराज मेरे खेत में यह मूर्ति निकली है। ठाकुर साहब ने मूर्ति महलो में रखवाली। ठाकुर साहब भी विस्मित थे उन्होंने मूर्ति की यह खासियत देखी की हाथ फेरने पर सपाट पत्थर मालूम पडता है और देखने में मूर्ति लगती है। यह घटना सावन सुदी 9 शनिवार सवत 1811 की है। अचानक आसोटा ठाकुर को प्रतिमा में से आवाज सुनाई दी कि "मुझे सालासर पहुचाओ। दो बार आवाज आई तब तक तो ठाकुर साहब ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। परन्तु जब तीसरी बार बहुत तेज आवाज आई कि मुझे सालासर पहुचाओं तभी सालम सिह द्वारा भेजा गया आदमी पहुच गया। इस तरह थोडी देर में बैल गाडी पर मूर्ति रखवाई गई और गाडी सालासर के लिए रवाना हो गई। दूसरे रोज इधर सालासर में मूर्ति पहुचने वाली थी तो मोहनदास जी सालमसिह तथा सारा गाव हरि कीर्तन करते हुये अगवानी को पहुचे। सब तरफ बहुत उत्साह तथा उल्लास था। अब समस्या खडी हुई कि प्रतिमा कहा पर स्थापित की जाये। आखिरकार मोहनदास जी ने कहा कि इस गाडी के बैलों को छोड दो जिस स्थान पर अपने आप रूक जावे वही स्थापना कर दो। ऐसा ही किया गया। बैल अपने आप चल पडे और एक तिकोने टीले पर जा रूके। इसी धेरे पर श्री बालाजी की मूर्ति स्थापित की गई। वि. स 1811 में श्रावण सुदी 10, इतवार को हुई। मूर्ति की स्थापना के बाद यह गाव यहीं बस गया। इससे पूर्व यह गाव वर्तमान नये तालाब से इतना ही पश्चिम में था जितना अब पूर्व में है। क्योंकि सालम सिह ने इस नये गाव को बसाया था इसलिए सालासर (सालासर अपभ्रष्ट) नाम पडा। इससे पहले वाले गाव का नाम क्या था यह पता नही चला। कई लोगों का ख्याल है कि यह नाम पुरोनगाव का ही है पर इसके पीछे कोई तर्क सगत प्रमाण नही है। अस्तु प्रतिमा की स्थापना के बाद तुरन्त ही तो मन्दिर का निर्माण किया नही जा सकता था। अत ठाकुर सालम सिह के आदेश पर सारे गाव वालों ने मिलकर झोंपड़ा बना दिया। जब झोंपडा बन रहा था तो पास के रास्ते से ही जूनियासर के ठाकुर जोरावर सिह जा रहे थे। उन्होंने जब यह नयी बात देखी तो पास ही खडे व्यक्तियों से पूछा यह क्या हो रहा है। उन लोगों ने उत्तर दिया। दावलिया स्वामी ने बालाजी की स्थापना की है उसी पर झोंपडा बना रहे हैं। जोरावर सिह जी बोले मेरी पीठ में अदीठ हो रही है। उसे यदि बालाजी मिटा दें तो मैं मन्दिर के लिए पाव रूपये चढा दू। यह कहकर वे आगे बढ़ गये। अपने स्थान पर पहुंच कर स्थान के लिए कपडे खोले तो देखा कि पीठ

में अदीठ नहीं हैं उसी समय वापिस आकर उन्होंने गठ जोडे की जात दी और पाच रूपये भेंट किये। यही पहला पर्चा था।

सकराय माता का मन्दिर

राजस्थान के रेतीले टीलों वाला प्रदेश शेखावाटी में पुण्य स्थल लोहार्गल भाग ही ऐसा स्थान है जहा शान्ति और सलजता मूलक विविध धुमलता मडित पर्वतमाला का नयनाभिराम दृश्य उपस्थित है। यह सकराय माता का मन्दिर खण्डेले से 5 कोस की दूरी पर स्थित है। उदमपुर (शेखावाटी) होकर भी रास्ता जाता है। शेखावाटी में यह सबसे प्राचीन मन्दिर सघन वृक्षच्छदित दुर्ग में पहाडी स्थान वृहद द्रोणी में है। अब यात्रियों के यातायात, घिसे हुऐ पत्थर, बाहरी दिवारें और कुछ प्रतिमायें रह गई हैं। सहस्रों की सख्या में यात्री धर्म बुद्धि से प्रेरित होकर मा भगवती के दर्शन करते हैं। कितने ही कुटुम्ब अपनी फूल देवी के रूप में सकराय माता जी को पूजते हैं और उनके दुर्गम किन्तु सुरम्य स्थान पर पहुचकर अपनी भक्ति प्रदर्शित करते हैं। उन कुटुम्बों में चाहे वे यहा बसते हों या विदेश में विवाह तथा जन्म के उपलक्ष्य में जात जडूला के लिए माता जी के स्थान पर उपस्थित होकर श्रद्धा-अर्चना करना उनका कर्तव्य माना जाता है।

. लोहार्गल महात्म्य में वर्णित शुक्रधारा का उद्गम स्रोत यही है जहा पहुचकर यात्रीगण अपूर्व शान्ति का अनुभव करते हैं। एक नाले के रूप में कलकल निनाद करती सकराय माता की यह निरन्तर प्रवाहिनी शुक्रधारी कोसों तक क्षेत्र को हरा भरा उद्यानोपम् बनाये हुए है। लाल और फूलों फुलो वाले कनीर शुक्रधारा के दोनों ओर शोभा द्विगणित कर रहे हैं। और इसी प्रकार हरे भरे लहलहाते हुए आम वृक्षों की कतार का सिलसिला दूर तक चला गया है। थोडी दूर पर खडेले के भूतपूर्व राजा हमीरसिंह जी का बनाया हुआ कोट का बाध आता है। यह कोट सकराय का बाध कहलाता है। देवी के नाम पर ही थोडे अन्तर पर सकराय नामक गाव बसा हुआ है। यद्यपि शेखावाटी में यह स्थान बहुत प्राचीन है। लेकिन तीन शिलालेखों तथा मन्दिर की बाहरी दीवार के कुछ हिस्सों के अतिरिक्त इसकी सब की सब इमारतें नयी बन गई हैं। नवीनता में प्राचीनतम छिप गई है। वर्तमान नया मन्दिर सम्भवत 1972-80 में नवलगढ के सेठ रामगोपाल भूरामल डगायच खण्डेलवाल महाजन की श्रद्धा पूर्ण उदारता से बना है।

नव निर्मित मन्दिर के अलावा नवीन भव्य तीनों दरवाजे और दरवाजों के ऊपर तथा नीचे सुन्दर कमरे, रसोवडा, मन्दिर के भीतर अहाते में वरिडा, शिवालग, शुक्रधारा सर्वाधिक तीन कुण्ड बनाये गये हैं। इस के अलावा यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालायें तथा कई तिबारे बनाये गये हैं। मन्दिर के अधिष्ठाता श्री बालक नाथ जी हैं। सकराय माता के स्थान पर यात्री आते जाते रहते हैं किन्तु लोहर्गल की परिक्रमा के समय दर्शनार्थियों का असाधारण जमाव होता है। सब स्थान ठसा ठस भर जाते हैं। शत चण्डी और सप्तचगे के अनुष्ठान करने वाले कितने ही कर्मकाडी ब्राह्मण पंडितों के आसन लगे ही रहते हैं और अनुष्ठान

की अवधि में वही निवास करते है। साधन के लिए यह स्थान एक सिह पीठ माना जाता है। माँ भगवती का यही एक मात्र स्थान है जहाँ बलिदान नहीं होता। यहा रुदाणी और ब्रह्मामाणी के रूप में देवी जी की दो मूर्तियाँ विराजमान हैं जिसमें एक प्रतिमा सुर्म दिनों की और दूसरी सिह वाहनी की है और दोनों ही अष्टभुजी हैं।

देवी जी के मन्दिर के पास ही शकर जी का भी पुराना मन्दिर है। मन्दिर से सकर कलकल करती हुई शकरा नदी बहती है। वडा सुन्दर व शान्तिमय दृश्य है। पवित्र तीर्थ लोहार्गत की परिक्रमा में यह स्थान भी आता है। परिक्रमा प्रति वर्ष यादवा कृष्णा 11 से अमावस्या तक लगती है। हजारों यात्री स्त्री, पुरूष, वृद्ध, युवा, धर्म भावना से प्रेरित होकर परिक्रमा करते हैं तथा प्रान्दानुभूति को प्राप्त होते हैं।

अध्याय १०

"सांकृतिक व ऐतिहासिक महत्व के स्थल"

लोक तीर्थ - "लोहार्गल"

झुन्झुनूं चिराना ग्राम से 5 कि मी पर महाभारत कालीन संदर्भों से जुड़ा प्रसिद्ध तीर्थ लोहा र्गल प्रवस्थित है। प्रत्येक प्राकृतिक सुषमाओं से परिपूर्ण वन वन स्थली में लोकतीर्थ का धार्मिक व एतिहासिक महत्व है। "स्कन्द पुराण" एवं "बाराह पुराण" में इस स्थली का लोक तीर्थ के रूप में विशेष उल्लेख है।

कहा जाता है महर्षि परशुराम जी ने अपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए यहां पर वैश्णव-यज्ञ करवाया थाँ। जिसमें इन्द्रादि अनेक देवता आये थे और वे इस स्थल कि रमणीयता से इतने प्रभावित हुए कि यहां कई वर्षो तक तपस्या करते रहे।

इस आध्यात्मिक स्थल पर मन्त्रियों के आने पर प्राध्यात्मिक, प्रभुतियां होने लगती है। ऋषि की तपोभूमि होने के कारण इसका समूचा वातावरण परम ब्रहम से जोडता है "आदि बाराह पुराण" में कहा, गया है कि लोहे की अर्गला की भाँति पर्वत श्रेणी इस तीर्थ को रोके हुए है। तीर्थ के प्रवेश द्वार की ओर चेतनदास जी की बावडी और राधारमण का विशाल मन्दिर है।

लोहा र्गल तीर्थ क्षेत्र के विशेष धार्मिक एवं दर्शनीय स्थलीय में तानवाणी का वह मनोहर स्थल है। जहां ब्रह्मकुण्ड और जिसकी महिमा लोहार्गल महात्मय से जुडी हुई है। इस कुण्ड के ऊपर का वृक्ष न सिर्फ दो तीन गुफाओं के कारण आकर्षक बल्कि प्राचीन भी है। इसके अलावा मालखेत एवं वनखडी स्थल दर्शकों केचित्त को आकृष्ट करने वाला है। चार सम्प्रदाय खाखीजी का मन्दिर, बाराह मन्दिर, सूर्य मन्दिर, सूर्य कुण्ड, वशिष्ट कुण्ड आदि ऐसे धार्मिक स्थल है जिनसे ऋर्षि मुनियों का कोई न कोई प्रसंग जुडा हुआ है। लोहा र्गल तीर्थ में आने वाले यात्रियों को चौबीस कोस की पैदल यात्रा करनी होती है जिसके दौरान शाकम्भरी, किरोडी, खोरी कुण्ड आदि धार्मिक स्थलों को देखा जा सकता है।

वर्षा ऋतु में लोहार्गल का दृश्य बडा मनाहरी हो जाता है।

लोहार्गल तीर्थ पर आये यात्री मालखेत वनखडी के जयघोष से पर्वत श्रेणियों को गूंजा देते हैं। पर्वत की उच्च चोटियां देखकर आहलादित हो उठते हैं। यहां के प्राकृतिक दृश्य इतने चित्तवर्धक हैं जिन्हें देखकर यात्री आत्म विभोर हो उठते हैं।

लोहार्गल में प्रति वर्ष भादवा वदी अमावस्या को एक विशाल मेला भरता है। जिसमें हजारों श्रद्धालु स्नान कर पुण्य कमाते है। यहां यात्रियों के लिए विभिन्न वस्तुओं की दुकानें भी लगती है। यहां स्थानीय संस्था द्वारा सांस्कृतिक

एवं खेल-कूद के कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। मेले में ग्रामीण अचलों से आने वाले यात्रियों की भीड़ भी एक अनोखी छटा उपस्थित कर देती है।

किवदन्ती प्रचलित है कि यहां पाण्डवों ने जब पवित्र जल में स्नान किया तो उनके लोहे के हथियार गल गये थे। शायद इस कारण भी इस तीर्थ को लोहार्गल कहा जाता है।

एकता का प्रतीक : "शाकंभरी माता" का शक्तिपीठ

अपनी धार्मिक मान्यताओं, परम्पराओं और विश्वास की गहरी छाया से घिरा यह जनपद देश के गौरवास्पद जनपदों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

शेखावाटी जनपद का शक्तिपीठ सीकर से उदयपुरवाटी मार्ग पर 60 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां वर्ष में दो बार विशेष कर आश्विन और चैत्र के नवरात्र में भारतीय संस्कृति का स्वरूप देखने को मिलता है। जब हजारों की संख्या में भक्तजन एकत्र होकर मीलों दूर से पैदल चलकर आते हैं। इस स्थल को मां का सच्चा दरबार भी कहा जाता है क्योंकि अधिकांश भक्तजन यहां से अपनी मनोकामना पूरी पाते हैं।

इस शाकंभरी देवी के मंदिर में दो प्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं परन्तु यह मंदिर मुख्य रूप से शाकम्बरी माता का माना जाता है। प्रतिष्ठित शाकम्बरी देवी प्रतिमा के संबंध में यह धारणा है कि देवी ने एक सहस्र वर्षों तक एक बार शाकाहार रहते हुये घोर व्रत किया था। मान्यता है कि देवी साक्षात्कार में यहां विराजमान रहती हैं और भक्तजन की पुत्र कामनाएं धन सम्पति की कामना पूर्ण करती हैं। अपनी अभिलाषा पूर्ण होने पर संकल्पित प्रसाद छत्र व वस्त्र चढ़ाने के लिये श्रद्धा भावना के साथ पहुँचता है। शाकम्बरी तीर्थ पर प्रतिवर्ष चतुर्दशी को एक विशाल मेला भी लगता है। देवी के दर्शनों से पूर्व देवालय के बाहर स्वच्छ जल के सात जलकुंडों में निर्मल जल प्रवाहित निर्मल धारा में स्नान करते हैं। पुराणों के अनुसार शाकंभरी का क्षेत्र का विस्तार पांच सौ के मध्य माना जाता है। कहते हैं कि चौहान राजा दुर्लभ राज के भतीजे सिवहरि के पुत्र सिंहराज ने शक्रदेवी (शाकंभरी) का मंडप बनवाया था। संभवतः इसी कारण देवी का नाम शाकम्बरी पड़ा हो।

तीन ओर से पर्वतमालाओं से घिरी उपत्यका में आम्रकुंजों के मध्य शाकंभरी का भव्य देवालय है। सचमुच में यहां आने वाले दर्शक को एक ऐसे अनोखे आनंद की अनुभूति होती है जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वास्तव में यह स्थान आस्था की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल बना हुआ है जो शेखावाटी जनपद की एक सांस्कृतिक धरोहर भी है।

गणेश्वर के संस्थापक तीर्थ स्थल को मूर्तरूप देने वाले रावसल के जन्म दिवस पर यहां जोरदार मेला भरता है। उस दिन यहां सार्वजनिक जीमण होता है।

बहुत वर्ष पूर्व यहां महात्मा हनुमानगिरी ने 20-22 जोहडों का निर्माण करवाया था। यहां पर पांच सतियों के भी स्थान है अनुसूइया माता के नाम से प्रचलित स्थल पर लूणा चमारी, सियाकुमारी, बहूरीजोगण तथा सती चूडी के नाम से स्थल है यहां के कुण्ड की यह विशेषता है कि उसके पानी मे कीडे नहीं पडते।

यहां पुरातत्व विभाग द्वारा जो खुदाई की गई है, उनमें जो ताम्र वस्तुऐं मिली हैं वे इस क्षेत्र के सांस्कृतिक, पुरा ऐतिहासिक विकास की स्थितियों को उजागर करती है।

प्राकृतिक और आध्यात्मिक सौन्दर्य से भरपूर मनोहर स्थली न सिर्फ सैलानियों के बल्कि धार्मिक आस्था वाले लोगों के लिए भी आकर्षण का केन्द्र हैं। सैलानियों के आकर्षण की इस रम्य स्थली को पिकनिक स्पाट का रूप भी दिया गया है। और पर्यटन विकास की यहां प्रचुर सम्भावनायें है। जिसका आध्यात्मिक दृष्टि से बडा महत्व है।

गणेश्वर सुखानुभूतियों का प्रेरणा स्थल है, जहां प्रकृति और मानव के सुधिर सम्बन्धों की कथायें पर्वतों के नीले पृष्ट पर हरी स्याही से लिखी गई है। घने वृक्षों से आच्छादित इस आत्मिक व शान्त प्रदेश में जहां आत्मा को शान्ति मिलती है, वहीं यह स्थल प्रकृति का सलोना क्रीडा स्थल भी है। इस स्थान पर आकर व्यक्ति स्वस्थ मानसिकता का अनुभव करता है।

लोक संस्कृति का यह पावन स्थल शेखावाटी का एक प्रमुख लोक तीर्थ है।

इतना आनन्दपूर्ण, आकर्षक स्थल राजस्थान में अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। लोगों की यही आशंका है कि आधुनिकरण के चक्कर में गणेश्वर की परम्परा कहीं नष्ट न हो जाये।

शेखावटी का सांस्कृतिक स्थल--"बाघेश्वर तीर्थ"

धार्मिक एकता, भावात्मक एकता, और सहिष्णुता का प्रतीक बाघेश्वर का तीर्थ खेजडी के निकट, जसरापुर से तीन कोस की दूरी पर दो पहाडों की सकरी घाटी मे स्थित है।[1] यहां एक सतत प्रवाहमान जल स्रोत है जो मन्द धाराओं मे जो एक पहाड की खो में से निकलकर नीचे गिरता है। इस समय वहां चौहान काल का मन्दिर उपस्थित है। जो किसी समय नष्ट होने के बाद फिर से मरम्मत करके काम चलाऊ बना लिया गया है।[2] सन् 1935 में स्वर्गीय

1 डा मनोहर शर्मा, राजस्थान लेख संग्रह पृ 1
2 डा मनोहर शर्मा, राजस्थान लेख संग्रह पृ 1

श्री ही. ओझाजी इस स्थान पर पधार चुके हैं और उन्होंने इसको चौहान कालीन होने का समर्थन किया है।[3]

इस मन्दिर की मरम्मत खेतड़ी के राजा ने कराई थी। खेतड़ी राजघराना यदाकदा सन् 1950 तक इसकी मरम्मत कराते रहे है।[4] इस स्थान पर कोई विशेष यात्री तो नहीं आते हैं। परन्तु प्राचीन किवदन्ती के अनुसार नृसिंह भगवान ने हिरण्यकश्यप का हृदय विदीर्ण करके अपने रक्त लिप्त नखों को इसी स्थान पर धोया था।[5]

शेखावत काल में खेतड़ी के राजा ने इस तीर्थ की गरिमा को नष्ट नहीं होने दिया।

आस-पास के धार्मिक आस्था वाले लोग यहा आते रहते है। यहां किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं बरता जाता है।

सांस्कृतिक धरोहर

शेखावाटी का जागृत शक्तिपीठ मनसा माता

शेखावाटी जनपद के झुंझुनूं जिले मे मनसा माता का एकमात्र शक्तिपीठ है जो 250 वर्ष पुराना है। यह स्थान खेतड़ी और हर्ष के बीच में फैली हुई अरावली पर्वतमाला की रमणीय उपत्यका में बसा हुआ है। गगनचुम्बी पहाड़ों की गोद में बसा मनसा माता का स्थान प्राकृतिक सौन्दर्य का अनुपम बीज मोती सा चमकता स्थल है। हरे-भरे पहाड़, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, सुरम्य और मनोहारी यह मंदिर पलभर में हमारी दृश्य, दर्शनार्थियों के लिये आकर्षण का केन्द्र है तथा दर्शनार्थियो की थकान हर लेता है। चट्टान का सहारा लिये पश्चिमाभिमुख देवी का मंदिर हरे-भरे पहाड़ों में छुपा हुआ है। चारों तरफ हरियाली मनसा माता के संबध में जनश्रुति है कि पहाड़ पर भेड बकरी चराते गडरियों को देवी के प्रकट होने की आकाशवाणी सुनाई दी। भयकर गर्जना के साथ भूमि कांपने लगी तथा जमीन फट गई तथा उसमें से मां प्रकट हुई लेकिन गडरियों के क्रंदन को सुन कर स्तनाकार रूप में ही रह गई। चाहे जो भी हुआ हो वह स्थान आज शक्ति उपासना की सिद्धपीठ है।

पहले इसकी मान्यता छोटे-छोटे गावों में ही थी लेकिन धीरे-धीरे इसकी ख्याति फैलने लगी और भक्तों की मनौतियां पूर्ण होने लगीं और हजारों श्रद्धालुओं

---

3 डा मनोहर शर्मा, राजस्थान लेख संग्रह पृ 1.
4 बाघेश्वर यात्रा के दौरान से मिली जानकारी के अनुसार
5. डा मनोहर शर्मा, शेखावाटी की अप्रकाशित प्रस्तर प्रतिमाएं, एवं ऐतिहासिक शोध यात्रा पृ. 1.

का तांता लगा रहता है और आज यह साधना की दृष्टि से शेखावाटी का प्रमुख सिद्धपीठ हो गया।

घने पेड़ों के झुरमुट में ऊंचे नीचे रास्ते को पार कर भक्तजन जब मंदिर में प्रवेश करते है तो बांई तरफ सीढ़ियां चढ़ने पर लाकड़ का स्थान आता है। लाकड़ भैरव का प्रतीक है और देवी का द्वारपाल। हमें ऐसा लगता है कि हम कल्पना लोक में आ गये है।

आगे बढ़ने पर सभामंडप के बायें गर्भगृह में चट्टान के नीचे सिन्दूर से सनी स्तनाकार रूप में मनसा देवी के दर्शन होते है। वैसे तो हर महीने में श्रद्धालु भक्त आते रहते है लेकिन चैत्र और आश्विन में नवरात्र पर विशेष मेला लगता है। उस समय सप्तशती पाठ व सत्संग कार्यक्रम आयोजित होता है जहां हजारों की संख्या में स्त्री पुरूष देवी के दर्शन करने आते हैं। मनसा माता इस क्षेत्र की कुलदेवी है, मनसा देवी की पूजा सात्विक है। यहां बलि तथा भस्माभस्म निषेध है। चूरमा का प्रिय भोग है। देवी मां के मंदिर के सामने तीन जलकुण्ड हैं। अब एक जलकुण्ड का भी निर्माण हो चुका है। इस स्थान का प्रबंध श्री मनसा देवी समिति करती है जो एक पंजीकृत संस्था है। अन्नपूर्णा को कहते है टीबा बसई के बाबा रामेश्वरदास को यही सिद्धि प्राप्त हुई थी। उनके अलावा कई वैष्णव एवं नाथपंथी साधू भी इस स्थान पर तपस्या कर चुके है।

वात्सल्यमयी मनसा मां लोकमानस की मनसा पूर्ण करने के कारण सच्चे अर्थों में मनसा माता कहलाई है। प्राकृतिक परिवेश से परिपूर्ण यह दर्शनीय स्थल न सिर्फ भक्तों के लिये आकर्षण का केन्द्र है बल्कि शेखावाटी जनपद की सांस्कृतिक धरोहर भी है।

रमणीक प्राकृतिक दृश्यों से घिरा हर्ष का शिव मन्दिर

सीकर शहर से 15 कि.मी. दूर अरावली पर्वत श्रेणियों से एवं रमणीक प्राकृतिक दृश्यों से घिरा हुआ हर्ष का शिव का विशाल प्राचीन मन्दिर है। न केवल अपनी शिल्पकला से अपनी ओर आकर्षित करता है बल्कि सभी वर्ग के लोगों का समान रूप से श्रद्धा का केन्द्र बना हुआ है।

हर्षनाथ का वैभव युक्त विशाल मंदिर तो कालान्तर में खंडहर बन गया है उसकी बची हुई मूर्तियां आज भी अद्‌भुत कला और संस्कृति की कहानी कह रही हैं। भग्न शिवमंदिर का भग्नद्वार स्त्रियों की आभूषणयुक्त मूर्तियां आज भी जीती-जागती कला का नमूना है। कहते हैं यहां सैकड़ों वर्ष पूर्व हर्ष ने भैरव तथा शिव की घोर तपस्या करके प्रसन्न किया था जहां चौहान सम्राट सिंहराज सांभर ने संवत 1018 में मंदिर बनाना शुरू किया था जो जाकर विग्रहराज द्वितीय के समाने 1930 में बन सका।

हर्ष पर्वत में आज भी इतनी मूर्तियां उपलब्ध है जिनको देखकर उस काल की मूर्ति कला पर हमें गर्व करना चाहिये।

दुर्लभ कला कृतियां

अभिषेक करती हुई लक्ष्मी अरूट धातु के विष्णु, ब्रह्मा, सरस्वती, पंचमुखी महादेव आदि मूर्तियों का श्रृंगार देखने काबिल है। कंधे पर पर्स डाले एक महिला एक हजार वर्ष पहले की दिखाई गई है। स्व बद्रीनारायण सोढाणी के प्रयत्नों से पहाड़ पर सड़क भी पहुंच गई है। यहां अतिथि गृह भी है। मेडीकल कालेज का भवन अधूरा पड़ा है।

यहां जो शिव मंदिर है उसे बिड़ला परिवार ने बनाया है। कहते है सीकर के राजा शिवसिंह ने भी यहां अपने आराध्य देव गोपीनाथ का मंदिर बनाने का अधूरा प्रयास किया था। पर्वत पर गुफायें है जहां नन्द बाबा एवं महावीर दास ने जीवित समाधि ली थी।

इस मंदिर के पिछवाड़े में भी एक मंदिर है जहां भैरव और दुर्गा दोनों स्थापित है। मंदिर के भीतरी भाग में वह कलात्मक स्तंभ है जिन पर उत्कीर्ण चित्रकला के अनोखे नमूने है। यही पर स्थापित्य दुर्गों की विशाल मूर्ति जिसके 18 हाथ दिखाये गये हैं।

दुर्गा के मंदिर के पास से सीढ़ियां उतर कर भैरव के उस मंदिर को देखा जा सकता है जहां हजारों वर्षों से एक अखंड ज्योति जल रही है। यह भी मान्यता है कि भैरव के आगे की गई मिन्नतें पूरी होती हैं। महिलायें बच्चों को गोद में लेकर पहाड़ पर चढ़ कर भैरू नाथ के धोक दिला जाती हैं। हर्ष के नाम पर ही यह पहाड़ और इसके नीचे बसा गांव है। यहां जैन मंदिर के अलावा गोपीनाथ जी रामदेवजी एवं गूगाजी के भी मंदिर है। इस स्थान से 6 किलोमीटर दूर जीण माता का भी दर्शनीय स्थान है।

भावात्मक एकता वाले इस स्थान पर दूर-दूर से लोग खिंचे चले आते हैं। पहाड़ पर सर्प की तरह बल खाती चढ़ती हुई सड़क और घने वृक्षों से आच्छादित घाटियां और पुष्प लताओं से आलामंद मंद सुगंधित शीतल पवन तथा दूर-दूर तक फैली हरियाली ऐसे ही प्राकृतिक सौन्दर्य एवं नयनाभिराम दृश्यों के बीच स्थित है। हर्ष का यह शिव मंदिर। वास्तव में यह मंदिर स्थापत्य कला के ही अनमोल रत्न नहीं अपितु देश की सांस्कृतिक धरोहर भी हैं।

दर्शनीय स्थल

बाबा रामेश्वरदास का आश्रम

टीबा बसई गांव से 3 कि.मी. दूर हरियाणा-राजस्थान सीमा पर बना बाबा रामेश्वरदास जी का विशाल भव्य आश्रम देखकर आप मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकते।

संगमरमर की आदमकद देव मूर्तियां प्रतिक्षण बोलती हुई सी प्रतीत होती है। कहते है बाबा को अक्षय सिद्धि प्राप्त थी, आश्रम में विशाल कीर्तन भवन,

इतना आकर्षक है, जिसे देखकर शीघ्र भुलाया नहीं जा सकता। भवन की दीवारों पर अंकित तस्बीरें बड़ी आकर्षक व मन मोहनी है इस भवन को टीबा बसई के सेठ रामान्द जी ने निर्मित करवाया था। दूसरा भवन गीता भवन बसई के सेठ श्री किशन गोयल ने सन् में निर्मित करवाया था। इस पर अनुमानत कई लाखो रुपये लागत आई थी। इस भवन की दीवारों पर सम्पूर्ण गीता के श्लोक शीशें से जड़ित है। जिसे देखकर दर्शक खो जाता है चित्रांकन किया गया है।

आश्रम के बाहर बनाये गये नादिया और हनुमानजी की इतनी विशाल मूर्ति शायद ही कहीं हो। इसी भांति हाथी और गणेश की प्रतिमायें भी विशाल हैं। हनुमानजी की मूर्ति के पास ही सरस्वती की मनोहारी मूर्ति बनी हुई है। प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण यह धार्मिक स्थल किसी लोकतीर्थ से कम नही है। *इसकी ख्याति का श्रेय रामेश्वरदासजी महाराज को है जिन्होंने विशाल ऐश्वर्यमयी* गद्दी ढोसी को त्यागकर तपस्या का मार्ग स्वीकार किया। यह स्थान न सिर्फ एक धार्मिक व आध्यात्मिक केन्द्र था बल्कि शिक्षा का एक केन्द्र भी है जहां संस्कृत विद्यालय भी है। बाबा एक तपस्वी, विद्वान तथा परोपकारी सन्त थे, जिनके चमत्कार की अनेक कथायें यहां के वातावरण में सुगंध की तरह फैली हुई है, *यहां जब तक जीवित रहे निमार्णकार्य कभी बन्द नहीं हुए।* उनके दर्शन करने वालों की भीड़ लगी रहती थी, दर्शनार्थियों में न सिर्फ पूंजीपती होते थे बल्कि राजनेता भी बाबा से आर्शीवाद लेने आश्रम में आते रहते थे, बाबा के प्रति जनता में अगाध भक्तिभाव तथा श्रद्धा थी। रात दिन भक्तो का मेला ही लगा रहता था। बाबा का यह आश्रम आध्यात्मिक परिवेश में एक धार्मिक तथा सांस्कृतिक धरोहर है।

मार्गशीर्ष कृष्णा अष्टमी विक्रमी स. 2041 (सन् 1984)

बाबा तो दिनांक----------को ब्रह्मलीन हो गये लेकिन उनको भक्तों के दिल से कभी नही भुलाया जा सकेगा। बाबा की एक मूर्ति बनाई गई है जो आज भी आध्यात्मिकता का सन्देश दे रही है

आश्रम अपने विशाल क्षेत्र (विराट स्वरूप) एवं अद्‌भूत प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण धार्मिक आस्था वाले लोगों को ही नहीं अपितु अनेक पर्यटकों को भी अपनी ओर आकर्षित किया है। यहां दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है। *यह आश्रम शांतिपूर्ण व धार्मिक महत्ता के कारण अपना विशिष्ट स्थान रखता* है। बाबा का यह आश्रम धार्मिक तथा पर्यटन की दृष्टि से अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए विख्यात है।

आश्रम सेतड़ी से 25 कि.मी. दूरी पर स्थित है। निजामपुर निकट का रेलवे स्टेशन है। नारनौल, झुन्झुनूं, जयपुर, दिल्ली से बस सेवा उपलब्ध है। यह आश्रम दुन्द भागा नदी के किनारे पर स्थित है जिसकी रमणीयता देखते ही बनती है इसके शान्त, रमणीय, मनोरम आध्यात्मिक वातावरण में अपने

जीवन के मधुर क्षण बिताने को लालायित अनेक भक्त लोग तथा अनेक पर्यटक दूर-दूर से प्रतिवर्ष यहां आते रहते हैं। इस पावन स्थल के महत्व के बारे में तरह-तरह के धार्मिक सत्य हैं, सचाई जो कुछ भी रही हो, लेकिन प्राकृतिक घने वृक्षों से अच्छादित एक खुबसूरत स्थान तो है ही। यहां सुबह का दृश्य काफी लुभावना होता है, मन्दिर से आती हुई घंटो की कर्णप्रिय ध्वनी और हरे-भरे वृक्षों के बीच आध्यात्मिक वातावरण में हजारों स्त्री पुरूष और बच्चे आनन्द विभोर हो उठते हैं।

सत्यं शिवं सुन्दरं की भावनात्मक पृष्ट भूमि पर निर्मित आश्रम में कलात्मक मूर्तियां शेखावाटी शिल्प के अद्‌भूत नमूने हैं जिन्हें देखकर पर्यटक आश्चर्यचकित हो जाते हैं। इन मूर्तियों में देवी देवताओं, में राधा कृष्ण, राम, सीता, शिव पार्वती, लक्ष्मी, दुर्गा भवानी, सरस्वती, हनुमानजी आदि है। यह आश्रम वास्तुकला की दृष्टि से अद्‌भूत है। ये मूर्तियां मानवीय, सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करती है। ये कलाकारों के सौन्दर्य बोध की परिचायक है यहां के मनमोहक दृश्य, आश्रम में रहने वाले कर्मचारियों तथा पुजारियों के सीधे-सादे व्यवहार, ईमानदारी, मनमौजी स्वभाव तथा अतिथि सत्कार से कोई भी आगन्तुक मुग्ध हो जाता है क्योंकि आध्यात्मिक चेतना, आध्यात्मिक चिंतन धार्मिक, नैतिक मूल्यों की स्वाभाविक अभिव्यजना होती है।

सत्यं शिव सुन्दरं की भावनात्मक पृष्टभूमि पर निर्मित कलात्मक मूर्तियां (1) हनुमानजी, (2) राधाकृष्ण (3) रामावतार (4) गणेशजी (5) अन्नपूर्णा (6) विशाल शिव लिंग जो (11×10 ') (7) विशाल नान्देश्वर 22 feet(8) नवदुर्गा (9) अन्नपूर्णा (10) शंकर जी (सदा महादेव) 3 feet (11) लक्ष्मीजी (12) गायत्री (नवदुर्गा) (13) विराट रूप (14) शिवालय (15) शंकरजी (16) सन्तोषी माता (17) तुलसीदास (18) सूर्यनारायण (19) नृसिंहजी (20)) गंगा जी (21) भैरूजी (22) वावन अवतार (23) शेषनागजी (24) विश्वकर्मा (25) महाकाली (26) ध्रुव भक्त (27) प्रहलाद (28) सरस्वती जी (29) मोटा महादेव (30) नारदजी (31) दत्तात्रेय इसके अलावा श्री रामेश्वरदास जी की विशाल प्रतिमायें भी है यह समस्त मूर्तियां शीशे में जड़ी हुई है। ये मूर्तियां वास्तुकला की दृष्टि से अद्‌भूत है। ये मूर्तियां मानवीय, सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करती है। ये मूर्तियां

शेखावाटी के प्रसिद्ध मूर्तिकार श्री राजानन्द खेतड़ी ने बनाई है, जो उनके सौन्दर्य बोध की परिचायक है।

इस आश्रम की स्थापना सम्वत् 2020 में निर्मित की थी। आश्रम अपने विराट स्वरूप एवं अद्भूत प्राकृति सौन्दर्य के कारण धार्मिक आस्था वाले लोगों को ही नहीं, अपितु अनेक पर्यटकों को भी अपनी ओर आकर्षित किया है। यहां दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है यह आश्रम शान्तिपूर्ण व अध्यात्मिक महता के कारण अपना विशेष स्थान रखता ही है अपितु धार्मिक तथा पर्यटन की दृष्टि से भी विख्यात है।

"मरूधरा का नन्दन कानन" पिलानी

झुन्झुनू के चिड़ावा कस्बे से "पिलानी" 15 कि मी दूरी पर स्थित एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक नगरी है बिड़ला की जन्म स्थली पिलानी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उपनिवेश है । यह शेखावाटी में ही नहीं, देश भर में शिक्षा स्थली के रूप में विख्यात है। पुण्य भूमि पिलानी नगरी का सर्वतो सुखी परिष्कार कर उसे प्राचीन और नवीन सभ्यता के उपकरणों द्वारा सुसज्जित कर बिड़ला परिवार ने जनता का बड़ा उपकार किया है। यहां का बिड़ला टेक्नोलोजी एव विज्ञान संस्थान विश्व प्रसिद्ध है। यहां की बिड़ला हवेली जिसका निमार्ण (1862) में हुआ और उसके भित्ति-चित्र सौ वर्ष से भी अधिक पुराने है। इस हवेली की खास विशेषता है इसका संग्रहालय। यह हवेली आज भी भव्य और आकर्षण का केन्द्र है। यहां सरस्वती मन्दिर शुभवर्ण संगमरमर की शिलाओं से अत्यन्त कला पूर्ण शैली में निर्मित किया गया है जो भव्य मनोहरी है। इसका निमार्ण स्वश्री घनश्याम दास बिड़ला ने करवाया है।

पंचवटी यहां के वातावरण को मनभावन बनाने से सक्षम है। शिवगंगा, बिड़ला अस्पताल, वी आई टी एस, सीरी सग्रहालय बिड़ला ऐजुकेशन ट्रस्ट के अर्न्तगत पब्लिक स्कूल तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं ने इसे शिक्षा की महान नगरी का रूप दे दिया है। यह नगर साहित्यक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र है यहां राजस्थान की प्रसिद्ध शोध पत्रिका मरू भारती भी प्रकाशित होती है यहां बिड़ला का प्रसिद्ध डेरी फार्म भी है। शेखावाटी में नवीन और प्राचीन समन्वय की यह प्रसिद्ध शिक्षा की पावन स्थली है। वर्तमान में पिलानी को गांव और शिक्षा के सचित कोष, विज्ञान के नये क्षितिज और अनुष्धन के द्वारा तलासे जा सकते हैं। विद्या बिहार विश्व विद्यालय का रुप पाकर बिड़ला टैक्नोलॉजी एक विज्ञान संस्थान बनकर प्रसिद्ध हो गया हो इस प्रकार यह शेखावाटी का एक कलात्मक व मनमोहक नगर है।

रेतीला शहर "चुरू"

यह शहर कभी शेखावाटी का हिस्सा था लेकिन कालान्तर में अब यह नगर चुरू जिले का मुख्यालय है यह झुन्झुनूं से 50 कि मी की दूरी पर स्थित

है। रेगिस्तान में यह एक कला नगरी है। यह नगर श्री लोक साहित्य शोध संस्थान है जो एक प्रमुख साहित्य एवं सांकमतिक संस्थान है यहां के ख्याल गायक सारे राजस्थान में प्रसिद्ध हैं। यहां कोठारी सेठो की विशाल हवेलियां है जिनका निमार्ण 1915 में हुआ था। हवेली मौन है लेकिन कलात्मकता विहिन नहीं है, यह नव वधुसी आज भी आकर्षक है। यहां शिक्षा विभाग के उपनिदेशक का कार्यालय भी है। यहां सभी आधुनकि सुविधायें उपलब्ध है। यहां नगर के चारों और रेत के टीले हैं जिन्हें यहां धोरे कहते हैं। ये सुनहले रूपहले होते हैं जो अपनी जगह बदलते रहते हैं। यहां के मन्दिरों की निमार्ण कला उच्च कोटी की है रेगिस्तान में सफर करते हुए ऊंटों के कारवां आपको यहां दिखाई देगे यह शेखावाटी का प्राचीन रेतीला शहर है।

शेखावाटी की सास्कृतिक नगरी-सीकर

झुन्झुनूं से जयपुर जाने वाले मुख्य मार्ग पर स्थित सास्कृतिक एव ऐतिहासिक नगर है। जिसकी स्थापना राजा शिव सिंह जी सन्.... में की थी। यहां ऐतिहासिक किला है। यह नगर अत्यन्त ऐतिहासिक महत्व का है, जहां शस्त्रागार भी है यहां जौहरीमल वियानी हवेली जिसका निमार्ण 1920 में हुआ था। इसका ब्लू प्रिन्ट चित्तकार्षक तथा कलात्मक है। यहां का जुबली हाल, सुन्दर सजावट के कारण दर्शकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है। यहा के मदिर कल्याण कालेज, चिकित्सालय देखने योग्य है। यहां के निवासी सारे भारतवर्ष मे व्यापार करते हैं। यहां की बन्धाई की चुनडियां देश भर में प्रसिद्ध हैं। यह नगर शेखावाटी का पेरिस है। जो अब जिले का मुख्यालय भी है। सभ्यता और सास्कृति के नये उजाले में से गुजरता हुआ यह नगर नया रूप धारण कर रहा है और यहां विकास के नये आयाम पैदा हुए हैं। यहां अनेक शैक्षणिक व सास्कृतिक संस्थायें हैं जो अपनी गतिविधियों के द्वारा लोक संस्कृति का विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। अब नगर एक मानवता के धर्म में जी रहा है। यहां नया आलोक और नया विकास हो रहा है। यहां के लोक गीतों, लोक चरितों का यहां के लोक जीवन पर बहुत प्रभाव है। इस तरह इस नगर को यदि शेखावाटी की सांस्कृतिक नगरी की संज्ञा दी जाये तो भी अतिश्योक्ती नहीं होगा।

साम्प्रदायिक एकता का प्रतीक—नरहड़

एक स्थान का सम्पूर्ण परिवेश हर्षोलास, मन वान्छित फलों की इच्छा और पीर बाबा श्रद्धा युक्त है। भक्त जनों के कारण यहां भी दरगाह धार्मिक सदभाव, न्याय और प्रेम का केन्द्र बन गई है।

शेखावाटी का प्राचीन नगर – सूरजगढ़

सूरजगढ यह नगर झुन्झुनूं से 18 मील दूर स्थित है जिसको 1778 में श्री सूरजमलजी ने अढीचा के नाम से बसाया था जिसका बाद में नाम

बदलकर सुरजगढ़ करा दिया गया था। उन्होंने यहां एक किला छतरी, तथा कुआ बनवाया था। यह शेखावाटी के 12 प्राचीन नगरों में से एक है जहां अनाज की प्रसिद्ध मण्डी है। इस नगर में दीवान खाना श्री कृष्ण परिषद पुस्तकालय, रघुनाथ जी का मंदिर, मां जी साहब का मन्दिर दर्शनीय है। शेखावाटी में यहां के श्री रघुनाथ दातव्य औषधालय में लकवे के इलाज की समुचित व्यवस्था रही है।

शेखावाटी का प्राचीन ऐतिहासिक नगर बगड़

झुन्झुनू से 14 कि.मी. दूर यह नगर स्थित है। कहते है सातवी या आठवी शताब्दी में यह नगर बसाया गया था इसकी आबादी 10000 के करीब है। यहां चौहानों का राज रहा है। और 15वीं शताब्दी में यहां पठान आये और नरहड़ के शासक अलाउद्दीन खां नागड़ ने बगड़ को अपनी राजधानी बनाया। शारदुल सिंह ने आखरी नवाब बब्दुल करीब खा को हरा कर अपना कब्जा कर लिया। बाद में आजादी प्राप्त होने तक पांच पानों के अधीन रहा।

यहां के धार्मिक व ऐतिहासिक स्थानों में रूपादास का मन्दिर, हजतुल्ला शाह की दरगाह फतेहचन्द ओझा का तालाब यहां पीरामल बी. एड महाविद्यालय, पीरामल हायर सैकण्डरी स्कूल पीरामल बालिका हायर सैकण्डरी स्कूल, पीरामल ट्रस्ट द्वारा संचालित है। विश्वम्भर लाल महेश्वरी हायर सैकण्डरी स्कूल तथा रूंगटा परिवार द्वारा यहां संस्कृत कालेज भी संचालित है। यहां माखरिया सार्वजनिक पुस्तकालय भी है। बगड़ के साथ कबीला राजपूत शासक और सेठ साहूकार सभी के नाम किसी न किसी रूप में परिबन्द हैं। यहां पर सभी आवश्यक सुविधाएं हैं। यह एक ऐसा नगर है यहां शिक्षा की अखण्ड ज्योति प्रज्वलित हो रही हैं। और यहां का परिवेश मनोहर है। शेखावाटी के 12 प्राचीनतम नगरों में से यह एक है। जहां इतिहास कई दफा दस्तक सुन चुका है। यहां कई साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएं भी हैं। जो साहित्यिक व सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र बनी हुई है। यहां की धरती में जन्म लेकर देश के अनेक उद्योगपतियों ने देश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

परम्परागत शान शौकत का प्रतीक-महनसर

झुन्झुनू से 27 मील की दूरी पर स्थित हैं। यहां नवल सिंह जी ने (1825) में एक गढ़ बनवाया था यहां सोने चांदी की हवेली के कक्ष में सोने की पालिस से दिवारों पर अंकित चित्रावली आकर्षक व दर्शनीय है। रामायण स्वर्ण अक्षरों में लिखी हुई है और सह चित्र है। रामायण के साथ कृष्ण कालीन लीलाएं भी चित्रित हैं। शिवदत्त राय मसकरा की हवेली के एक कक्ष में अंग्रेजी समय के 36 दुलर्भ चित्र परम्परागत शान शौकत के चार बड़े दर्पण से युक्त झरोखों वाले इस कक्ष के छः द्वार है जो भारतीय संस्कृति को अक्षण्य रखे हुए है। ये चित्र यहां के लक्ष्मी पूजा की कला प्रियता को भी दर्शाते है।

इन्द्रधनुष रंगो की घटा में आलोकित दैदीव्यमान नगर

फतेहपुर-शेखावाटी —यह नगर शेखावाटी के उत्तरी पश्चिम कोने पर झुन्झुनूं से 26 मील पश्चिम में स्थित है। एक ऐतिहासिक नगर है। जो सन् 1451 में फतहखाँ द्वारा बसाया गया था यहां नन्द लाल भरतिया तथा सिघानियां सेठो की भव्य तथा कलात्मक हवेलियां है जिनकी तरफ सभी की नजरें मुड जाती है। इन हवेलियों पर बेल बूटों एवं रास लीलाओं हाथी घोडों के साथ लोक चेतना के वे चित्र भी कोरे गये है। जिनका सम्बन्ध पारिवारिक और मांगलिक संस्कारो से है ये हवेलियां शेखावाटी में थी। गौरवशाली परम्पराओं तथा लोक संस्कृति की प्रतीक है इसके अलावा इस नगर में एक सौ के करीब पनघट के प्राचीन कुए भी हैं जिनकी वास्तुकला दर्शनीय है इनकी कलात्मक मिनारों अलंकरण एवं कुओं के सौन्दर्य भी उत्कृष्ट निमार्ण कला के परिचायक हैं। जहाँ ये हवेलियां और कुएं सेठों को अपनी जन्म भूमि के प्रति प्रेम और लगाव को दर्शाती हैं। वहां ये शेखावाटी की सांस्कृतिक गतिविधियो का भी परिचय देती है। जहां सुखा नन्द जी द्वारा 1965 सम्वत् में स्थापित श्री गुरुमुखराय जैन पाठशाला भी दर्शनीय है। यहां के दिगम्बर जैन मन्दिर में चांदी का रथ भी है जो श्री कृष्ण सुखा नन्द जी द्वारा भेट किया गया था जिसमें श्री पारस नाथ जी की सवारी निकाली जाती है। सेठ सुखानन्द जी इतने दयालु तथा परोपकारी थे कि सीकर ठिकाने में दशहरा के दिन इन्होंने जीव हिंसा बन्द करवाई थी। यहां श्री लक्ष्मी नाथ का मन्दिर जिसका निमार्ण 1740 में हुआ था। और गणेश का मन्दिर भी शेखावाटी क्षेत्र की गौरवशाली संस्कृति का प्रतीक है। यहां अन्य अनेक साहित्यक व सांस्कृतिव संस्थाएं भी हैं। इसके अलावा यहां राजस्थान का प्रसिद्ध भेड फार्म भी है। यहां एक अतिथि ग्रह सुरेश सदन भी अति आधुनिक सुविधाओं से युक्त है। यह वह नगर है जहां स्नेह ममता और परोपकार की त्रिवेणी प्रवाहित है।

महान विभूतियों की कर्मस्थली - खेतड़ी

अरावली पर्वतमाला की गोद में बसा हुआ खेतडी शहर भारत के मानचित्र में एक प्रमुख स्थान रखता है इसका इतिहास अत्यधिक प्राचीन है। यहां एक विशाल पहाड है जिसकी चोटी पर भोपालगढ बनवाया था श्री भोपाल सिंह जी ने और 1736 में खेतडी को अपनी राजधानी बनाई थी। अर्थ लोलुप यवन आक्रमणकारी महमूद गजनवी का एक हमला खेतडी पर भी हुआ था क्योंकि तत्कालीन राजस्थान के ऐतिहासिक प्रमाणों में स्वर्ण गिरी के नाम से विख्यात था देश भक्त मोतीलाल नेहरू का दस वर्ष तक का बाल्यकाल खेतडी में बीता था। पं जवाहर लाल नेहरू के ताऊ जी श्री नन्द लाल नेहरू खेतडी में 7 साल दीवान रहे थे तथा प्रसिद्ध विद्वान व सन्तस्वामी विवेकानन्द जी ने खेतडी में छ माह तक प्रवास किया था। खेतडी शहर में पुरोहित जी रामनाथ जी की हवेली प्रसिद्ध है जहां जेल खाना था। यहां विशाल दीवान खाना की उपरी

मंजिल पर फुल गोरव, फवह विलास तथा छवि विलास है। कोठि जय निवास सुख महल, अजीत हास्पीटल, अजित निवास बाग, बन्ध, अजीत सागर, जय सिंह हाई स्कूल, चुडावतजी, राणावत जी और भटियाजी के विशाल मन्दिर, सेठ पन्नालाल का तालाब प्राचीन कला पूर्ण मूर्तियां दर्शनीयस्थल हैं। पुरातत्व महत्व की सामग्री खेतडी के निकट गांव में बिखरी पडी है। खेतडी के पास ही शिमला गांव में शेर साह सूरी ने 308 कुओं का निमार्ण करवाया था इतिहासकारों की यह राय है कि शेरशाह सूरी का जन्म शिमला में हुआ था। खेतडी के बाघोर और भोपाल गढ के किले शेखावाटी क्षेत्र के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल हैं। खेतडी के राज पण्डित तथा व्याकरण शास्त्र के विख्यात पंडित नारायण दास शास्त्री के अष्टाधामी एवं महाभाष्यादि का अध्ययन स्वामी विवेकानन्द जी ने किया था। खेतडी में महाराजा अजीत सिंह जी एक लोकप्रिय शासक हुए हैं खेतडी की पर्वतमालाओं में ताम्र तथा स्वर्ण जैसी खनिज प्रचुर मात्रा में है खेतडी में तौंबा का एक एशिया में प्रसिद्ध कारखाना भी है। जो वर्तमान में हिन्दुस्तान ताम्र परियोजना के नाम से विख्यात है।

धन कुबेरो की नगरी-नवलगढ़

नवलगढ झुन्झुनूं से दक्षिण की ओर 24 मील दूरी पर स्थित है इसे 1737 में नवलसिंह जी ने बसाया था जहां एक शानदार दुर्ग है। यह नगर अनेक बडे उद्योगपतियों की जन्मस्थली है। यहां की आठों हवेलिया के नाम से प्रसिद्ध हवेलियां आज भी स्थापत्यकला का जीता जागता नमूना है। और यह हवेलियां बोलती बतियाती सी प्रतीत हो रही हैं।

यह नगर शेखावाटी के ऐतिहासिक व दर्शनीय स्थल के कारण सभी को अपनी और आकर्षित करता रहा है। यहां की सामाजिक व सांस्कृतिक गतिविधियों ने अनेक संघठनों तथा संस्थाओं को जन्म दिया है।

यहां के रामदेव जी के मन्दिर को सिद्ध पीठ कहा जाता है। नगर के अनेक धार्मिक स्थलों में रामदेव जी के मन्दिर सहित बाजार के मध्य स्थित बडे गोपीनाथ जी के मन्दिर, गोगापीर का मन्दिर, कल्याण जी का मन्दिर, वीर बाला जी का मन्दिर, जानकीनाथ जी का मन्दिर आदि प्रमुख आकर्षण का केन्द्र हैं।

यहां के रावल मदन सिंह जी, सांवरमल बोसातिया मितर, तथा डा कन्हैया लाल सहल का नाम इस नगरी के काया पलट में विशेष हाथ रहा है।

नवलगढ की अपनी सांस्कृतिक परम्परायें रही हैं। साहित्य, कला संस्कृति व इतिहास के क्षेत्रों में जैसा विकास यहां दृष्टिगत होता है वैसा शेखावाटी में अन्यत्र नहीं। वैभव की प्रीतक विशाल हवेलियां और आधुनिक स्थलों से भरपूर सेकसरिया, पाटोदिया, मुरारका, नेवटिया, पौद्दार आदि उद्योगपतियों की जन्मस्थली अपने अतीत की कथा दुहराती है।

रेत के धोरों में थिरकता शहर (झुन्झुनूं)

भारत की राजधानी दिल्ली से 172 कि. मी. दूर पश्चिमी और शेखावाटी में झुन्झुनूं एक प्राचीन ऐतिहासिक नगर है। पश्चिमोत्तर पहाड़ी की तलहटी में बसा यह नगर आज भी अपनी ऐतिहासिकता के लिए प्रसिद्ध है। यहां रूपगढ़ आखागढ़ रावरगढ़ तथा बादलगढ़ के प्रसिद्ध किले हैं। मा. जी समसतासर खेमाजी मेहतानी जी की बावड़ी, गोपीनाथ जी का मन्दिर, पंचदेव मन्दिर, खेतड़ी महल, बहादुर सिंह की छतरी, नेहरू उद्यान, सामुदायिक केन्द्र गायत्री स्वेताम्बर जैन मन्दिर मन्दिर, शक्ति पीठ सेठ मोतीलाल महाविद्यालय, आदि दर्शनिक स्थल है। सूरजगढ़ महल वसाद यह वह शहर है जहां कई दफा इतिहास की दस्तक सुनी गई है। आधुनिक सभी साधन सुविधाओं युक्त यह शेखावाटी का एक शानदार तथा ऐतिहासिक नगर गिना जाता है। यह कम लोगों को मालूम है कि राजपूताना राइफलस के प्रशिक्षण केन्द्र की जन्म भूमि झुन्झुनूं शहर ही है। सन् 1830 ई. लगभग ले कर्नल लाकेट की रिपोर्ट के अनुसार सन् 1834 में मेजर हेनरी फोरेस्टर को इस इलाके में भेजा गया था। और यहां शेखावाटी ब्रिगेड के नाम से एक पलटन खडी की गई थी। यह ब्रिगेड कालान्तर में 13 राजपूत, 13 शेखावाटी बटालियन न. 10 बी बटालियन राजपूताना राइफल बनी, बाद में यह राजपूताना राइफल प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में परिवर्तित हो गई है। ब्रिग्रेड के परेड ग्राउन्ड पर ही मोतीलाल कालेज बना हुआ है। भारतीय संस्कृति के परिवेश में राजस्थानी लोक संस्कृति का सुचिर स्वरूप इस शहर में देखने को मिलता है। यह प्राचीन नगर अपनी ऐतिहासिकता के साथ आंचलिक पृष्ठभूमि के कारण न केवल प्रसिद्ध है, बल्कि ये जनजीवन की आस्था का परिचालक भी है।

विगत के वैभव का प्रतीक — सिंघाणा

सिंघाणा · यह नगर खेतड़ी से 12 कि.मी. दूर प्राचीन एवं ऐतिहासिक कस्बा है। यह कस्बा शेखावतों के अधिकार में था। इससे पूर्व यह परगना सीधा शाही खालसे में था। सिक्का ढालने की शाही टकशाल यहीं पर थी। बादशाह अहमदशाह के शासनकाल में डा. जोरावरसिंह के बडे प्रभु बखत सिंह ने शेखजादों को निकालकर सन् (1807) में सिंघाणा पर अधिकार किया। सिंघाणा के अधिक भाग पर भोपा सासिंह खेतडी का और आधे पर बखत सिंह के पुत्र अर्जुन सिंह चौरडी का बाद में अर्जुन सिह वाला आधा भाग डा नवल सिंह और केशरी सिंह जी के अधिकार में चला गया। यहां गोपीनाथ जी का बडा मन्दिर, गंगा माई का मन्दिर, देवी जी का मन्दिर, हरिदाश जी मन्दिर, बिहारी जी का मन्दिर, गंगा का कुंड, मोहबलीशाह की दरगाह, पीर जामा मस्जिद, ईदगाह, पहाड पर बाबा जी की मढी तथा मोडावाली बगीची, अकबर की छतरी, नन्दलाल सेठ की धर्मशाला आदि यहां के प्रमुख आकर्षण के केन्द्र है। सिंघाणा के खंडहर विगत के वैभव के मूक साक्षी हैं। यह गांव झुन्झुनूं और नारनोल के बीच

स्थित होने से कई बार इतिहास की दस्तक, सुन चुका है। इस भूमि का प्रत्येक रजकण भारतीय संस्कृति व सभ्यता का दर्पण है।

दो संस्कृतियों का मिलन स्थल लुहारू :

यह एक प्राचीन ऐतिहासिक नगर है जो कभी शेखावाटी का एक प्रमुख नगर था। यहां के नवाब प्रसिद्ध हुए हैं। यह नगर शेखावाटी की सांस्कृतिक धरोहर है। अब यह नगर हरियाणा राज्य में है यह पिलानी के नजदीक है। विगत में यह नवाबों के वैभव तथा शान शौकत का नगर है। अब इसका इतना महत्व नहीं रहा। जहां यह नगर हरियाणा और राजस्थान की सांस्कृतियों का संगम स्थल है, वहां यह ऐतिहासिक व आध्यात्मिक उपलब्धियों के लिए भी प्रसिद्ध है।

प्रकृतिक छटाओं से भरपूर शहर : सामोद :

जयपुर से 38 कि. मी. दूर स्थित है यहां के पहाड घाटियां, हवेलियां तथा महल प्रमुख आकर्षण का केन्द्र है। रावल शिवसिंह जी के महल में दरबार हाल, शीश महल कलात्मक जीवन की महत्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। शीश महल में कांच का काम, गनेश पोल जनानी, ड्योढी कचेहरी दिवाने खाश, भीत्ति चित्र, आयातकार प्रांगण के मध्य उद्यान फव्वारे सपाट छत वाला गर्भ ग्रहयुक्त गोबिन्द जी का मन्दिर विशेष उल्लेखनीय है।

सामोद के शासक गोपाल जी ने 1593 में शेरशाह सूरी को चाक्सू के पास परास्त किया था। 1583 में बिहारीदास ने यहां किला बनवाया था। सामोद के लखेरों की चूडियां प्रसिद्ध हैं। पहाड की चोटी पर स्थित अजीतसिंह का बनाया हुआ अजीतगढ दूर से दिखाई देता है। यहां पुरोहीत दरोगा एवं शाह जी की हवेलियों में चित्रकारी व बेल-बूटे मनमोहक हैं। यह नगर प्राकृतिक छटाओं से भरपूर सैलानियों के लिए आकर्षण का केन्द्र है, जिसकी छटा ही निराली है।

सेठों की नगरी – लक्ष्मणगढ :

पर्यटन का प्रसिद्ध केन्द्र — डूण्डलोद :

यह मुकुन्दगढ़ से दस किलोमीटर दूर स्थित है। यहां एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक किला है जिसका निमार्ण 1765 में हुआ था। यहां गोयनका सेठों की भव्य कलात्मक हवेली है जिसका निमार्ण 1911 में हुआ था। यहां का सत्यनारायण जी का मन्दिर विशेष उल्लेखनीय है जो कला का एक जीता जागता नमूना है। यहां एक शानदार पुस्तकालय है जहां दुर्लभ पुस्तकें भी उपलब्ध हैं। इस नगर का परिवेश मनमोहक है। यह नगर कला व संस्कृति का केन्द्र है। प्रकृति की हरियाली ओढे यह नगर एक दुल्हन सा लगता है जो सैलानियों को लुभाता है।

कला नगरी – "मुकुन्दगढ़"

मुकुन्दगढ़ : नवलगढ़ से 6 मील व झुन्झुनूं से 18 मील दूरी पर बसा हुआ है। इसको मुकुन्दसिंह जी ने सन् 1860 मे मौजे साहब सर ग्रमा को मुकुन्दगढ़ नाम दिया। यहां बहादुरसिंह जी ने एक महल का भी निमार्ण करवाया। यहां कानौडिया हवेली तथा शारदा सदन शिक्षण संस्थान प्रमुख आकर्षण के केन्द्र है। यहां कानौडिया सेवा केन्द्र, कैमिकल एण्ड रिसर्च इन्स्टीट्यूट ग्रामीण चिकित्सा की प्रसिद्ध संस्था भी है। यहां का कला संसार जहां इतिहास, सस्कृति रंग-रूप खालता हुआ प्रसिद्ध चित्रकार राजकुमार इसी नगर का निवासी है। श्री भागेलाल चतुर्वेदी इसी नगर में साधनारत है। इस प्रकार यह नगर सास्कृतिक व साहित्यिक गतिविधियों का प्रमुख है।

मंडावा झुंझुनूं से 18 मील की दूरी पर स्थित है। यहा सम्वत 1812 में एक गढ़ का निमार्ण श्री नवलसिंह जी ने करवाया था। यहां चौखानी, गोयनका, लाडीया और सराफा सेठों की हवेलिया, परम्परागत ढंग से बनाये गये दरवाजों, खिड़कियों और उन पर अंकित भीत्ति चित्रों वाली, यह कलात्मक हवेलियां मौन मुखरित है। यहां के शिवमन्दिर में एक पारदर्शी शिवलिंग है जिसकी दूसरी ओर से हस्त रेखाये देखी जा सकती हैं जो सैकडों वर्ष पुरानी है।

रामगढ़ (शेखावाटी) यह शेखावाटी का एक सेठाना नगर है, यहा का शनीश्चर जी का साहवी मन्दिर, जिसका निमार्ण 1884 में हुआ था, चित्रकला और शीशों का आकर्षण विशेष उल्लेखनीय है और मन्दिर की पर्स भी शानदार है। छत्तरियों की कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

बिसाऊ (शेखावाटी का हृदय)

शेखावाटी में इसका अपना गौरवपूर्ण स्थान है। यहां के इतिहास ने भूगोल को बनाने में योग दिया है तो भूगोल ने इतिहास को सदा नया रूप दिया है। बिसाऊ की गणना सन् 1931 के पूर्व के नगरों में की जाती है। बुढ़िया महादेव का मंदिर, भोमिया जी का मंदिर, जुझारजी का मंदिर, समसरवां पीर

की दरगाह आदि स्थान अपना विशेष महत्व रखते हैं। उत्तरी दरवाजे के बाहर पौद्दारों की छतरी के सामने जैन साधुओं पर निर्मित जो छतरियां नगर की प्राचिन समृद्धि की द्योतक है।

यहां दो अस्पताल हैं जो आवश्यक उपकरणों से सुसज्जित हैं। झुंझुनूं वालों का अस्पताल प्रसिद्धि पर है। यहां का गढ पूर्णतया सुरक्षित था। यहां पौद्दारों की छतरी स्थापत्य कला का शानदार नमूना है। यहां के सेठों में पोद्दारों की सात हवेलियां, सेठ मोतीलाल सिगलिया की हवेली, रंगमहल में भित्ति चित्रों से जयदयाल केडिया की हवेली, सेठ हीरालाल बनारसीलाल की हवेली भिति चित्रों खासकर लैला मजनू, हीर रांझा गोपीचन्द भरथरी के चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। *बिसाऊ की रामलीला शेखावाटी में सर्वाधिक प्रसिद्ध लीला* कहीं जाती है।

बिसाऊ में बिहारी जी का मंदिर, नृसिंहजी देव का मंदिर, लक्ष्मीनारायण जी का मदिर, सत्यनारायण गोविन्द देव जी का मंदिर, काली जी का मदिर प्रसिद्ध मंदिरों में गिने जाते हैं।

दिगम्बर जैन मंदिर, गूगामैडी, सूरसागर, धवल पालिया, तपसी का मंदिर भक्तपुरा बालाजी प्रसिद्ध सांस्कृतिक केन्द्र है। यहां केडिया, पौद्दार, जटिया, झुंझुनूंवाला सिंघानिया बजाज, रूंगटा, टीबडे वाल सिगलिया परिवार प्रसिद्ध व्यावसायिक घराने हैं। सेठ दुर्गादत्त रामकुमार जटिया, डा भनुभाई शाह, गोरधन कसेरा, *विश्वंभर दयाल रूंगटा, दुर्गादत्त हारिति, रामगोपाल जटिया,* गिरधारीलाल झुंझुनूं वाला प्रसिद्ध समाज सेवी हुए हैं।

राजस्थान साहित्य समिति तथा वरुण साहित्य परिषद यहां की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्थायें हैं जो साहित्य कला इतिहास संस्कृति की खोज शोध करके साहित्य की अभिवृद्धि कर रही हैं। डा *मनोहर शर्मा 'श्रीलाल मिश्र'* डा उदयवीर शर्मा, अमोलकचंद, तुलाराम जोशी जांगिड आदि प्रसिद्ध साहित्यकार हैं।

यहां 15 धर्मशालायों, 11 मंदिर, 14 कुण्ड, 25 बगीची, 44 कूयें, 9 कूई, 11 तालाब, जलाशय योजना टेलेफोन, विद्युत रामलीला कमेटी, कृषि उपज मंडी, पशु चिकित्सालय, पंजाब बैंक, बडौदा बैंक, लायन्स क्लब, सहकारी बैंक, पोस्ट आफिस, भेड ऊन विभाग, रेलवे आदि सभी सुविधायें हैं।

यहां के सभी नागरिक नगर के विकास के लिये सदैव सक्रिय रहे हैं जिसका प्रभाव यहां की सभी सांस्कृतिक, सामाजिक, व्यापारिक, शैक्षणिक, साहित्यिक, धार्मिक राजनीति तथा अन्य जनसेवी संस्थायें हैं।

शेखावतों का समागम स्थल : शौर्य, बलिदान का प्रतीक

उदयपुरवाटी झुंझुनूं से दक्षिण में 20 कोस की दूरी पर स्थित पहाड तहमहरी में उदयपुर बसा हुआ है। भोजराज जी के वंशज शेखावतों की यह आदि और

प्रसिद्ध स्थान है। भोजराज शेखावतों ने यहीं पर शक्ति संचय करके झुंझुनू/नरहड/सिंघाण आदि प्रगनों को जीतने का साहसिक कार्य किया था। राजकीय दस्तावेजों में इसे उदयपुरवाटी लिखते हैं। कर्नल टाड के शब्दों में यह स्थान शेखावतों का समागत स्थल था। बदलते हुए परिवेश में भी इस नगर का आज भी महत्वपूर्ण स्थान है।

श्रीमाधोपुर : जयपुर से 72 कि. मी. दूर उत्तर पश्चिम में स्थित है। इसे जयपुर के दिवान खुशालीराम बोहरा के पिता जयसा बोहरा ने तत्कालीन महाराजा सवायी माधोपुर के नाम पर इसका नाम माधोपुर रखा। अब यह शहर श्रीमाधोपुर के नाम से प्रसिद्ध है यहां रंगाई छपाई का काम विशेष रूप से होता है। यहां के बंधेज के लुगडे शेखावाटी भर में बल्कि हरियाणा तक जाते है। यहां के पंसारी सेठों की हवेलियां जिसका निमार्ण 1890 में हुआ था कला का जीता जागता नमूना हैं।

गौरवशाली नगर चिड़ावा

शेखावाटी में झुंझुनूं से 36 कि. मी दूर स्थित यह गौरवपूर्ण नगर है। यह एक प्राचीन ऐतिहासिक नगर है। खेतडी राज्य के रेकार्ड में यह दादा विजयगढ के नाम से है। खेतडी के राजा बाघासिंह जी ने यहां एक किला बनवाया था। इसकी सबसे प्राचीन बस्ती बोडिया कुंआ भंगीणिया जोहड है, जो प्राचीनता का प्रतीक है।

विक्रमी, उन्नसवी, शताब्दी चिडावा का स्वर्णयुग था। उस समय कई विभुतियों का अविभाव हुआ, सेठ सूर्यमल जैसा दानवीर, श्री दुलीचन्द जी जैसे संगीतकार, अमीर व शौकीन, पं. रामजीलाल जी जैसे वेदों के ज्ञाता और जानूराम जैसा ख्याल गायक। श्री पीरामल वैद्य नरसी री मायरो के प्रेणता इसके अलावा अनेक कवि, संगीतज्ञ, काव्य मर्मज्ञ हुये हैं।

यह प्रसिद्ध उद्योगपतियों डालमियां, भगेरिया, सोमानी, अडूकिया सेठों, सेवसरियां की जन्म स्थली है। यहां भगेरिया तथा वैद्य की भव्य कलात्मक हवेलियां है जिनका निमार्ण क्रमश (1917, 1909) में हुआ था। ये हवेलियां स्थापत्य कला का जीता जागता नमूना है। शेखावाटी क्षेत्र में चिडावा के विश्व प्रसिद्ध डालमियां परिवार का शिक्षा और चिकित्सा के क्षेत्र में विशेष योगदान है। डालमियां परिवार के द्वारा बालक और बालिकाओं के लिए हायर सैकेण्डरी स्कूल का शानदार तथा सभी आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न भवनों में संचालन हो रहा है। नेत्र चिकित्सा शिविर हर वर्ष आयोजित होते हैं। यही नहीं औद्योगिक क्षेत्र में श्री राम कृष्ण डालमियां तथा समाज सेवा के क्षेत्र में श्री जयदयाल जी डालमियां के नाम सभी लोग जानते है।

यहां सोमानी सेठों द्वारा महाविद्यालय तथा अडूकियां सेठों का सैकेण्डरी स्कूल तथा नेहरू बाल मन्दिर के संस्थापक श्री हजारी लाल शर्मा प्रसिद्ध समाज

सेवी पिलानी विधायक रहे हैं। मीरा महाकाव्य तथा कमला नेहरू महाकाव्य के रचियता श्री परमेश्वर द्विरेफ की साधना स्थली भी रही है। पं गनेश नारायण जी परमहंस की साधना स्थली भी है। यह भूमि उज्वतम आदर्शों तथा जीवन मूल्यों की प्रेरणा स्थली रही है। यह विद्वानों, संतो, समाज सेवियों, उद्योगपतियों, संगीतज्ञों, कवियों की कर्म स्थली रही है।

यह नगर मानव की चिर आवास भूमि है। चिर आवास को लोग संक्षेप में चिरावा कहने लगे जो हृदा अर्थात् भूमि और सरस्वती नदी का मिलन स्थल है। शक्ति बीज है और शिव बीज है। इसलिए शिवपुरीया चिर आवास भूमि को चिड़ावा कहना भी उचित ही है। यह चिर रावा, या चिरावी चित्र आवास भी हो सकती है। महादेव चिरकालीन रव करते हुये मनुष्यों में माधूसे ये इसलिए भी इसे चिडावा या चिढावा कहते हैं। इसलिए पंडित जी ने इस नंदिनी नगरी को शिवपुरी भी कहा था। इस नगरी में सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। यह नगर सभी पक्षों को उजागर करता हुआ नये स्वरूप को ग्रहण कर चुका है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में यह नगर किसी से भी पीछे नहीं रहा। जिले के मध्य स्थित होने की वजह से इस नगर का विशेष राजनैतिक महत्व है। यह नगर शेखावाटी का जीवन नगर है। क्योंकि यहा की जनता में जो माधुर्य मानवता सहज प्रेम भावना, स्नेह और सहानुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति है। ऐसा नगर शेखावाटी में बिरला ही है। यहा के लोगों में एक ऐसी चेतना और तादात्मय है जो प्रत्येक के हृदय को झकझोर कर एक सूत्र में बाधनें का प्रयास करते रहते है। इसीलिए परमहंस पं गनेशनारायण जी ने इस शिवपुरी चिडावा को कभी भी अपनी आंखों से ओझल नहीं होने दिया।

सिद्धपीठ नरहड

नरहड का पुराना नाम अजोधन या अयोद्धा था। यह हजरत शकरवार के विषय में उपलब्ध मुसलमानों की तवारीखों से सिद्ध हो जाता है। जिस समय 13वीं सदी में हजरत शकरवार नरहड आये उस समय इसका नाम अजोधन दूसरा नाम हरिका पतन प्रचलित था। बाद मे इसे पाक पाटण कहने लगे। इसी नाम के साम्य पर 19वीं सदी में मौरगुमरी जिले में भी एक पाक पाटण बसाया गया था। जहां हजरत शकरवार के वंशज फरीद इब्राहीम रहते थे। हंडिया बाबा और नरहड के कुम्हारों की कथा प्रसिद्ध है। नरहड के पूर्व में देवरोड की 2 पहाडियां है उसमें उत्तरकालीन सजीव और दक्षिण वाली निर्जीव है। एक को नारायण तथा दूसरी को नर कहा जाता है। इसी उत्तरी पहाडी पर हंडिया बाबाजी रहा करते थे, जिसने पट्टण शहर अट्टण कहकर नरहड को शाप वध कर दिया। नरहडवासी गंधीली जोहडी में अब भी एक महात्मा बताते है जो कभी प्रकट होकर तथा कभी स्वप्न में प्रकट होकर लोगों की मदद करता है। हजरत शकरवार के पुत्र हमजा भी नरहड में ही सिद्ध पीर

बने और बाद में धरसू निवाजपुर चले गये। वहां उनकी दरगाह है। बाबा बलदेव दास नरहड़ के रहने वाले प्रसिद्ध परमहंस हो चुके है। हिन्दु मुसलमानों की तरह ही नहीं, जैनों की भी यह प्रसिद्ध नगरी रही है। 13वीं सदी की जैन गुवासी में इस स्थान का नाम नहीं है, नरहड़ पाया जाता है। इस प्रकार सिंह स्थलि होने के कारण और पुरानी आवासभूमि होने के कारण पं. गनेशनारायण जी ने भी इसी भूमि को अपनी तपस्या के लिए चुना। नरहड़ कितना पुराना है। इसकी साक्षी केवल वेद और पुराण ही नहीं देते, अपितु इतिहास भी देते हैं। महमूद गजनवी के इतिहासकार औत्वी ने लिखा है कि शिलालेख के आधार पर बताया गया कि यह मन्दिर 40 हजार वर्ष पुराना है। इस प्रकार इस स्थान की चिरकाल उन्नति हो रही है। शेख फरीद शंकर गंज ने नरहड़ के ही पीर हैं। गांव की एक ओर बनी हजरत हाजिब शकरबार शाह के प्राचीन दरगाह के कारण यह स्थल एक तीर्थ रूप में प्रसिद्ध है

नरहड़ में हर वर्ष जनमाष्टमी के दिन दरगाह के बाहर एक बड़ा मेला लगता है। जिसमें बिना भेदभाव के न सिर्फ हिन्दू बल्कि मुसलमान वर्ण सभी धर्मों सम्प्रदायों के अनुयायी भाग लेते हैं। इस स्थल का सम्पूर्ण परिवेश, हर्षोल्लास, मनवान्छित फलों की इच्छा और पीर बाबा की श्रद्धा युक्त है। भक्त जनों के कारण यह दरगाह धार्मिक श्रद्धाभाव, न्याय और प्रेम का केन्द्र बन गई है। शेखावाटी का यह अति प्राचीन ऐतिहासिक स्थल है। जो झुंझुनूं से 22 किलोमीटर है।

अध्याय ११

भित्ति-चित्र और चित्रकला

शेखावाटी की भित्ति-चित्रकला परम्परा का सबसे समृद्ध क्षेत्र है भित्ति-चित्रों की दृष्टि से शेखावाटी को प्रमुख स्थान प्राप्त है। यहां का कोई भी प्राचीन भवन चित्रों से खाली नहीं है। इनमें अनेक प्रकार के चित्र पाये जाते हैं। यहां राजाओं और सामन्तों ने इसे घरों की सजावट का एक अंग समझा था। जैन मंदिर और सनातनी मन्दिरों में भी इस कला ने खूब स्थान पाया।

बिना चित्रों के भवन भूतावास माना जाता था। भवन के प्रमुख द्वार पर गणपति द्वार के दोनों और नारी आकृतियां, अश्वारोही राजारूढ़ सामन्त चित्रित किये जाते थे। आपको यहां दौड़ते हुए ऊंट, रथ, घोड़े, गायों के झुण्ड, हुक्के पीते हुए ग्रामीण लोग पनघट पर पानी भरती हुई ग्राम बालायें, उड़ते हुए पक्षी, सेठ देवी देवता, हरिण, मुर्गा, हनुमान जी, आदि के गृह भित्ति चित्रों से सुसज्जित मिलेंगे।

यहां के चित्रित मन्दिर, छतरियां, हवेलियां, कुए, तालाब, कला-प्रसंगता के परिचारक हैं। मीता माड्या माड़ना सुख समृद्धि का सूचक था। शेखावाटी की तिथि युक्त छतरियां भित्ति-चित्र परम्परा के विकास क्रम की गाथा प्रस्तुत करते हैं। उदयपुरवाटी में जोगीदास जी की छतरी के चित्र प्राचीनतम हैं। परशुराम पुरा में ठाकुर शार्दूलसिंह की छतरी अपनी विविधता की दृष्टि से उल्लेखनीय है। यहीं पर गोपीनाथ जी के मन्दिर में भित्ति-चित्र रोचक हैं। कालान्तर में शेखावाटी में इतने अधिक भित्ति-चित्रों का निमार्ण हुआ जिसका सानी अत्यन्त दुलर्भ है।

जीवन का कोई भी पक्ष धार्मिक, सामाजिक, ऐतिहासिक इन सब कुशल चित्रों की दृष्टि से अछूता नहीं बचा। ये सांस्कृतिक इतिहास की खान है साहित्यक संगीत, कला की जो त्रिवेनी बहती है शेखावाटी क्षेत्र में प्रभावित होती है जिसने राजस्थान की संस्कृति को निजस्व प्रदान किया है।

शेखावाटी में दो प्रकार की पद्धति के भित्ति-चित्र मिलते है। प्रथम पद्धति फ्रेस्को ब्यूनी कहलाती है। इसमें गीली सतह पर रंग का कार्य किया जाता है जिससे रंग सतह में बैठ जाता है और स्थायी हो जाता है। इसके लिए किसी बाइन्डिग मैटीरियल की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस पद्धति से किये

गये चित्र अधिक स्थायी होते हैं। देशी भाषा में इसे आलागीला पद्धति के चित्र कहते हैं। दूसरी पद्धति फ्रेस्को सेको की है इसमें सतह के सूख जाने पर गोंद आदि बाइन्डिंग मैटीरियल को काम में लेकर चित्रांकन किया जाता है। ये चित्र अधिक स्थाई नहीं रहते और कालान्तर में सूर्य के ताप और वर्षा से इनका रंग धूमिल हो जाता है। शेखावाटी में टेम्पेरा पद्धति के चित्र, तैल चित्र भी मिलते हैं। रंग अधिक चटकीले रहे हैं। ऊष्ण और शीतल दोनों तरह के रंगों का प्रयोग मिलता है। यहां के चित्रों का मुख्य गुण चटकीले रंग, प्रवाह युक्त रेखांकन, संजीवन, भावाकृति तथा रूप एवं वर्ण सामजस्य हैं।[1] शेखावाटी हवेलियों में प्रथम पद्धति फ्रेस्को ब्यूनो के चित्र अधिक मिलते हैं अनेक हवेलियों पर शान्त सुखाय चित्र भी देखने को मिलते हैं जैसे दूध बिलोना, झूला झूलना, फूल सूंघना आदि। इस प्रकार के चित्र छोटे-2 कस्बों में स्थित हवेलियों पर अधिक हैं।

अधिकतर हवेलियों पर प्रकृति के चित्र भी हैं जैसे—सूर्य, चन्द्रमा, तारे, बाग आदि इससे स्पष्ट है कि चित्रकारी के क्षेत्र में यहां की कला श्रेष्ठ है।

शेखावाटी की चित्रकला से सुसज्जित ये हवेलियां मानो यह कह रही हैं—

सेठ वसै कलकत्ता, बम्बई, डिब्रूगढ आसाम,
चाकर ठाडे बैठया काटे उमर तमाम।
कुण सूं मुजरो करे हवेलिया बरसां मिले न राम,
बाटड़ली ओवे आवणरी गोखे बैठी शाम॥

इस प्रकार कला के क्षेत्र में ठिकानेदारों तथा साहूकारों का अत्याधिक योगदान रहा है।

झुंझुनूं का समस्त तालाब तथा खेतड़ी का पन्नालाल साह का तालाब भी भित्ति-चित्रों की परम्परा में अपना विशेष स्थान रखते हैं।

शेखावाटी इलाके में सीकर झुंझुनूं, फतेहपुर, चिड़ावा, मंडावा नवलगढ़ पिलानी, महण्सर, रामगढ़, डण्डलौद आदि स्थानों पर चित्ताकर्षक हवेलियां हैं। इस तरह से ये हवेलियां एक खास जाति वर्ग की कला की दृष्टि से अभिरूचि की प्रतिनिधित्व करती हैं। शेखावाटी में जहां राजाओं ने बड़े-बड़े दुर्ग बनाये वहीं सेठों ने इन कलात्मक हवेलियों का निमार्ण कराया। इन हवेलियों में अंकित भित्ति-चित्रों वाली हवेलियों की दीवारों पर पौराणिक कथाओं, लोक कथाओं को जिस ढंग से दीवारों पर अंकित किया गया है उन्हें राजपूतों के महलों की समृद्धि कला की कतार में ला खड़ी करती है।

शेखावाटी में भित्ति-चित्र बनाने वाले कलाकार को चितैरा कहा जाता है। लोक रीति रिवाजों, उत्सवों, पर्वों, देवी देवताओं और मांगलिक संस्कारों के भित्ति चित्र सांस्कृतिक गतिविधियों का परिचय देते हैं।

---

1 पारादत्त निर्विरोध-गाथा शेखावाटी की सोवाली माटी की पृ 51

महाभारत संदर्भ युद्ध व शिकार गणगौर, ढोलामारू, रामबराव : यहां की हवेलियों पर स्त्री-पुरूष, पशु-पक्षी, रेलगाडियों, देवी-देवता, राधा-कृष्ण के चित्र अधिक पाये जाते हैं। अधिकतर भित्ति—चित्रों में लाल, पीला, नीला रंग प्रयोग में लाया जाता है। इन चित्रों में रंग आज भी चमकदार हैं। इन्हें देखने पर यह लगता है कि ये नये है। इसका कारण आरायश पद्धति है।

यों भी शेखावाटी में मांगलिक संस्कारों पर भित्ति चित्रांकन करने का एक रिवाज है। उदाहरण के लिए नवलगढ की बारहमासा चित्रण मंडावा की मौन मुखरित हवेलियां, महणसर की सोने की पालिश वाली हवेली झुंझुनूं में ईसरदास मोदी की सैकडो खिडकियों वाली हवेली जिसमें चित्रांकित कृष्णकालीन लीलाओं को देखकर दर्शक मुग्ध हो जाते हैं। टीबडे वाली हवेली, खेतडी महल, फतेहपुर में नन्दलाल भरतिरी की हवेली मंडावा में सागरमल लाडिया, रामनाथ गोयनका की ऐसी भव्य हवेलियां है जो दर्शकों के लिए विशेष आकर्षण हैं तथा पिलानी में बिडला हवेली जिसके भित्ति-चित्र सैकडों वर्ष पुराने हैं वह भी देखने के योग्य हैं। भितिचित्रों की यात्रा में मुकुन्दगढ, रत्नगढ, बगड, चिडावा, लक्ष्मणगढ, दूदलौद आदि ऐसे प्रमुख स्थल है जहां कि आपको आकर्षक भित्ति-चित्रों की झलक मिल सकती है।

लेकिन शेखावाटी में नारायणगढ में 1500 के करीब भित्ति देखी जा सकती हैं। नवलगढ के गढ में ऐसे कलात्मक बुर्ज हैं जहां अनेकों भित्ति-चित्र उपलब्ध है। मन्दिरों में टीबा बसई का श्री रामेश्वरदास जी का आश्रम भी भित्ति-चित्रकला की दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इन भित्ति-चित्रों में सामन्तीयुग के चित्रों का आधिक्य है और पौराणिक चित्र जन आस्था के लिए बनाए गये हैं। विशेष बात यह है कि इन चित्रों के रंग फीके नहीं पडे है और इतने सजीले और मनभावन हैं तथा आकर्षक है कि दूसरों के मन पर छा जाते है। इन चित्रों के माध्यम से भाव और भावना का प्रसार सजीव और साकार हो उठता है तथा चित्र दर्शक से कुछ कहता हुआ प्रतीत होता है जो वहां के चितेरों ने अपनी सृष्टि अनुपात बुद्धि एवं सम्यक रंग विधान द्वारा सम्भव कर दिखाया है। क्योंकि रंग चढाने वाले पानी के साथ चित्रकार के मन की रसघुल मिल जाती है। ऐसे प्रमुख चित्रकार शेखावाटी में भूरू सिंह, श्री मातुराम वर्मा, फूलाराम, गजानन्द वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं।

शेखावाटी की हवेलियाँ

राजस्थान के उत्तर पूर्व में शेखावाटी क्षेत्र अपने विशाल दुर्ग और छतरियां लिए ही नहीं अपनी विराट हवेलियों के लिए बहुत प्रसिद्ध है।
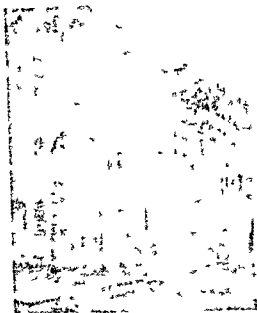
शेखावाटी इलाके में झुंझुनू, फतेहपुर, मंडावा, पिलानी, नवलगढ़, चिडावा, रामगढ़, ढूंढलीद आदि स्थानों पर स्थित ऐसी चित्राकर्षक हवेलियों की कलावीथियों में पर्यटकों का सांत लग जाता है।

1 भरतिया हवेली (नन्दलाल) भरतीया।
2. मोदी हवेली फतेहपुर (ईश्वरदास मोदी झुंझुनू)
3 गोयनका हवेली।
4 बिड़ला हवेली (1862) संग्रहालय।
5 पौधार हवेली।

नवलगढ़ की हवेलियां बोलती बतियाती सी प्रतीत होती हैं और रामगढ़ की हवेलियां एकान्त जीवी अपने में खोई सी लगती हैं। मंडावा की मौन मुखरित हैं।

लोक रीति रिवाजो पर्वों एवं देवी देवताओं और मांगलिक संस्कारों के ये भिति चित्र शेखावाटी की सांस्कृतिक गतिविधियों का भी परिचय देते है। इनमें अधिकांश चित्र धार्मिक हैं। लोक कथात्मक चित्रों की बहुतायात है। जिसमें गणगौर, ढोलामारू, अन्य पर्वों व संस्कारों के साथ रामबारात, युद्ध, शिकार आदि के भी चित्र है। यों भी शेखावाटी का लोक जीवन सहजता एवं सरलता का प्रतीक है। जिसमें मांगलिक संस्कारों पर भित्तियों पर चित्रांकन एक रिवाज है, एक परम्परा है। ये चित्र धार्मिक भावभूमि पर आधारित होते है, इनमें रामायण का तीन प्रसंगों, महाभारत के प्रसंगों, राग रागनियों तथा युद्ध कौशल

के चित्रों की संख्या कम नहीं होती। सभी चित्रों में स्वदेशी पक्के रंगों का प्रयोग किया गया है। इसी कारण इनमें अभी तक चमक बनी हुई है।

झुंझुनूं जिले की नवलगढ़ की विशाल एवं पंक्तिबद्ध राजस्थानी लोक संस्कृति के परिचायक चित्र हैं नवलगढ़ की हवेलियों पर भित्तियों पर बारहमासी चित्रों का अंकन है। भित्ति पर बनाये गये चित्रों के पीछे कलाकारों की दृष्टि परकता रही है।

झुन्झुनूं में इसरदास मोदी को हवेली सुन्दर, आकर्षक एवं भव्यता लिए हुए है। 360 खिड़कियों वाली इस हवेली में अंकित श्री कृष्ण कालीन लीलाओं को देखकर दर्शक दृष्टि पौराणिकता के बीच खो जाती है। खेतड़ी महल, छीबड़े वाली की हवेली भव्य इमारतें है। महनसर में दो कमरे के भवन में स्वर्णाक्षरों में रामायण लिखी हुई है जो अनूठी है। इसी कस्बे में तोलाराम का कमरा जिसमें अंग्रेजों के समय के 36 दुर्लभ चित्र हैं। चार दर्पणों युक्त चार फोरढ़िया और झरोखे वाले इस कमरे में 6 द्वार हैं। जिसमें कहीं भी शहतरि नहीं है। केवल चूने से बना है। मंडावा में सागरमल लाड़िया, रामनाथ गोयनका की हवेली, फतेहपुर में नन्दलाल भरतिया की हवेली व सिरानियों की बड़ी हवेली भी ऐसी भव्य है जिन्हें देखकर दर्शक मुग्ध हो जाते है।

पिलानी में बिड़ला हवेली जिसका निमार्ण 862 में हुआ था, इसके भित्ति-चित्र 100 वर्ष से भी पुराने हैं। इस हवेली की खास विशेषता हे संग्रहालय। वह कमरा भी देखने लायक है जिसमें बिरला परिवार के सदस्यों का जन्म हुआ था।

यह हवेली आज भी आकर्षक एवं भव्य दिखाई देती है। एक तरह से यह हवेलियां एक खास जाति वर्ग की कला के प्रति अभिरूचिका प्रतिनिधित्व करती हैं। राजस्थान में राजपूत राजाओं ने जहां सुरक्षा की दृष्टि से बड़े-बड़े दुर्ग बनाये, उसी तरह से मारवाड़ी सेठों ने इन कलात्मक हवेलियों का निमार्ण करवाया। इनमें बिखरा सौन्दर्य दुर्ग की कला से किसी रूप में कम नहीं। इन मारवाड़ी सेठों ने भी कला और कलाकारों को अश्रय दिया। धन और कला के सानिध्य का परिणाम है शेखवाटी क्षेत्र की कलात्मक हवेलियां।

रेगिस्तानी क्षेत्र में बाहर से परम्परागत ढंग से बनाये गये दरवाजों खिड़कियों और उन पर अंकित भित्ति-चित्रों वाली ये हवेलियां भले ही राजदरबारों की कला से हल्की दिखाई दें लेकिन इन हवेलियों के भीतर राजस्थान की शैली में पौराणिक कथाओं तथा लोक कथाओं को जिस ढंग से दिवारों पर उकेरा गया है वह इन्हें राजपूतों के महलों की समृद्ध कला परम्परा की कतार में ला खड़ा करती है।

इन हवेलियों के भित्ति-चित्रों में एक खास बात है और वह यह कि उनकी रेखाओं में उल्लास और उत्सव की अधिकता है।

इन हवेलियों का अपना अलग ही रोचक इतिहास है। शेखावाटी क्षेत्र से निकलकर कर बहुत से मारवाडी युवक दूसरे हिस्सों में धन कमाने गये, अपनी जन्मस्थली में वापिस आकर, ये हवेलियां बनाकर अपनी जन्मभूमि के प्रति अपने प्रेम और लगाव को ठोस क्रम दे दिया। यह हवेलियां आज भी अपने मालिकों के स्वदेश प्रेम की कथाऐं दुहराती है। देश में चर्चित, जयपुरिया, पोद्दार, बिड़ला भगत, सेकसरिया आदि हवेलियां इसी श्रेणी में आती है।

चित्रकला

कलाओं के क्षेत्र में चित्रकला का विशेष महत्व है। शेखावाटी की चित्रकला की एक स्वतन्त्र शैली है। इसमें सम्पूर्ण जीवन का चित्रण मिलता है। नारी का सौन्दर्य, राधाकृष्ण की लीला, रामायण, महाभारत, जैन कथा में बारहमासा, राजाओं, लोक नायको, देवी देवताओं, राग-रागनियों आदि विद्याओं का चित्रण तरह-तरह की शैलियों में मिलता है। इसमें कई रंगों का उपयोग किया जाता है। जिसमें लाल, पीले, हरे, बैंगनी, काले, सफेद, किसभीसी के साथ सुनहले तथा चाँदी, जैसे चमकदार और आकर्षक रंगों के प्रमुख है। शेखावाटी में इस चित्रकला की अपनी मौलिक शैली है। उस पर कई शैलियों का प्रभाव पड़ा है विशेष कर श्रृंगार, वेशभूषा, गहने।

शेखावाटी में ऐसे कई घराने हैं जो कई वर्षों से यह धंधा करते आ रहे है। वह जनजीवन की घटनाओं से प्रेरित होकर चित्र बनाते है। यह चित्र सस्ते होते है। इनका विषय सीधा जनजीवन और लोक कथायें होती हैं।

चित्रकला की एक और शैली यहां मिलती है, यह है कपड़ों के पटों पर पूरी पड लिख देना, किसी लोक देवता अथवा कहानी को चित्रित करना, पाबू जी की पड तथा रामेश्वर जी की पड बहुत प्रसिद्ध है।

इस नये युग में यहां चित्रकला नया मोड़ ले रही है। आधुनिक कला का भी इन चित्रकारों पर बहुत प्रभाव पड़ा है। शेखावाटी में वर्तमान में राजकुमार मातुरामवर्मा, फूलाराम,. भूर सिंह कई चित्रकार है जो विभिन्न शैलियों में चित्र बनाते हैं। इन चित्रकारों ने ऐसे चित्र बनाये है जिसमें चित्र दर्शक से कुछ कहता हुआ प्रतीत होता है और जिसके माध्यम से भाव और भावना सजीव और साकार हो उठते है।

शेखावाटी विभिन्न कलाओं का केन्द्र है। समय की धूलधूसरित परतें भी उन्हें नहीं छिपा सकी है। बाहर से आने वाले शासक न तो इसे नष्ट ही कर सके और न ही इसे अपने साथ ही ले जा सके। ऐसी कलाओं में शेखावाटी की भित्ति-चित्र कला का कोई जवाब नहीं है।

मेंहदी

माडणों के समान ही लोक चित्रकला का दूसरा अंग है मेंहदी। देश के कोने में स्त्रियां अपने अंग प्रसाधन के लिए मेंहदी का प्रयोग करती हैं। किन्तु राजस्थान में और विशेषकर शेखावाटी में मेंहदी का अपना विशिष्ट स्थान है। वहां यह स्त्रियों की कल्याण भावना, कलात्मक अभिरूचि तथा धार्मिक वृति के साथ जुडी है कोई ऐसा शुभ अवसर नहीं जिसे स्त्रिया मेंहदी रचाये बिना सूना निकल जाने दें सुहागिन स्त्री के लिए तो इसका विशेष महत्व है। जिस घडी वह मंडप के नीचे आकर बैठती है, उस समय से लेकर जीवन की अन्तिम यात्रा आरम्भ करने तक, मेंहदी उसी श्रृंगार के एक विशिष्ट अंग के रूप में निरन्तर उसके साथ रहती है। मेंहदी उसी सुहाग और सौभाग्य का प्रतीक है।

मान्यता है मेंहदी सुहाग की रक्षा करती है और पति की जीवन बेला को बढ़ाती है। फिर यह पति-पत्नि के अक्षुण्य प्रेम का प्रतिक भी है। इसकी पहली परीक्षा मंडप के नीचे होती है जब दूधलेवा जुदाई होती है। उस अवसर पर वर अपनी हथेली के बीच में थोडी सी मेंहदी लेकर वधु का हाथ थामता है दोनों हथेलियां मिलती है और बीच में रखी मेंहदी गीली हथेलियों को रगंना शुरू कर देती है। ऐसा जब विश्वास है कि इस मेंहदी का जितना गहरा रंग चढ़ता है वधु को उतना ही गहरा प्यार अपने पति से मिलता है इसलिए मेंहदी को प्रेम रसरावणी कहा गया है। एक राजस्थानी गीत में पति अपनी प्रियतमा से कहता है —

> प्रेम रस मेंहदा-राचणी
>
> थारो हाथ म्हारे हिवडे ऊपर राख।
>
> प्रेम रस मेंहदी राचणी
>
> थारी मेंहदी पर वारूं पन्ना-ए-जवार।।

राजस्थानी मेंहदी के अभिकल्पां को भी त्यौहारों माग अवसरों, ऋतुओं और नई, पुरानी मेंहदी के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। उनके अपने नाम हैं अर्थात त्यौहार और उत्सव

त्यौहार और उत्सव

गणगौर, श्रावणी तीज, रक्षा बन्धन, होली आदि त्यौहार और विवाह, बच्चे का जन्म जैसे कुछ संस्कारों के लिए कुछ विशिष्ट अभिकल्प सुरक्षित होते है। जब कि अन्य अवसरों पर दलीचा, साध्या का जोडा, घेवर, चोर आदि का उपयोग किया जाता है।

नई और पुरानी मेहन्दी दो रूपों में बाटी जाने लगी है। पुरानी चाल की मेहन्दी के अभिकल्प वर्ग अथवा आभात में बनाये जाते हैं तो नई में वृत।

पुरानी चाल की मेंहदी में पूरी हथेली को भर दिया जाता है। जब कि नयी में बीच का अभिप्राय बनाकर चारों ओर का स्थान खाली छोड़ दिया जाता है। जिससे उसमें उभार आ जाता है। वह प्रभावोत्पादक लगने लगता है। यही नहीं अब तो एक और भी वर्गीकरण-नवीनतम जोड देना आवश्यक लगने लगता है। क्योंकि आजकल जो मेंहदी लगाई जाती है उसमें अभिप्रय वृत की सीमा लांघकर बाहर निकल आया है। दूसरे भिकाग, पष्टकोण, छैबूत्या जैसे पुराने अभिप्रायों का स्थान लता और फल पुष्प आदि लेने लग गये हैं।

सांझी

लोक कलाओं से सांसी का महत्पूर्ण स्थान है, बल्कि कहा जाए कि मांडणा, मेंहदी और सांझी ये विरास की सीढ़ी हैं। मांडणा और मेंहदी मूल रूप से चित्र कला का ही खेल है। जबकि सांझी चित्रकला और मूर्तिकला का समन्वय है। सांझी की एक अलग विशेषता है, इसकी अवधि सांझी श्राद्ध पक्ष के आरम्भ से दशहरे तक की दस दिन कहीं पन्द्रह दिन तो ही पूरे पच्चीस दिन तक होती है।

धार्मिक स्वरूप सांझी शब्द सध्या का अपभ्रंश है दूसरे छोर पर है पथवारी सांझी आश्विन का पर्व है पथवारी कार्तिक का। सांझी का पूजन सायंकाल होता है और पथवारी का उषाकाल में। दोनों का शुद्ध धार्मिक महत्व है

स्वरूप कुमारी कन्याओं का एक त्यौहार है। यह पित्र पद से आरम्भ होकर नवरात्र भर चलता है। दशहरा पर इसका अन्तिम उद्यापन किया जाता है। आश्विन मास की प्रतिपदा से लडकियां संध्या माण्डना शुरू कर देती हैं और पित पक्ष के आखिरी दिन तक उनका यह क्रम चालू रहता है। वे प्रतिदिन एक नई आकृति भीत पर रचती है जो सरल से शुरू होकर दिन प्रतिदिन जटिल होती जाती है और अन्तिम संध्या तो एक पूरा चित्र होती है।

सामग्री और रचना

सांझी मांडणों के लिए आवश्यक सामग्री गोबर, कनेर के सफेद तथा कटैल केशर का पुष्प होते हैं। आश्विन मास की प्रतिपदा में इन उपादानों को लेकर छोटी-2 कुमारियां अपने घर से बाहर आकर द्वार के किसी भी ओर थोडे से खाली स्थान को तनिक ऊँचाई पर गोबर से लीप कर अपना कार्य शुरू कर देती हैं। बहुधा यह कार्य सूर्यास्त से पूर्व ही समाप्त हो जाता है।

सांझी की प्रथम दिवस की आकृति एक तारा होता है। अन्य तिथियों को क्रमश दूज को पांच पचेटा, तीज को सूरज, चौथ को चांद, पंचमी को बन्दरवाल छठी को कैल (कदली खम्ब) सप्तमी को पंखा, अष्टमी को चौपड, नौमी को

पाव साथ्या दशमी को मोर ग्यारस को छाबड़ी, बारस को बीसणो, तेरस को जनेऊ, चौदस को संझया बाई की चार चादया और कापड़ा निसदिन 15 दस दिन तक प्रत्येक चित्र में बनाये जाते है।

पितृ पक्ष समाप्त होने पर इस अन्तिम संध्या को फाड़ कर धूम धाम के साथ जल में गिराया जाता है। इसको विसर्जन करने के लिए धानी और गुड़ लेकर प्रत्येक मोहल्ले की लड़कियां अलग-2 झुण्ड बनाकर जलाशयों की ओर गमन करती हैं। और कुछ लड़कियां इसे दशहरे पर पूरा करती हैं।

संध्या के समय गाये जाने वाले गीतों में बच्चों की अभिरूचि बताती है। देखिये इस गीत में

गुड़ गुड़ गुड़ल्या मुड़ती जाये
जीमें म्हाका संझया बाई वेठ्या जाय
घाघरो चमकता जाय,
लूगड़ी चमकता जाय।
टोक्ली भड़कता जाय।
लूड़लो चमकता जाय,
जीमें म्हाका संझया बाई पेट्या जाय॥

माडणा, सांझी मेंहदी इन तीनों के परम्परागत अभिकल्प त्रिभुज, चतुर्भुज, वृत कोण, स्वास्तिक, बहुभुज जैसी पंचभुज, षड भुज, सप्तभुज, दो सम्पुटित त्रिभुज तथा बावड़ी जैसी ज्यमितीय आकृतियों में तोड़ से बनते है। और इन अभिकल्पों में ये ज्यामितीया आकृतियां हमारे दैनिक उपयोग की अनेकानेक वस्तुओं का रूप धारण कर लेती हैं व इनमें से प्रत्येक का अपना अर्थ है और प्रत्येक का अपना उद्देश्य है। मूल रूप से विज्ञान, कला तंत्र आदी सभी का मूल उद्देश्य अपने-2 माध्यम से मानव के लिए सुख और आनन्द की सृष्टि और सृजन करना है श्रम करके लीपा पेता ओर सुन्दर माडणों से सजा कमान, शुभ सूचक लगता है अपितु उसमें चारो ओर श्री और सुघिता भर जाती है जिसमें आत्मा प्रनिवचीय आनन्द और अकथनीय सुख शान्ति का अनुभव करती है।

हमें देश के एक ऐसे स्वस्थ्य वातावरण का सृजन करना होगा जिसमें ये लोक कलायेंग स्वच्छन्द होकर सांस ले सकें, फल फूल सके, और अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच सके।

मांडणा

मांडणा शब्द की उत्पत्ति हुई है मण्डन से, जिसका अर्थ है सजाना, संवारना, सुन्दर बनाना।

मांडणा कच्चे लिपे-पुते मकानों को सजाने, संवारने की कला है। वह शेखावाटी के घर-घर में मिलती है। और विभिन्न नामों से जानी पहचानी जाती है। जैसे मांडणा

त्यौहार का अवसर हो या विवाहमंडप, मन्दिर का उत्सव हो या कोई मांगलिक कार्य मांडणों के बिना इनकी रौनक अधूरी रहती है। मांडणे धरती और दीवारों पर विभिन्न प्रवृत्तियों को अंकित करने वाली बहुत पुरानी कला है। लेकिन चित्त को लुभा देने वाली कला है। यह कलाकार के कलात्मक अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। इसलिए इसे द्योतक कलाओं में से माना गया है। शेखावाटी के हों या किसी अन्य प्रदेश के परम्परागत रूप से विशेष अवसरों पर बनने वाले मांडणे भारत की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति का प्रतीक हैं। लिपे-पुते घर आंगन पर मांडे हुए मांडणों को देखकर ऐसा लगता है मानो किसी नई नवेली दुल्हन ने श्रृंगार किया हो। इससे घर की शोभा में चार चाँद लग जाते है।

इतिहास

प्रागैतिहासिक काल से ही मांडणो की शुरूआत हो गई थी इसका प्रमाण है इस काल की गुफाओं में निर्मित चित्र मोहन जोदडो एवं हड़प्पा की खुदाई से पाये बर्तनों पर अंकित रेखायें, कोण, वृत्त, पशु, पक्षी एवं फूलों के चित्र भी कला की प्राचीनता दर्शाते है। शेखावाटी क्षेत्र का सुदुर अतीत का इतिहास भी भूगर्भ से भूतल पर उद्धरित हो रहा है। उसमें गणेश्वर (सीकर) के पास सुनारी (झुन्झुनू) के 5000 वर्ष पूर्व जो नवीन तथ्य प्रकाश में आये है। परम्परा की दृष्टि से कला प्रवणता के परिचायक है—भींता माडया मांडणा सुख समृद्धि का वाहक या सूचक था।

मांडणों के उद्गम के साथ बहुत सी रोचक किवदन्तियाँ भी जुड़ी हुई हैं। कहा जाता है कि लक्ष्मण की खींची हुई रेखा में वह शक्ति थी कि रावण कुटिया में प्रवेश नहीं पा सका। रेखा ने अपने प्रभाव से सीता को रावण से सुरक्षित रखा। किसी भी अवसर पर बने मांडणो की रेखायें दिखने में साधारण लगती है परन्तु इनका प्रतीकात्मक अर्थ असाधारण होता है। मांडणों का आधार अनुष्ठानों का प्रतीक है। वर्षा और धूप से अन्न की प्राप्ती तथा अन्न से जीवन का भरण पोषण होता है। प्रतीकों का मानव जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध है। इसकी अभिव्यक्ति मांडणो में हुई है। इन मांडणो में ऋतु, व सूर्य देवता की

प्रधानता है। चौक, कमल का फूल, पान, बिजणी, डमरू, लक्ष्मी जी का पागल्य हाऊ, बैंगन और दिवाली का प्रतीक एक दीया आदि लक्ष्मी पूजन के दिन न सिर्फ शेखावाटी में बल्कि पूरे राजस्थान में मांडे जाने वाले विशेष मांडणे हैं। इन सभी मांडणो की अपनी विशेष पहचान है। अपना प्रतीकात्मक महत्व है।

अलग-अलग व्रत अनुष्ठानों पर अलग-अलग तरह के मांडणे मांडे जाते है सांझी बालों को व्रत कुंवारी लड़कियां हल्दी से शिव, सूर्य, चन्द्र, पलंग, गहने, बर्तन, वृक्ष, पक्षी, नदी, नाले आदि के मांडणे मण्डती हैं। नव वधु के घर में प्रवेश करने से पूर्व बनाये मांडणे में घर गृहस्थी के काम में आने वाली चीजों के अलावा धान पौधा, पालतू पशु, पक्षी के चित्र आंगण में मांडे जाते हैं। ये सब इसका प्रतीक है कि घर, धन, धान्य से भरा रहे तथा वधु दूधो नहाये पूतों फले। मांडणो में अंकित ये सभी आकृतियां धार्मिक व पारम्परिक मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करती हैं जो इनके प्रयोगात्मक अर्थ को समझने का प्रयास करते हैं। इसके लिए मांडणे सिर्फ कला और सौन्दर्य तक सीमित नहीं हैं।

मांडणो की प्रक्रिया

शेखावाटी की स्त्रियां खड़िया से मांडणा माडती है। उन्हें विभिन्न रंगों अथवा तूलिकाओं इत्यादि की आवश्यकता नहीं होती। उनकी आवश्यक सामग्री-कच्ची भूमि, गोबर, राली, पीली मिट्टियां पानी में घुली हुई खड़िया एवं थोड़ी सी रूई, बालों का गुच्छा तथा अंगुलियां अथवा खजूर की लकड़ी की बनी हुई कूंची आदि होती हैं कूंची चतुर स्त्रियों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है। अंगुलियां कहने से तात्पर्य यह है कि इनके द्वारा रेखायें खेंची जाती हैं। रूई अथवा बालों का गुच्छा इक फिलर, का काम करते हैं और अनामिका अंगुली निब का तर्जनी और मध्यमा अंगुलियों से रूई को दबाकर अनामिका अंगुली से रेखा खींचते हुए मांडणा मांडा जाता है।

शेखावाटी में मांडणो की एक और विशेषता है कि उनसे विभिन्न त्यौहारों, मांगलिक अवसरों तथा ऋतुओं के अनुसार और उनमें पाये जाने वाली विभिन्न आकृतियों के अनुसार वर्गीकरण किया जा सकता है जैसे—चौक, विशेष मांगलिक अवसरों पर बनायें जाते हैं। जो चर्तुभुज तथा उसके विभिन्न संयोगों से बनते हैं। इसी प्रकार षटकोण, वृत, स्वास्तिक आदि पर आधारित विभिन्न आकृतियां विभिन्न त्यौहारों पर बनाई जाती हैं।

इस प्रकार मांडणो से स्थानीय रीति-रिवाजों का भी अनुमान लगाया जा सकता है।

अध्याय १२ शेखावाटी के उद्योगपति व "जन कल्याण"

शेखावाटी के उद्योग पतियों ने शहरों और गाँवों के विकास में सदा भरपूर योगदान दिया है। उन्होंने जन कल्याण के लिए गावो तथा शहरों में धर्मशालायें, कुए, कुण्ड, बावडियाँ, प्याऊ, मन्दिर, मठ, छतरियाँ, पाठशालायें, चिकित्सालय, अतिथि गृह, तालाब बगीचियाँ, पानी-बिजली की आपूर्ति आदि अनेक जन कल्याणकारी कार्य करवायें हैं। जो वतर्मान में उनके अतीत की कहानिया कह रही हैं और वही उस काल के इतिहास की कड़ी बनी हुई है।

इन उद्योगपतियों में बिडला, डालमिया, सिघानिया, पौद्दार, झुझनूवाला, सेकसरिया, बजाज, गोयनका, प्रटोदिया, कानोडिया, तोंदी, जटिया, रुइया, चमडिया, सरावगी बागड, खेतान, खेमका आदि उद्योग समूहों की शेखावाटी के विकास में अहम भूमिका रही है। और इनके प्रयत्नों से ही इस क्षेत्र का कायाकल्प हुआ है। उनके दान पुण्य से शेखावाटी का कण-कण सुवासित है। कुछ प्रमुख उद्योगपतियों का विवरण दिया जा रहा है, जिनके कार्यों से उनकी विशिष्टता स्वय झलकती है।

"जनकल्याण कार्यों के प्रेरक"

उद्योगपति–सेठ जुगल किशोर विडला, पिलानी

पिलानी का बिडला परिवार देश, विदेश, अमीर गरीब और दानी-कृष्ण सबके लिए समान रूप से राजा बलदेव दास बिडला से लेकर आज तक सम्मान और श्रद्धा का पात्र रहा है। विश्व में जितनी ख्याति इस परिवार ने प्राप्त की है। उसकी तुलना अन्यों से नहीं की जा सकती।

दानी, उदार, कोमल हृदय और जनता की भलाई के प्रति चिंतित राजा बलदेव दास बिडला के ज्येष्ठ पुत्र जुगलकिशोर बिड़ला का जन्म 23 मई 1883 ई को पिलानी में

हुआ था। शेखावाटी के भाग्य में एक सुयोग्य उद्योगपति का योग जुडा। कालान्तर में उद्योग और व्यवसाय में उन्नत श्री जुगल किशोर जी ने समाज में सेठ जुगल किशोर बिडला नाम से ख्याति अर्जित की थी।

सेठ जुगल किशोर बिडला सन् 1901 से मन्दिरों, अतिथि गृहों, धर्मशालाओं और पाठशालाओं के निर्माण की ओर आकर्षित हुए। अंग्रेजी शासन में उस वक्त ये कार्य करना साधारण बात नहीं थी। उनके जीवन में सात्विकता ने प्रवेश कर लिया था और मानव कल्याण अपना ध्येये बना चुके थे।

सन् 1913 में कलकत्ता में मारवाडी सहायक समिति नामक सस्था का गठन किया और उसके सभापति बनाये गये। श्री जुगल किशोर बिडला तथा समिति ने अनाथों असहायों, पीडित और निर्धनों की सहायता का बीडा उठाया। दानवीर सेठ जुगल किशोर बिडला का नाम समाज के कोने-कोने में फैल गया।

शेखावाटी में सर्वप्रथम देहाती इलाके में शिक्षा के प्रसार के लिए पिलानी में शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। और सन् 1925 में सेठ छाजूराम अलखपुरिया के धन से सेठ बृजमोहन लोयलका ने एक जाट छात्रावास कु पन्नेसिंह की देखरेख में शुरू किया जिसे सुनकर सेठ जुगल किशोर बिडला बहुत प्रसन्न हुए और उसी क्षण उसमें जुड़ गये। कालान्तर में अकेले बिडला परिवार ने ग्रामीणों को शिक्षित कर शेखावाटी में कीर्तिमान स्थापित किया। जन जागृति में उनकी अविस्मरणीय भूमिका रही। यहा के जागीरदारों में ग्रामीणों को शिक्षित करना कोई साधारण काम नहीं था। परन्तु सेठ जुगल किशोर बिडला की प्रेरणा, सहयोग, और सक्रियता के कारण शिक्षा का पौधा विशाल वृक्ष बनकर लहराया और आज प्रकाश का पुज है।

औद्योगिक भारत के निर्माता--"सेठ घनश्याम दास बिडला"

हमारे देश के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक एव शैक्षणिक उत्थान में बिडला परिवार का बडा योगदान रहा है। आज बिडला उद्योग समूह का जो विशाल स्वरूप देखने को मिलता है। उसके पीछे उनके पूर्वजों के प्रवसन की सघर्ष पूर्ण गाथा रही है। इस प्रवसन का इतिहास उनके साहस, धैर्य, परिश्रम एव गतिशीलता का परिचायक है। बिडला घराने की आधुनिक विचारणा एव औद्योगिक सूझबूझ ने उन्हें व्यापारी से आकर राष्ट्र के चोटी के उद्योग समूह तक ही नही अपितु अर्न्तराष्ट्रीय क्षितिज पर पहुचा दिया है।

इस अद्‌भूत सफलता के पीछे घनश्याम दास बिडला का बहु आयामी व्यक्तित्व एव कृतित्व छिपा है जो स्वतत्रता आन्दोलन से लेकर राष्ट्र के औद्योगिक निर्माण का इतिहास है। श्री जी डी बिडला का जन्म रामनवमी के पावन दिवस पर सन् 1894 को पिलानी में श्री बलदेवदास बिडला के यहा हुआ था।

13 वर्ष की अल्पायु में एक आढ़तिये के रूप में अपना व्यापारिक जीवन प्रारम्भ करने वाले श्री बिडला ने शीघ्र ही औद्योगिक जगत में प्रवेश किया और इसमें उत्तरोत्तर प्रगति करते चले गये। भगवत् गीता का स्वाध्याय करने वाले श्री बिडला स्वभाव से भी कर्मयोगी थे। काम से उन्हें गहरा लगाव था। सन् 1915 में आप गाँधी जी के सम्पर्क में आये और शीघ्र ही इनका सहचर्य अत्यधिक घनिष्ट हो गया। स्वाधीनता सग्राम में जब भी कांग्रेस को धन की आवश्यकता पड़ी इसे पूर्ण करने में श्री बिड़ला अग्रणी रहते थे।

जब श्री बिड़ला मात्र 32 वर्ष के थे, उनकी पत्नि का देहान्त हो गया। सर्व सम्पन्न होने के बावजूद श्री बिड़ला ने अपनी सन्तानों के भविष्य को देखते हुए दुबारा विवाह नहीं किया। तीसरे दशक के अन्त में आप भारतीय विधान सभा के लिए चुने गये, लेकिन साम्राज्यिक पूर्वाधिकार अधिनियम के विरोध स्वरूप 1930 में त्यागपत्र दे दिया। श्री बिड़ला सार्वजनिक कार्यों में उदारता पूर्वक दान देते थे। उनका सामाजिक जीवन राष्ट्रीय आन्दोलनों से लेकर विभिन्न शैक्षणिक और तकनीकी संस्थाओं की स्थापना तक में गतिशील रहा। जी. डी. बिडला ने ज्ञान की बजाय व्यावहारिक तकनीक तथा नैतिक ज्ञान पर हमेशा बल दिया। इसकी अभिवृद्धि के लिए उन्होंने 1964 में अपने जन्म स्थान पिलानी में बिडला एजूकेशन ट्रस्ट की स्थापना की जो देश में अपने किस्म का अनूठा सस्थान है। उनका कहना था कि बिडला परिवार के व्यापार का उद्देश्य केवल सम्पत्ति अर्जित करना नहीं, बल्कि देश के अछूते क्षेत्रों का विकास, तकनीकी ज्ञान को बढ़ावा तथा कुशल प्रबधक तैयार करना है। देश के आर्थिक ढाचे में सुधार के लिए वह जीवन पर्यन्त कटिबद्ध रहे।

बाबूजी एक सफल उद्योग कर्मी के साथ युग दृष्टा, नये भारत के निर्माता और स्वतत्रता के हामी थे। वे दूरदर्शी गाँधीवादी विचारक, एव अर्थ शास्त्री, और लेखक साहित्यकार थे। औद्योगिक जगत के लिए युगावतार और देश के लिए एक बड़ा सम्बल थे। इस प्रकार आप कला के संरक्षक, मोहक, सवादपटु, प्रफुल्लवत्ता तथा महान देशभक्त व राष्ट्रवादी थे। आपकी सेवाओं के लिए आपको भारत सरकार ने पद्म विभूषण से सम्मानित किया था। 11 जून 1983 को लन्दन में आपका देहान्त हो गया। कई पीढियों बाद ऐसा कोई व्यक्ति वशिष्ठय पैदा होता है जिसे पीढ़ियो तक भुलाया जाना सम्भव नहीं होता। क्योंकि

श्री बिड़ला का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, विज्ञान तथा कला के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान रहा है वैसे बिड़ला ने मानवता की सेवा में ऐसा कोई क्षेत्र अछूता नहीं छोड़ा। उन्होंने सैंकड़ों सस्थाओं को जो जन कल्याण के कार्यों में लगी हुई हैं बिना किसी जाति, धर्म, भाषा व वर्ग के भेदभाव के बिना खुले दिल और दिमाग से सहायता की। वैसे बिडला परिवार ने राष्ट्र की जो सेवा की है उसका सही मूल्याकन नही किया जा सका है। परन्तु आने वाले समय में इतिहासकार निश्चय ही इसका सही मूल्याकन करेंगे।

श्री दुर्गाप्रसाद मडेलिया—पिलानी

जयपुर राज्यान्तर्गत छोटे से गाव पिलानी में अक्टूबर 1907 में जन्मे श्री दुर्गाप्रसाद मडेलिया ने राची में अपने पिताश्री के निजी सरक्षण में शिक्षा प्राप्त की जो उस समय बिडला जी की वृहद जमींदारी की देखरेख किया करते थे। साढे चौदह वर्ष की अल्पायु में ही श्री मडेलिया बिडला समूह के साथ जुड़ गये और सर्वाधिक देश के जाने-माने प्रसिद्ध औद्योगिक पारखी बाबू श्री घनश्यामदास जी बिड़ला के सम्पर्क में आये। जिन्होंने स्वतन्त्रता सग्राम के दौरान और बाद में इस बात को दृष्टिगत रखा कि "आर्थिक स्वतत्रता के बिना राजनैतिक स्वातत्र्य का कोई अर्थ नहीं है।"

श्री मडेलिया ने घनश्यामदास जी बिड़ला के मार्ग-दर्शन में अनेक उद्योग समूहों की योजनाए तैयार की और उन्हें बखूबी से क्रियान्वित किया। जिनमें से मुख्य नीचे लिखे अनुसार हैं और इनसे विदेशी व्यापार में आयात कम हुआ तथा करोडों की विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकी।

(1) हिन्दुस्तान अल्युमिनियम क लि , रेणकूट (मिर्जापुर) उ प्र
(2) सेन्चुरी टेक्सटाइल्स, बम्बई,
(3) जियाजीराव कौटन मिल्स, ग्वालियर
(4) ग्वालियर रेयोन्स, (वीविंग डिवीजन) ग्वालियर
(5) ग्वालियर रेयोन्स, (इजीनियरिंग डिवीजन एव स्टेपल फाईबर नागदा डिवीजन)
(6) सिमको लि , ग्वालियर एव भरतपुर
(7) मैसूर सीमेंट्स लि , बैंगलोर (कर्नाटक)

(8) ग्वालियर रैयोन, कालीकट
(9) हरिहर पोलीफाईबर्स लि , हरिहर (कर्नाटक)

श्री दुर्गाप्रसाद मडेलिया निम्नलिखित कपनियों में डायरेक्टर भी हैं

(1) जुआरी एग्रो केमिकल्स लि , गोआ
(2) केरला स्पिनर्स लि अलेप्पी (केरला)
(3) सिमको लि , ग्वालियर
(4) थाई रेयोन क , लि , बैंकोक
(5) पी टी. बीरिन्डो फाईबर इण्डस्ट्री, जकार्ता
(6) बिहार कास्टिक एण्ड केमिकल्स लि पटना
(7) इण्डो-गल्फ फर्टीलाइजर्स एण्ड केमिकल्स क लि , जगदीशपुर

इसके अलावा श्री मडेलिया देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक समस्याओं पर गहन अध्ययन करते रहे और उसके लिए आर्थिक समीक्षकों, सामाजिक अधिष्ठताओं एवं राजनयिकों से अपने विचारों का आदान-प्रदान करते रहे और देश की हर क्षेत्र में उन्नति हो इसके लिए विभिन्न सफल प्रयास करते रहे।

श्री मडेलिया का दर्शनशास्त्र में भी गहन अध्ययन है। इस विषय से सम्बन्धित उन्होंने विभिन्न अवसरों पर अपने भाषणों एव लेख में अपने विचार व्यक्त किये हैं।

उनके द्वारा कई भव्य मंदिरों की योजना अत्यन्त सुदर ढग एव आकर्षक मनमोहक सुझावों के साथ सफलीभूत हुई हैं।

प्रसिद्ध उद्योगपति एव शिक्षा प्रेमी दुर्गाप्रसाद मडेलिया "मध्य प्रदेश चेम्बर आफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्री", ग्वालियर के विगत कई वर्षों से अध्यक्ष हैं। वे फेडरेशन आफ मध्य प्रदेश चेम्बर आफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्री, भोपाल के सस्थापक अध्यक्ष भी हैं। श्री मडेलिया रोटरी क्लब, ग्वालियर के अध्यक्ष भी रहे। उनकी सामाजिक एव शैक्षणिक गतिविधियों में विशेष अभिरुचि रही है।

ये अपनी जन्मभूमि में बालकों की शिक्षा, चिकित्सा, सुविधा, गरीबों की आर्थिक सहायता एव आने वाले कल के नागरिकों को सु-सस्कारित करने के लिए सकल्पित हैं। 'मडेलिया चिकित्सालय' में निःशुल्क चिकित्सा सुविधा की व्यवस्था है और 'श्रीमती जानकी देवी मडेलिया गृह विज्ञान विद्यालय' में घरेलू शिक्षा व 'श्रीमती इन्द्रमणि मडेलिया गृह विज्ञान महाविद्यालय' में बालिकाओं को आदर्श नारी एव कुशल गृहणी बनाने की योजना के अन्तर्गत उच्च स्तरीय शिक्षा दी जाती है।

इसके अलावा श्री मडेलिया का देश की अनेक विभिन्न सस्थाओं को आगे बढ़ाने

में अनुदान सहित योगदान रहा है।

स्वभावत वे सेवाभाव से ओतप्रोत हैं देश का उत्थान उनका ध्येय है।

उदारमना समाज सेवी—श्री रामेश्वर टाटिया (सीकर)

आपका जन्म 27 जनवरी 1910 में हुआ था। 15 वर्ष की अल्प आयु में व्यावसायिक जीवन शुरू किया। कलकत्ता की प्रसिद्ध अग्रेज फर्म जे थामस कम्पनी के साधारण कर्मचारी की हैसियत से आप सन् 1957 में सीकर लोक सभा सीट से सासद चुने जाने पर इस प्रतिष्ठान से अलग हुये। उस समय आप कम्पनी के सलाहकार पद पर काम कर रहे थे।

आपकी राजनीति में बराबर दिलचस्पी रही। सन् 1942 के स्वाधीनता सैनिकों को सक्रिय सहयोग दिया। आपका बाबू जयप्रकारनारायण तथा वी पी कोईराला जैसे समाजवादी नेताओं से घनिष्ठ सम्पर्क था। आप सन् 1957 और 1962 के चुनावों में काग्रेस के टिकट पर सीकर से सासद चुने गये और इस अवधि में काग्रेस ससदीय दल के कोषाध्यक्ष पद पर भी कार्य किया।

सन् 1952 1956 तक आप भारत की प्रसिद्ध सेवा सस्था मारवाडी रिलीफ सोसाइटी के प्रधान मन्त्री रहे। इन वर्षों में सोसाइटी ने जम्मू, राजस्थान बिहार सुन्दरवन (बगाल) के अकाल पीडित लोगों के और उत्तर प्रदेश के बाढ पीडित लोगों की सहायतार्थ दो करोड रूपये खर्च किये। आप 1962 से 1965 तक टी बोर्ड की कार्यकारिणी के सदस्य (निर्वाचित हुये) रहे।

भ्रमण और अध्ययन का शौक विशेष रूप से था। आपने 1950 1961 और 1964 में विदेश यात्रायें कीं। इन यात्रा सस्मरणों का वृहद सकलन "विश्व यात्रा के सस्मरण" नाम से प्रकाशित हो चुका है। आर्थिक सामाजिक और विवेचनात्मक लेख तथा लोक जीवन पर आधारित कहानिया विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। "आर्थिक समस्यायें" हमारा ससद भवन कुछ अपनी कुछ जग की कुछ घटनायें कुछ सस्मरण कुछ देखी कुछ सुनी और विश्व यात्रा के सस्मरण आदि आपकी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

सन् 1968 से आपका कार्य क्षेत्र कानपुर रहा जहा आप 1969-70 में नगर प्रमुख भी रहे तथा 1968 में ही ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन के प्रवध निर्देशक रहे। पटसन बगलादेश, सूती मिल, बवई वनस्पति और फौलाद ढलाई आदि कलकत्ता एव चाय, बागान आसाम में है। आप 1970 से अविरला भारतीय काटन मिल्स फेडरेशन की कार्यकारिणी के सदस्य रहे हैं।

जनवरी 1972 में प्रदेश की सबसे पुरानी व्यावसायिक सस्था अपर इण्डिया चैम्बर के अध्यक्ष चुने गये थे।

आपने अनेक सस्थायें निर्मित की जिनमें साइन्स कालेज शिवसागर (आसाम), टाँटिया हायर सैकण्डरी सकूल कलकत्ता, टाँटिया गर्ल्स स्कूल सरदार शहर (राजस्थान), एलोपैथिक फ्री डिस्पेन्सरी वाराणसी (उत्तर प्रदेश), सार्वजनिक पुस्तकालय धुबडी (आसाम), हायर सैकण्डरी स्कूल लकुआ (आसाम)।

आपकी 22 जुलाई 1977 में मृत्यु हो गई। आपका सुपुत्र नदलाल टाँटिया भी आपके अधूरे कार्यो को आगे बढा रहा है और समाज सेवा के क्षेत्र में अग्रणी है। इस प्रदेश की जनता एक समर्पित समाज सेवी तथा उद्योगपति के रूप में आपको सदैव याद रखेगी।

प्रसिद्ध उद्योगपति श्री जयदयाल डालमिया

श्री जयदयाल डालमिया का जन्म श्री हरजीमल डालमिया के यहा 11 दिसम्बर 1904 को हुआ था, उन्होंने मैट्रीक्यूलेसन तक शिक्षा पाई है। आपने विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय, कलकत्ता में शिक्षा प्राप्त की थी। यह विद्यालय मारवाड़ी समाज द्वारा सचालित था। स्वतत्रता आन्दोलन में महात्मा गाँधी जी का समर्थक होने के कारण श्री रामकृष्ण जी डालमिया ने श्री जयदयाल डालमिया का स्कूल जाना बन्द करवा दिया और वे मैट्रिक्यूलेसन की परीक्षा में नही बैठ सके।

आरम्भ में इनके ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकृष्ण जी ने कलकत्ता में लोवर सर्कुलर रोड़ पर फेय मोटर कार कम्पनी के पास विक्टर कम्पनी के नाम से मोटर गाडियों की मरम्मत की एक वर्कशाप खरीदकर इनके

हवाले कीया। जिसका आप सचालन करने लगे। सन् 1932-34 में श्री रामकृष्ण जी डालमिलया ने आरा के श्री निर्मल कुमार जी जैन के साथ मिलकर विहय (बिहार) में एक चीनी की मिल लगायी, जो 1933-34 में चालू हुई उसका काम देखता रहा। अगले वर्ष ही डेहरी-आन-सोन जब डालमिया नगर में चीनी की मिल लगी थी। उसके बाद वहा सिमेंट, कागज, कैमिकल, वनस्पति घी आदि के उद्योग स्थापित किये गये। इन सबमें अपने ज्येष्ठ भाई का सहयोग मिलता रहा। बाद में स्वतत्र रूप से सचालित करने के लिए मेरे ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकृष्ण जी डालमिया ने चार सिमेंट फैक्टरिया लगवायीं जो दण्डोत, शान्ति नगर, डालमिया पुरम् राजगगपुर (उडिसा) में है। अनेक वर्षों तक डालमिया जैन एयरवेज, भारत इस्योरेंस कम्पनी, पजाब नेशनल बैंक भारत बैंक आदि से सम्बन्धित रहा। मैनेजिंग एजेंट्स के डाइरेक्टर की हैसियत से चीनी, डिस्टिलरी,आदि के कारखानों का सचालन किया। उत्तर प्रदेश सरकार की पहली सिमेंट फैक्टरी के आप कई वर्षों तक टेकनिक डाइरेक्टर रहे।

पराधीनता-काल में भी देश को औद्योगिक दृष्टि से आत्म निर्भर बनाने की दिशा में ज्येष्ठ भ्राता के प्रोत्साहन से अनेक कारखानों तथा कम्पनियों की स्थापना करके उनका सफल सचालन किया।

भूकम्प, बाढ, सूखा, आदि दैवी आपतियों के समय दगो में पीडित परिवारों को आर्थिक सहायता प्रदान करते रहे हैं। शेखावाटी के योग्य एव होनहार विद्यार्थियों को छात्र वृतिया तथा दीन दुःखियों को आर्थिक सहायता के अतिरिक्त निर्धनों की कन्याओं के विवाह हेतु सहायता प्रदान की है।

उद्योगों के सचालन में व्यस्तता के कारण देश के लोगों को रोजगार दिया। शेखावाटी स्थित चिडावा के बालकों तथा बालिकाओं की शिक्षण-सस्थाओं में नैतिकता, सदाचार आदि जीवन मूल्यों की स्थापना में प्रयास रत रहे।

मेकेनिकल इजीनियरिंग के सभी काम, मितव्ययिता का प्रचार प्रसार, नैतिकता एव सदाचार का पालन, निर्धन तथा असहाय लोगों को आर्थिक सहायता देना, हिन्दी भाषा तथा वैदिक सनातन धर्म की सेवा करने में आपकी विशेष रुचि है।

श्री जय दयाल जी ने स्वय तो संस्थाओं का निर्माण नहीं किया किन्तु परिवार के अन्य सदस्यों को सस्थायें बनाकर जन सेवा के लिए प्रेरित करते रहे हैं।

(1) धर्मशास्त्र और अस्पृश्यता (2) प्राचीन भारत में गोमाश-एक समीक्षा गौडीय वैष्णव साहित्य के अनेक ग्रन्थों का बगला से हिन्दी में अनुवाद किया और प्रकाशित कराई।

वर्तमान में आप उद्योग व्यापार सम्बन्धी सभी कार्यो से निवृत्त हो चुके हैं तथा विगत दो दशाब्दी से श्रीकृष्ण जन्म स्थान सेवा सस्थान मथुरा के प्रबन्ध न्यासी के रूप में विभिन्न

भवनों मन्दिरों के निर्माण में सलग्न हैं। इस सस्था का सचालन तथा इसी के द्वारा साहित्य के प्रकाशन के काम भी देखते हैं। कुछ अन्य धार्मिक तथा चेरिटेबल ट्रस्टों के काम में भी रुचि रखते हैं जो निर्धनों, असहायों, अपगों, नेत्रहीनों, रोग पीड़ितों आदि की सेवा में लगे हुए हैं।

कीर्तिपुरुष—स्व. सेठ आनन्दी लाल पौद्दार—नवलगढ़

समाज में कितने ही ऐसे व्यक्ति होते हैं जो अपने कार्यों से अपने पूर्वजों का मस्तक ऊचा करते हैं और आने वाली पीढियाँ गर्व कर पाती हैं। श्री आनन्दीलाल पौद्दार उनमें से एक थे। यों तो शेखावाटी के उद्योग पतियों में पौद्दार परिवार का शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान रहा है, लेकिन श्री आनन्दीलाल पौद्दार के दिल में एक कसक थी, समाज को कुछ दे जाने की गहरी इच्छा। उन्होंने इस सकल्प को पूरा करने के लिए और व्रत लिए, उद्यम, श्रम, सघर्ष, साधना और त्याग का दुर्गम रास्ता अपनाया। ऐसे महापुरुष का जन्म 21 अक्टूबर सन् 1874 ई. को हुआ था। श्री पौद्दार ने सन् 1921 में तिलक स्वराज कोष के लिए विपुल धनराशि दान में दी थी और इतिहास पुरुष बन गये। आनन्दीलाल पौद्दार चेरिटेबल सोसाइटी द्वारा सचालित सस्थाओं के सस्थापक सेठ आनन्दी लाल पौद्दार की सृजन शीलता, दूरदर्शिता, निर्णय लेने की क्षमता, लिये गये निर्णय पर लाभ हानि से ऊपर उठकर आगे बढने का साहस आदि पक्षों को आज भी श्रद्धा के साथ याद किया जाता है। उनके द्वारा स्थापित पौद्दार प्राइमरी स्कूल, पौद्दार मातृश्री सी. हा. सें स्कूल, सेठ जी. बी. पौद्दार कालेज आदि शिक्षण सस्थाए, उनके द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किये गये कार्यों को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा। इस कीर्ति पुरुष का 6 मई सन् 1940 को स्वर्गवास हो गया। शेखावाटी आचल में उनकी सेवा, त्याग और जन कल्याण में योग चिरकाल तक याद किया जायेगा।

प्रसिद्ध उद्योगपति—"श्री रामनाथ आनन्दीलाल पौद्दार"—नवलगढ़

श्री रामनाथ आनन्दी लाल पौद्दार का जन्म 21 जनवरी 1910 को नवलगढ (शेखावाटी) में हुआ था। 17 वर्ष की आयु में पारिवारिक व्यवसाय में प्रविष्ट होने वाले श्री पौद्दार प्रसिद्ध पौद्दार उद्योग समूह से सम्बद्ध रहे हैं। आपको राजस्थान चैम्बर आफ कामर्स एण्ड इन्डस्ट्री (1950-52), राजस्थान वित्त निगम (1955-68), डवलपमेंट कारपोरेशन आफ सिल्क एण्ड आर्ट (1955-59), एक्सपोर्ट क्रेडिट एण्ड गारन्टी कार्पोरेशन (1962-64) आदि संस्थाओं के प्रथम अध्यक्ष होने का गौरव प्राप्त है। इसके साथ ही आप स्टेट बैंक आफ इंडिया के निदेशक (1955-67), बाम्बे मिल ओनर्स एसोसियेशन के अध्यक्ष (1957-58) (1960-61), फिक्की के अध्यक्ष (1969-70) तथा औद्योगिक सुरक्षा परिषद के अध्यक्ष (1969-73) पद पर भी कार्य कर चुके हैं आप बम्बई, आगरा तथा राजस्थान विश्व विद्यालय में सीनेट के सदस्य भी रह चुके हैं। आप आनन्दीलाल

पोद्दार चेरिटेबल सोसाइटी के अध्यक्ष हैं जो रामनाथ आनन्दीलाल पोद्दार इन्स्टीट्यूट आफ मैनेजमेंट सहित अनेक शैक्षणिक संस्थाओं से सम्बद्ध है।

खेल धर्म तथा राजनीति आपके रुचिकर विषय है। आप बम्बई विधान सभा (1946-52) तथा राज्य सभा 1952 54 के भी सदस्य रह चुके हैं और आप सम्पूर्ण विश्व को भ्रमण कर चुके हैं।

आपको राजस्थान विश्व विद्यालय से डाक्टर आफ लॉ (मानद) उपाधि प्राप्त हुई है। ऐसा विरल व्यक्तित्व जो त्याग एव सेवा साधना का प्रेरणास्पद स्तम्भ बन गया इनके द्वारा जन कल्याण के क्षेत्र में किया गया कार्य अत्यन्त उल्लेखनीय है।

"सेठ भागीरथ जी कानोडिया"—मुकुन्दगढ

शेखावाटी में जन मानस द्वारा समग्र रूप में जिस आदर श्रद्धा और अपनत्व से सेठ भागीरथमल कानोडिया को याद किया जाता है अन्यों को नहीं। वे असाधारण व्यक्ति थे जिन्हें लोग बेहद प्यार करते थे और वे भी यहा के कण-कण को दिल से चाहते थे।

भागीरथ जी का जन्म मुकुन्दगढ के सेठ रामदत्त जी कानोडिया के यहा 25 जनवरी सन् 1895 ई में हुआ था। उन्होंने कलकत्ता जाकर व्यापार किया खूब प्रसिद्धि पाई और मारवाडी समाज में अग्रिम पंक्ति में आ गये। युवावस्था में ही भागीरथ जी के मन में समाज सुधार और जन कल्याण कार्य करने की दृढ़ अभिलाषा थी। निष्काम कर्मयोगी की तरह काम करना शुरू किया। सन् 1909 में सार्वजनिक पुस्तकालय खोला। कलकत्ता में विधवा विवाहे मृत्युभोज बन्द और पर्दा प्रथा

खत्म करने के कार्य करके भागीरथ जी ने मारवाड़ी समाज को नई दिशा और नया चिन्तन दिया।

नारी शिक्षा के प्रबल हिमायती थे, उन्होंने सन् 1920 में मारवाडियों के लिए बालिका पाठशाला खोली, जिसके माध्यम से ही यहा नारी शिक्षा का प्रचार हुआ और आज शिक्षा के क्षेत्र में कही आगे हैं। कालान्तर में तो उन्होंने कन्या महाविद्यालय की स्थापना की थी।

स्वाधीनता आन्दोलनों में उनकी सक्रिय भूमिका रही। गाँधी जी में अटूट श्रद्धा और विश्वास था। अत प्रत्येक आन्दोलन में भाग लिया।

बिहार का अकाल हो, बाढ से क्षति हो, रगून से आये लोग हों, भागीरथ जी तैयार मिले। हरिजनों के उत्थान के लिए हरिजन बस्ती में रात्रि पाठशालाओं का जाल सा बिछा दिया।

शेखावाटी में जन कल्याण, शिक्षा का ग्रामीण अचलों में विस्तार, नव चेतना, अस्पृश्यता निवारण, हरिजनोद्धार, स्वतत्रता आन्दोलनों में श्री भागीरथ जी ने सक्रिय भाग लिया। इस सभाग का कण-कण और जर्रा-जर्रा उनके सत्कार्यों से आज भी चमक रहा है।

शिक्षा प्रसार में उनका योग चिरस्मर्णीय रहेगा। मुकुन्दगढ के अलावा उन्होंने ग्रामीण आंचल में अनेक स्कूल खोले, जिसमें शिक्षा प्राप्त कर असख्य ग्रामीण बालक अच्छे-अच्छे पदों पर हैं।

शेखावाटी के अकालों में भागीरथ जी का योगदान अत्यन्त उल्लेखनीय था। असहाय और गरीब के वे सम्बल थे। यहा के हजारों मूक कुओं पर उनकी यश गाथा गाव-गाव और ढाणी-ढाणी में सुनायी देती हैं।

सरलता, सादगी, सात्विकता, विनम्रता, दयालुता, और अति विशिष्ट मानवता की प्रतिमूर्ति श्री भागीरथ जी कानोड़िया का स्वर्गवास 29 अक्टूबर 1979 को कलकत्ता में हुआ और शेखावाटी का अमूल्य रत्न छिन गया। लाखों वर्षों में ऐसे महामानव का धरती पर अवतरण होता है। कल्याण आरोग्य सदन सीकर उनकी यश कीर्ति युगों-युगों तक गाता रहेगा।

शेखावाटी के उद्योग पति एव जन कल्याण—"श्री मोतीलाल जी झुन्झुनूवाला"

श्री मोती लाल जी झुन्झुनू वाला का जन्म श्री सेठ चिमनराम झुन्झुनूं वाला के यहा सन् 1860 में मनसीसर (जि. झुन्झुनू) में हुआ था।

इन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा मलसीसर में पंडित मानीराम जी गुरु खाटू वाले के पास ग्रहण की थी। ये बड़े कुशाग्र बुद्धि थे, इसी कारण व्यापार में कल्पनातीत प्रगति की।

प्रारम्भ में श्री मोतीलाल जी ने अपने पिता श्री सेठ चिमन राम जी के साथ अपना पैतृक थोक व्यापार गल्ले आदि का एव बोखात का धधा किया। इनके सद् व्यवहार एव कठिन परिश्रम से आस-पास इनकी व्यापारिक साख कायम हो गई। परन्तु इनके हृदय में बहुत बड़ा धधा करने की कल्पना थी। अत वे 25 वर्ष की अवस्था में कलकत्ता चले गये और वहाँ मलसीसर के लालचन्द प्रेम सुख दास फर्म में चांदी का कार्य शुरू कर दिया। धीरे-धीरे इन्होंने अनुभव प्राप्त करके चिमनराम मोतीलाल फर्म की स्थापना 132, कोटन स्ट्रीट तुल्लापट्टी कलकत्ता में स्थापित करके चाँदी का काम करने लगे और इस काम में अपने चचेरे भाई नारायणदास मेघराज को भी शामिल कर लिया। थोडे दिन बाद इन्होंने अपना ध्यान बम्बई की ओर केन्द्रित कर लिया और वहा चिमनराम मोतीलाल फर्म स्थापित की तथा इनके और इनके पुत्र श्री जयाराम की पूर्ण लग्न और निष्ठा से यह फर्म दिनों दिन तरक्की करती गई और बम्बई में इन्होंने चाँदी पर एकाधिकार स्थापित कर लिया। इनको सिलवर किग के नाम से सम्बोधित करने लगे।

बम्बई में इन्होंने अपने निजी भवन मोती महल, मेरिन ड्राइव, मोती भवन भुलेश्वर आरिसा महल, विजय महल वालेश्वर रोड पर लिये।

सेठ मोतीलाल जी सरल सीधे स्वभाव के व्यक्ति थे। धोती धोला, मोतिया रग की पगडी पहनते थे। हुका पीते थे। चाँदी सोने के हुक्के उनके पास रहते थे। हाथ में सोने की मढ़ी हुई छड़ी रखते थे।

सेठ मोतीलाल जी जब अपने चचेरे भाइयों के साथ कलकत्ता में थे उन्होंने उस समय राजपूताना विद्या प्रचारिणी ट्रस्ट बनाया और अपने छोटे भाई भीमराज के साथ चिमनराम मोतीलाल, भीमराज ट्रस्टों की स्थापना की तथा अन्तिम समय में अपने नाम से मोतीलाल तुलस्यान चैरिटी ट्रस्ट बनाया। इन ट्रस्टों से निम्न संस्थाए चल रही हैं। (1) मझोलिया (बिहार) में सेठ जूथालाल हायर सैकेण्डरी स्कूल, (2) मझोलिया में ही सस्कृत विद्यालय, (3) बनारस में सस्कृत विद्यालय, (4) मलसीसर (शेखावाटी) में राजपूताना विद्या प्रचारण हायर सैकेण्डरी स्कूल, (5) झुन्झुनू में सेठ मोती लाल पी जी कॉलेज, (6) सेठ मोती लाल हायर सेकेण्डरी स्कूल झुन्झुनू, (7) मलसीसर में उच्च प्राथमिक कन्या विद्यालय। इसके अलावा सेठजी ने 25 प्राइमरी विद्यालय मलसीसर के आस पास के गावो में खुलवाकर शेखावाटी अंचल में अपने शिक्षा प्रेम का परिचय दिया। इन सस्थाओं का आर्थिक व्यय सन् 1947 तक मोतीलाल भीमराज चैरिटी ट्रस्ट से होता था। सेठ मोती लाल जी की रुचि सामाजिक कार्यों में बहुत थी। इन्होंने मलसीसर गौशाला में एक बडा डीजल इन्जन लगवाया, जिससे पूरे मलसीसर कस्बे में बिजली दी। हरिजन उद्धार में इनकी बहुत रुचि थी। इनके लिए मलसीसर में एक हरिजन उद्योगशाला खोली जिसमें 7 सिलाई की सिगर मशीनों पर हरियाणा के एक हाजिन सिलाई मास्टर हाजिन बच्चों को सिलाई सिलाई सिखाते

थे। हरिजनों के लिए इन्होंने 25 सैट बैण्ड भेजे और 25 गावों में हरिजनों को बैण्ड की शिक्षा दिलवाई। पंडित मदन मोहन मालवीय जी को बहुत बड़ी राशि चन्दे में देकर बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय में एक हरिजन छात्रावास का निर्माण करवाया।

सेठ जी नवयुवकों को हस्टपुष्ट देखना चाहते थे जिसके लिए उन्होंने झुन्झुनू, मलसीसर और आस-पास के गांवों में व्यायाम शालायें बनवाई तथा व्यायाम शालाओं में सेठजी की तरफ से मुफ्त दूध पिलाया जाता था।

उस समय पानी की समस्या को हल करने के लिए मलसीसर के आस-पास 10 गांवों में पानी के कुण्ड बनवाये तथा एक बहुत बड़ा कुण्ड झुन्झुनू मोतीलाल जी बी-कॉलेज में बनवाया जो अब भी पानी की कमी की पूर्ति करता है। उनका नश्वर शरीर तो नहीं रहा, परन्तु आपके जनकल्याण कार्य, स्वच्छ जीवन, सरल व्यवहार, और निष्कष्ट आचरण के कारण आपको शेखावाटी की जनता चिरकाल तक श्रद्धा से याद करती रहेगी। और उनके सुकृत्यों की सुवास सदैव फैलती रहेगी।

सेठ विश्वम्भरलाल महेश्वरी बगड़—(शेखावाटी में जन चेतना का प्रणेता)

शेखावाटी प्रदेश में ग्रामीण इलाके में जन जागृति पैदा करने वाले बगड़ के स्व सेठ विश्वमर लाल माहेश्वरी का नाम अग्रिम पंक्ति में थो। वे अकेले व्यक्ति थे जिन्होंने शिक्षा के महत्व को समझा और गरीब और कमजोर वर्ग के बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने का बीड़ा उठाया।

सेठ विश्वंभर लाल माहेश्वरी का जन्म 28 अक्टूबर 1886 में बहल (हरियाणा) में हुआ था जो अपने मामा लक्ष्मीनारायण घाण्डक के यहां बगड़ गोद आ गये। उदार हृदय, दूरदर्शी और शिक्षा प्रेमी सेठ माहेश्वरी की प्रेरणा से सन् 1914 में इनके मामाओं द्वारा एक प्राथमिक शाला आरम्भ की जिसका नाम विश्वमर लाल माहेश्वरी के नाम पर रखा गया। शेखावाटी में यह प्रथम पाठशाला थी जहा धनवान लोगों के अलावा किसान और मजदूर वर्ग को भी शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिला था। कालान्तर में यह पाठशाला क्रमोन्नत होती हुई मिडिल स्कूल बनायी गयी। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद सेठ बी एल बगड़ में ऐसी शिक्षा सस्था कायम करना चाहते थे जिसमें पढ़ कर विद्यार्थी सच्चरित्र, राष्ट्र-प्रेमी, प्रगतिशील तथा प्रबुद्ध विचारक बने और समाज का मार्ग दर्शन करने वाले हों। उन्होंने सन् 1931 में विद्यालय के लिये उस वक्त एक लाख रूपये की राशि से दो मंजिला शानदार भवन बनवाया जिसका उद्घाटन जयपुर महाराज के कर कमलो द्वारा हुआ। सभी को शिक्षा देने का मार्ग खुले। सन् 1934 में यह हाईस्कूल बना दिया गया। उस वक्त सबको शिक्षा देना शेखावाटी में आसान काम नहीं था। शिक्षित और जागृत होने का अर्थ था स्थानीय जागीरदार और जयपुर राज्य तथा अंग्रेजों से बैर मोल लेना। सेठजी को भी संघर्ष करना

पड़ा। अजमेर रैजिडेन्ट द्वारा हाईस्कूल की मान्यता रद्द कर दी गई। अंग्रेज उनसे नाराज भी हुये। जितने दयालु, उदार और सहृदय थे उतने ही दृढ़ और स्वाभिमानी व्यक्ति थे। महात्मा गाधी तक उनका सम्पर्क था। उन्होंने तुरन्त जूनियर कैम्ब्रिज प्रारभ करवा दी, परन्तु शिक्षा का हास नहीं होने दिया। सन् 1938 में प्रजामडल के जयपुर सत्याग्रह में खुले दिल से सहयोग दिया और राष्ट्रीय आदोलन में भागीदार बने। बबई में चले समस्त राष्ट्रीय आदोलनों से जुडे रहे। नमक सत्याग्रह के पश्चात सेठ जी सक्रिय हो गये और तन-मन-धन से सहयोग दिया। उन्हीं की प्रेरणा से बगड शिक्षा की कर्मस्थली बना और अनेक श्रीपति शिक्षा प्रसार के लिये मैदान में आये। शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने व्यावहारिक पक्ष को अधिक मजबूत बनाने के लिये योग्यतम अध्यापकों को रखा ताकि सुयोग्य नागरिक बन सकें और आज भी बी एल विद्यालय बगड की शाख प्रदेश में अच्छी शिक्षा के लिये कायम है। राजस्थान के अनेक भागों के छात्र यहा शिक्षा ग्रहण करते हैं। शेखावाटी में पिलानी के बाद बगड ही ऐसा स्थान है जहा सर्वाधिक छात्र छात्रावास में रहते हैं। सेठ माहेश्वरी का 17 फरवरी 1956 में देहान्त हो गया लेकिन उनके बाद भी उनके पुत्रों ने पिता के कार्य को आगे बढाया और विद्यालय के गुणात्मक विकास में योगदान दिया और विद्यालय को सीनियर हायर सैकण्डरी स्कूल बना कर कला, विज्ञान, वाणिज्य तथा कृषि विज्ञान की समुचित व्यवस्था है। 55 वर्ष का इतिहास इस बात का साक्षी है कि यह विद्यालय अनुशासन और चरित्र निर्माण का अनूठा सगम है। यह विद्यालय शिक्षा अनुशासन, खेलकूद, स्वच्छ वातावरण और कुशल प्रशासन की दृष्टि से राजस्थान में उच्चतर सम्मानीत विद्यालयों में से एक है और यहा का वातावरण पब्लिक स्कूल जैसा है। यह विद्यालय आज भी सेठ माहेश्वरी की आकाक्षाओं को उन्हीं के पुत्रों का हार्दिक अभिलाषानुसार शिक्षा जगत में दिन प्रति दिन ख्याति अर्जित कर रहा है।

शिक्षा प्रेमी--सेठ पीरामल माखरिया, "बगड़"

शेखावाटी में शिक्षा प्रसार के साक्षात स्वप्न दृष्टा और शिक्षा के सम्बल सेठ पीरामल माखरिया का जन्म 18 नवम्बर सन् 1891 ई में सेठ चर्तुर्भुज माखारिया के यहा बगड में हुआ था। मूलत माखर गाव के होने के नाते वे माखरिया कहलाये।

पीरामल बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि वाले दूरदर्शी व्यक्ति थे। उनके दिल में हर वर्ग के निए शिक्षा का प्रबन्ध करने की प्रबल इच्छा थी। युवावस्था में बम्बई जाकर व्यापार किया और अच्छी सफलता प्राप्त की। तत्पश्चात उन्होंने अपनी जन्म स्थली को शिक्षा की नगरी बनाने का और कदम बढाया। उन्होंने बम्बई में रहकर बगड में जन कल्याण के कार्य करवाये। हरिजनोत्थान और गरीब तबके के व्यक्तियों की मदद करने लगे। सामन्तीयुग में आम आदमी को शिक्षा दिलाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था परन्तु वे दृढ निश्चयी और निर्भीक व्यक्ति थे। अत उन्होंने एक कन्या पाठशाला खोल दी।

उनके यहा राष्ट्र प्रेमी व्यक्तियों का आदर किया जाता था।

श्री माखरिया का शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान रहा है। स्त्री शिक्षा के लिए उन्होंने जितना कार्य किया है उतना ही आम आदमी की शिक्षा के लिए भी किया है। बगड का पीरामल नगर शिक्षा का क्षेत्र बन चुका है। पीरामल एजूकेशन ट्रस्ट और महादेवी पीरामल चैरिटीबल ट्रस्ट द्वारा सचालित शिक्षण सस्थायें आदर से देखी जाती हैं। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में नारी शिक्षा का श्रेय सेठ पीरामल को दूरदर्शिता, उदारता और सहृदयता की प्रतिफल है।

सेठ पीरामल का स्वर्गवास 5 सितम्बर 1958 ई को बम्बई में हुआ। उनके पश्चात् उनके सुयोग्य पुत्रों, पौतों, पुत्र पौत्र बन्धुओं ने उनके कार्य का विस्तार ही किया और दिन प्रतिदिन समाज को प्रगति की ओर बढाया।

शेखावाटी अचल में उनका मार्ग दर्शन, सेवा और जन कल्याण में योग चिरकाल तक याद किया जाता रहेगा।

शेखावाटी के प्रसिद्ध समाज सेवी कर्मयोगी श्री बद्रीप्रसादजी 'सोढाणी'

सोढाणी जी का जन्म 19 अक्टुबर 1916 को सीकर में हुआ था। उनके पिता बालकयस सोढाणी के यहा हुआ था। वे एक बहुत बडे उद्योगपति थे। उनकी माता का देहान्त बचपन में ही हो गया था। उनका विवाह रामेश्वरी देवी पुत्री श्री बल्लभ जी बोतला के साथ हुआ था।

शिक्षा—उन्होंने सीकर में दसवीं तक शिक्षा ग्रहण की थी। इटर तथा ग्रेजुएशन पिलानी से किया तथा उच्च शिक्षा के लिए वे बनारस चले गये। जहा वे मालवीय जी के सम्पर्क में आये। उनका मन अध्ययन में नहीं लगा और 1935 में वे गाधी जी के साथ सेवा ग्राम पहुचे और आपको दरिद्र नारायण की सेवाओं में समर्पित कर दिया।

1938 में जयपुर रियासत और सीकर ठिकाने के बीच विवाद हुआ तो उन्होंने आन्दोलन में भाग लिया और उनके सामाजिक जीवन का श्री गणेश हुआ। सेठ जमनालाल जी के प्रयासों से यह समझौतो हुआ और आन्दोलन समाप्त हो गया। वे सीकर लौट आये। प्रजामण्डल के कार्यों में जुटे गये।

उन्होंने पेयजल के कुए का निर्माण, सार्वजनिक औषधियों का निर्माण, गो वश की रक्षा, नेत्र चिकित्सा शिविर उनके जीवन के प्रमुख सार्वजनिक हित के कार्य हैं।

1940 में सीकर में प्रजामण्डल के अन्तर्गत राजनैनिक सम्मेलन के वे सचिव थे। यह सम्मेलन सोढाणी जी की सगठन शक्ति और कार्यक्षमता का प्रतीक था। किसानों में अपने अधिकार के प्रति जागरूकता और राजनैतिक चेतना लाने में श्री सोढाणी जी का

प्रमुख हाथ रहा। 1942 के भारत छोड़ो आदोलन में प्रमुख भूमिका प्रदान की तथा याद में संयुक्त भारत में वे रचनात्मक कार्यों में लग गये। स्वतन्त्रता के बाद उन्होंने ज्यादा ध्यान रचनात्मक कार्यो में लगाया था। सन् 1951 में बीकानेर के अकाल में भी उनकी सेवायें चीर स्मरणीय रहेंगी। पेयजल, चिकित्सा, वृक्षारोपण, खादी उत्पादन कार्य सोढाणी जी की कीर्ति गाथाएं हैं। उनके द्वारा 1973 में सीकर में स्थापित जन कल्याण समिति जन सेवा के लिए एक वरदान सिद्ध हुई।

ऐसा बहुमुखी प्रतिभा का धनी, जो त्याग, तपस्या और सेवा भावना का प्रेरणा स्रोत बन गया। उनका देहान्त 14 मार्च 1983 को हो गया तो ऐसा लगा कि हमारे बीच में इन्सानियत की एक ज्योति बुझ गई। श्री सोढाणी जी के व्यक्तित्व में सार्वजनिक आयामों के साथ-साथ एक जिन्दादिल और मुहब्बत से भरी इन्सानियत थी जो कभी भुला नहीं पायेंगे। हर्ष पर्वत पर नव निर्माण तथा सावली में क्षय चिकित्सालय के निर्माण के पीछे उनकी सूझबूझ तथा परिश्रम ही था। स्व सोढाणी जी ने सेवा के माध्यम से शेखावाटी के विकास में एक कर्मयोगी की तरह सहयोग दिया जो निश्चित रूप से युवा पीढ़ी में एक चेतना जाग्रत करेंगी।

सेठ जमना लाल "बजाज"

देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन के सन्दर्भ में सेठ जमनालाल बजाज के नाम व उनकी भूमिका से कौन परिचित नहीं होगा। उनका जन्म काशी का वास (सीकर जिले) में 4 नवम्बर 1889 को हुआ था। वे जयपुर राज्य प्रजामण्डल के भी अग्रणी नेता रहे थे और उन्होंने इसके माध्यम से जयपुर रियासत में राजनैतिक चेतना जागृत की।

जयपुर प्रजामण्डल की स्थापना 1931 में हुई थी। 1938 में होने वाले प्रजामण्डल के अधिवेशन के आप अध्यक्ष मनोनीत हुये।

इस तरह सेठ जमना लाल बजाज का जयपुर आना तय हुआ। वे 6 मई की शाम को श्रीमती जानकी देवी बजाज के साथ जयपुर पहुचे। 8 मई को जयपुर राज्य प्रजामण्डल का पहला वार्षिक अधिवेशन बजाज की अध्यक्षता में आरम्भ हुआ। इस अवसर पर ऐतिहासिक प्रस्ताव भी पारित हुये। एक ऐसे ही प्रस्ताव में उत्तरदायी शासन की माग की गई। इनके नेतृत्व में प्रजामण्डल ने गावों की सभी समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया था। जिनमें बोलने, लिखने व छापने की आजादी सगठन बनाने की माग, बाल विवाह को रोकने के लिये राज्य सरकार से माग, हिन्दुस्तान के लिये ऐसी सघ प्रणाली जिसमें रियासती जनता को पूर्णधिकारों का समावेश हो अर्थात् अपने अधिकारों के लिये जनता का समग्र प्रयास। इन सबके पीछे जो शक्ति और प्रेरणा थी वह निःसदेह सेठ बजाज के महान व्यक्तित्व व नेतृत्व की थी। अगले ही वर्ष सेठ के जयपुर प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया। निशेधाज्ञा को भग करने पर कठोर जेल की यातना भोगनी पडी और उन्होंने इस

पद की गरिमा अनेक कुर्बानियां देकर कायम रखी। उनका देहान्त 11 फरवरी 1942 ई को हो गया। किन्तु ऐसे राष्ट्रीय व्यक्तित्व कालजयी होते हैं। उनके अमर कार्य, जन मानस में सदैव आदर प्राप्त करते रहेंगे। भारत का जन-जन उनके प्रति श्रद्धा से नतमस्तक है। इनका त्याग और बलिदान भावी पीढी को राष्ट्र प्रेम का संदेश देता रहेगा।

जे के सिघानिया उद्योग समूह

इस उद्योग समूह ने शिक्षा के क्षेत्र में विशेष दिलचस्पी दिखाई है, चिकित्सा, धर्म अनुसधान तथा खोज के कार्यों में भी काफी सहयोग दिया है, इस ग्रुप समूह ने अनुसधान तथा विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्रों में भी प्रगति करने के लिए दिल खोलकर आर्थिक सहायता दी है और संस्थान स्थापित किए हैं।

जे के सिघानिया उद्योग समूह ने स्थानीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर खेलकूद प्रतियोगिताए आयोजित की है। क्रिकेट की प्रसिद्ध रणजी ट्रोफी प्रतियोगित्ता भी इस ग्रुप द्वारा आयोजित की जाती है। इस ग्रुप में दानवीर रायबहादुर सेठ जुगीलाल कमला पत सिघानिया (जे के) को कानुपर का किग-ख्याति प्राप्त हुआ हैं। और देश के बडे उद्योगपतियों में से एक हुए हैं।

प्रमुख उद्योगपति श्री लक्ष्मीपत सिघानिया

श्री लक्ष्मीपत सिघानिया का जन्म 23 11 1910 को हुआ था। आपने इस उद्योग समूह को आधुनिक तकनीकी द्वारा एक नया रूप दिया, उनका कहना था कि उद्योगों में जो परिवर्तन आ रहे हैं, जिन चुनौतियों का हम सामना कर रहे हैं और जिनका हमें आगे चल कर सामना करना पड़ सकता है और जिससे हमें कमजोरी भी आ सकती है, हमें उनका मुकाबला दृढ विश्वास और हिम्मत से करना है और राष्ट्र के विकास की गति में तीव्रता लानी है इसी भावना को हमें आगे बढाना है। आज भी उनकी भावना के अनुरूप इस उद्योग समूह में काम हो रहा है। यद्यपि वे नहीं रहे। उन्होंने औद्योगिक गतिविधियो को आगे बढाया, उसमें उनके अकेले दिमाग की उपज तथा उद्योगों के प्रति समर्पित भावना ही थी। आज भी उनके सिद्धान्त तथा मार्ग निर्देशन तत्वों की प्रतिछाया इन औद्योगिक इकाइयों में देखी जा सकती है। उनके द्वारा जन कल्याण की अनेक योजनाए चलाई गई थीं तथा अनेक सामाजिक सस्थाओ की स्थापना की गई थी जो आज भी उस महान देशभक्त तथा उदारमना महामानव की याद दिलाती है। उनका निधन दिनाक 13 11 1976 को हो गया था लेकिन आज भी उनकी प्रेरणा से यह उद्योग समूह निरन्तर बहुमुखी तरक्की कर रहा है।

शेखावटी में साहित्य और सस्कृति के प्रमुख सरक्षक श्री 'कृष्ण कुमार विडला'

उदारमना श्री कृष्ण कुमार बिडला प्रमुख उद्योगपति—श्री घनश्याम दास बिडला के सुपुत्र हैं। इनका जन्म सन् 1918 में पिलानी में हुआ था। आप औद्योगिक भारत के निर्माता युग चिन्तक, दूरदर्शी, अर्थशास्त्री, लेखक व साहित्यकार तथा एक योग्य ससद विदू हैं। विज्ञान, सस्कृति व कलाओं के महान् उन्नायक के साथ-साथ एक मनमोहक व्यक्तित्व के धनी भी हैं। अनेक सस्थाओं के प्राण, अनेक व्यापारिक प्रतिष्ठानों के कर्णधार, विविध क्षेत्रों की प्रतिभाओं के सरक्षक, हितैषी, मार्ग दर्शक श्री बिडला सच्चे अर्थों में भारत के महान् सपूत हैं। जहाँ अपनी दानवीरता निष्कपट भावनायें सरल, सौम्य व मधुर व्यवहार वाले श्री के के बिडला असख्य लोगों की श्रद्धा के पात्र हैं। वहीं विभिन्न रूपों में और अनेक क्षेत्रों में की गई उनकी सेवायें अत्यन्त उत्कृष्ट, सराहनीय व स्तुत्य हैं।

श्री बिडला मूलत एक सहज स्निग्ध और गरिमा से परिपूर्ण व्यक्ति हैं। विचारों में दृढता और भाव में स्थिरता जीवन के बारे में स्पष्ट दृष्टिकोण, चिन्तन में भी व्यापक सन्दर्भ का विश्लेषण, गहन और निष्पक्ष उनका चिन्तन भाव है। ससद में जिस राजस्थान का वे प्रतिनिधित्व करते हैं और राजस्थान का इतिहास जो निष्ठा, त्याग और स्थिर चिन्तन के लिए विख्यात् है उसी मरुधरा की मिट्टी का योगदान इनके व्यक्तित्व को ढालने में रहा है।

श्री के के बिडला व्यवसायिक तथा ससदीय कार्यों में व्यस्त रहने के बावजूद भी बड़ी आत्मीयता के साथ लोगों से मिलते हैं और व अपने से जुडे हुए से लगते हैं। उद्योग, धार्मिक, सस्कृति, शिक्षा प्रसाशनिक कार्य में सक्रिय रहते हुए भी ससद में आम आदमी की समस्याओं की तरफ सरकार का ध्यान आकर्षित करते रहते हैं। श्री बिडला एक लम्बे अर्से से राज्य सभा में सासद के पद को सुशोभित करते रहे हैं। इस लम्बी अवधि में जिस दूरदर्शिता सूझबूझ व सक्रियता तथा विद्वता का परिचय दिया है वह प्रेरणादायक है। उनके बहु विध कार्य क्षेत्र ही उनके व्यापक व्यक्तित्व के परिचायक हैं।

श्री बिडला जी भारतीय चीनी नियत्रण बोर्ड के सदस्य तथा 1951 में भारी

इन्जीनियरिंग उद्योग के भारत सरकार के पैनल के अध्यक्ष रह चुके हैं। आप हिन्दुस्तान टाइम्स लि के अध्यक्ष तथा न्यू इंडिया सूगर मिल्स, अपर गगेग मिल्स लि , दी काटेन एजेन्ट्स् लि , टैक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन बिल्डिग लि तथा राज कमल प्रकाशन लि आदि कम्पनियों के निदेशक मडल के सदस्य तथा पदाधिकारी रहे हैं। श्री बिडला देश की अनेकों सामाजिक व सास्कृतिक एव धार्मिक सस्थाओं के पदाधिकारी तथा मार्ग दर्शक हैं। ये देश में कई महत्वपूर्ण क्षेत्रों, उद्योग, विज्ञान, तकनीकी शिक्षा, कला, और सस्कृति में गहरी रुचि लेते हैं। उनके विकास, सम्पुष्टि और सहायता के लिए अथक प्रयत्न करते रहते हैं। उनकी लगन, निष्ठा, देश भक्ति, उदारता सक्रिय सहयोग ने इन क्षेत्रों में विकास व वृद्धि के अनेक कीर्तिमान स्थापित किये हैं।

आपसे समाज को अभी बहुत अपेक्षाए है, राष्ट्र के निर्माण में, प्रगति के क्षणों में, बाढ व अकाल सहायता में, आर्थिक स्वतत्रता के प्रयास में यह विश्वास किया जा सकता है कि आप का सक्रिय सहयोग निरन्तर मिलता रहा है।

भारतीय जन जीवन के चतुर्दिक विकास के लिए आपका दृष्टिकोण और कथन निरन्तर महत्त्वपूर्ण होता गया है तथा आज आप अपने विस्तृत सामाजिक, राजनैतिक, सास्कृतिक, एवं समाज कल्याण कार्यों द्वारा समाज के भूषण सिद्ध हो चुके हैं। विभिन्न क्षेत्रों में और विभिन्न रूपों में उनकी सेवायें अत्यन्त उत्कृष्ट एव सराहनीय हैं। मानव मात्र की कल्याण भावना उनका नैसर्गिक स्वभाव है। आज बिडला जी का यशरूपी सौरभ सवर्त्र फैल रहा हैं। वे एक ऐसे अनमोलरत्न है, जिन पर भारत गर्व कर सकता है।

बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी प्रसिद्ध उद्योग पति
श्री बसन्त कुमार बिडला

सुप्रसिद्ध बिडला परिवार के सदस्य श्री बसन्त कुमार बिडला पद्म-विभूषण स्व सेठ घनश्याम दास बिडला के पुत्र हैं। आपका जन्म शुक्रवार माघ कृष्णा 12 सबत 1977 तदनुसार 4 फरवरी सन् 1921 ई के दिन कलकत्ता में हुआ था। आपने 1936 में मैट्रिक पास की थी और बाद में आपकी शिक्षा प्रेसीडेन्सी कालेज कलकत्ता में हुई। आपका विवाह-श्री बृजलाल वियाणी की सुपुत्री सरलाजी से मिति वैसाख सुदी 15 सम्वत् 1888 वार बृहस्पतिवार को हुआ था। आपने 1938 में रगून, मलेशिया, सिगापुर, जावा, बाली आदि देशों की यात्रायें की तथा नये-नये अनुभव प्राप्त किये।

श्री बसन्त कुमार जी ने शिक्षा कला और सस्कृति के विकास में बहुत अधिक योगदान दिया है। कलकत्ता में इन्होंने सगीत कला मन्दिर की स्थापना की है जिसमें चित्रकला नृत्य, संगीत एवं कई प्रकार के वाद्यो की शिक्षा दी जाती है। आपने कलकत्ता में मरादेवी बिरला शिशु विहार 1945 में, अशोक हाल 1950 में, मरादेवी बिरला गर्ल्स हाई स्कूल 1959 में स्थापित किये थे। कलकत्ता में इन स्कूलों का स्थान बहुत ऊंचा है। भारत आरोग्य मन्दिर राची के पास टी बी का चिकित्सालय मा के नाम पर स्थापित किया। जिसमें 150 रोगियों

की देख रेख की व्यवस्था है। सर्वसाधारण की सुविधा के लिए अनेकों धर्मशालायें तथा अतिथिगृह बनाए हैं। केदारनाथ बद्रीनाथ डाकोर जी, नासिक, तारकेश्वर, चित्तौड आदि स्थानों पर।

बिरला एकेडमी आफ आर्ट एण्ड कल्चर नामक सस्था की स्थापना सन् 1964 में हुई। भारतीय कला के पत्थर अष्ट धातु, और लकड़ी की पुरानी मूर्तियों का पुराने मिनिसचर तथा आधुनिक चीजों का और भी कई प्रकार की कलात्मक वस्तुओं का बडा अच्छा सग्रह है। इसका देश विदेश में अच्छा नाम है।

उद्योग के क्षेत्र में आपका योगदान महत्वपूर्ण रहा है। आप उद्योगों को बढाने में सदा आतुर रहते थे और उद्योगों को आपने तेजी से बढाने में काफी रूचि ली और उत्साह से कार्य किया और केशोराम काटन मिल्स लि जियाजी राव काटन मिल्स लि जयश्रीटैक्सटाइल्स लि जय श्री टी गार्डन लि तथा कई कम्पनियों के निदेशक मण्डल के सदस्य हैं। 1951 में आप बगाल मिल्स आनर्स एसोसियेशन के अध्यक्ष रह चुके हैं। उद्योग के क्षेत्र में इनके सुपुत्र श्री आदित्य बिडला भी हाथ बटा रहे हैं और इन्होंने दो नई योजनाएँ—सेनटेक केमिकल्स लि महाराष्ट्र में तथा दूसरी स्कीम है गुजरात में पोलिएस्टर सूत के उद्योग की। इन दोनों कम्पनियों के अध्यक्ष भी आप ही हैं। उम्र के लिहाज से उद्योग व्यवसाय में अब रूचि कम होने लगी है फिर भी आप अभी तक सक्रिय रूप से इन उद्योग धधो में पूरा समय देते हैं। उद्योगों के निर्बाध सचालन के लिए आप सुरक्षित राशि की व्यवस्था करने के पक्ष में हैं। अब आपका ध्यान कला साहित्य धर्म और सार्वजनिक कार्यों में अधिक रहता है।

आप भारत के उन चुनिन्दा उद्योगपतियों में से हैं जिनका उद्देश्य भारत का तीव्र औद्योगिक विकास है न कि लाभार्जन। आपकी मान्यता है कि आदमी को परखना प्रशिक्षण देना और प्रोत्साहित करके आगे बढाना। राष्ट्रीय प्रगति की दिशा में जरूरी है। आपने अपने जीवन वृतान्त स्वान्त सुखाय नामक पुस्तक लिखी हैं।

उद्योग पति श्री राहुल बजाज

बजाज उद्योग-समूह से सम्बद्ध श्री राहुल बजाज "गाँधी जी के पाचवे पुत्र श्री जमनालाल बजाज के सुपौत्र और पूर्व सासद स्व श्री कमलनयन बजाज के सुपुत्र हैं।

आपका जन्म 10 जून 1938 को हुआ था।

आपने विधि स्नातक के साथ ही हार्वर्ड (इगलैण्ड) से एम. बी. ए. किया, आप बजाज समूह की अनेक कम्पनियों के अध्यक्ष प्रबधक निदेशक एव निदेशक मडलों के सदस्य है।

आप फिक्की के अध्यक्ष रहने के साथ ही अनेक उद्योग व्यवसायिक और सामाजिक सस्थाओं के पदाधिकारी रह चुके हैं।

श्री बजाज ने शिक्षा, सास्कृतिक, धार्मिक मामलों में सर्वाधिक रुचि ली है और अतुल योगदान दिया है। श्री बजाज की सूझबूझ, दूरदर्शिता और सक्रियता की वजह से ही आज बजाज उद्योग समूह तीव्र गति से प्रगति कर सका है।

श्री राहुल बजाज का व्यक्तित्व बहुत प्रभावपूर्ण व मनमोहक है। उनका सौम्य व आकर्षक स्वरूप तथा मधुर भाषण व सरल व्यवहार भेंटकर्ताओं पर गहरी छाप छोडता है। श्री बजाज की निष्कपट भावनाए और सदाशयी उदारता उनके सहज सौजन्य का परिचय देती है। बजाज उद्योग समूह द्वारा अनेक जन कल्याणकारी कार्यों में जो महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है उसका श्रेय श्री राहूल बजाज को ही है।

"श्री लक्ष्मी निवास बिड़ला"

भारत के सुप्रसिद्ध उद्योगपति परिवार में श्री घनश्यामदास बिड़ला के घर में श्री लक्ष्मी निवास बिड़ला का जन्म पिलानी में हुआ था। सबसे बडे होने के कारण पितामह, पितृव्य एवं नानाजी आदि पिता से भी अधिक उनकी शिक्षा दीक्षा एवं विकास में रुचि लेते थे। उनकी हर गतिविधि पर गुरुजनों की दृष्टि रहने के कारण उनका सर्वांगीण विकास हुआ और उनकी विभूतिमयी जीवन यात्रा अपने गुरुजनों के आदर्शों पर चलते हुए महिमा मंडित और गरिमामयी होती गई।

श्री बिड़ला ने अपनी व्यापारिक योग्यता से उद्योग के अपरिमित विकास और देश को समृद्ध बनाने में अथक प्रयास किये है। उन्होंने उद्योगो के विकास में नई और पुरानी दोनों शैलियों के सामन्जस्य के माध्यम से जो औद्योगिक ऊँचाइयाँ हासिल की हैं। वे बिना पुरातन का त्याग किये नूतन को आत्मसात करके की है। श्री बिड़ला के कुशल व्यावसायिक रूप ने विकास की प्रेरणा दी है उनका मानना है कि धन से ही धार्मिक अनुष्ठान किये जा सकते है तथा उनसे सुख की प्राप्ति होती है।

श्री बिड़लाजी ने उच्चकोटि के साहित्य का सृजन किया है। उनकी रचनायें इस युग के समाज का दर्पण है। उनकी प्रत्येक रचना में उनका स्वाध्याय जन्म ज्ञान, एवं गहन चिन्तन-मनन द्वारा समुत्पन्न मौलिक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य तथा लोक साहित्य में विविध विधाओं पर लिखित साहित्य श्री बिड़लाजी को मनीषी, चिन्तक, एवं शब्द शिल्पी के रूप

में स्थापित करता है। बिडला जी कला पारखी होने के साथ ही स्वयं कलाकार भी हैं एवं कलाकारों, विद्वानों एवं गुणियों के आश्रयदाता भी हैं। उनकी निम्न पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। (1) जीवन की चुनौती (2) कहिये समय विचारि (3) पद्मिनी का शाप (4) आंचल और आग (5) प्रेम की देवी (6) सुलतान और निहालदे (7) लखटकिया (8) चौबीलीरानी (9) भाग्य की बलिहारी (10) फूल और कांटा इसके अलावा श्री बिडला सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली के अध्यक्ष भी हैं। यह संस्था ऐसे प्रकाशन करती है जिसे परिवार का कोई भी सदस्य निःसंकोच पढ़ सकता है। जहां सुरुचि पूर्ण है वहीं ज्ञानवर्धक और प्रेरणादायक भी हैं।

श्री लक्ष्मी निवास जी कर्मठ, विद्वान, एवं नीतिवान होने के साथ ही बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के शास्त्र वचन पर आस्था रखने वाले हैं। ईश्वर में उनकी असीम श्रद्धाभक्ति एवं अटल विश्वास है। उनका जीवन गीता के कर्मयोगी का अनुसरण करता है एवं हृदय परमेश्वर के प्रति शरणागति की भावना से भरा है। और क्रियाशील उद्यमी सत्पुरुष हैं। जिनका विश्वास है कि जीवन को सहज रूप से सरलता और सामान्यता के साथ जीना चाहिये, निमार्ण और सृजन ही परम आनन्द का विधान है।

श्री लक्ष्मी निवास जी के अनुकरणीय जीवन में समावेष्ठित सद्गुणों, उच्चस्तरीय विचारों एवं विविध अनुभूतियाँ अलग-2 विशेषताओं का परिचय देती हैं। श्री बिडलाजी का विविध सद्गुणों से सम्पन्न व्यक्तित्व नाना रूप रंगों में विशेष आकर्षण रखता है।

श्री बिडला का अपने परिवार में जेष्ठ पुत्र होने के कारण व्यापार जगत के साथ ही अपने परिवार में भी विशेष महत्व रहा है। अपने इष्ट मित्रों और परिचितों के बीच अपने शील स्वभाव के कारण वे विशेष प्रिय रहे हैं। श्री बिडला तत्काल निणर्य लेने में माहिर हैं, उनके निर्णयों में अनुभव, दूरदर्शिता तथा परिपक्वता साफ-साफ झलकती है। प्रत्येक निर्णय में उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर तर्क संगत सही और ठोस निर्णय लेना आपकी आदत रही है।

देश के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक उत्थान में श्री लक्ष्मी निवास जी बिडला का बड़ा योगदान है। तथा उनकी आधुनिक विचारणा और सूझबूझ ने उन्हें अर्न्तराष्ट्रीय क्षितिज पर पहुँचा दिया है। इस अद्भूत सफलता के पीछे श्री लक्ष्मी निवास जी का बहुआयामी व्यक्तित्व व कृतित्व छिपा है।

"महिला शिक्षा का अनूठा केन्द्र—अरडावता"

झुन्झुनू जिले की पचायत समिति चिडावा का ग्राम अरडावत शेखावाटी में महिला शिक्षा का एक विशेष केन्द्र है, जहा बालिकाओं को शिक्षा के साथ ज्ञान और विज्ञान का भी अनुभव दिया जाता है। इस महाविद्यालय में शिक्षित होकर जीवन निर्माण के लिए जो रास्ते बालिकायें चुनेगी वह उपलब्धि मूलक होगा।

यों भी महिला व्यक्तित्व निर्माण में अरडावत के इस महाविद्यालय की अपनी अनूठी भूमिका रही है। यह महाविद्यालय ग्रामीण क्षेत्र में होने के बावजूद सभी सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं, जो शहरों में उपलब्ध नहीं हो पाती। इन्दिरा गाधी बालिका निकेतन महाविद्यालय परिसर में बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, महाविद्यालय के साथ पुस्तकालय, आवासगृह, अतिथि गृह, छात्रावास भवन, हरिजन छात्रावास, नेहरू बाल उद्यान, मन्दिर, डाक व तार घर, टेलीफोन, बैंक, चिकित्सालय, सहकारी उपभोक्ता भण्डार, आडिटोरियम, अत्याधुनिक शौचालय, दो कुए, स्टेडियम सभी तो हैं। 300 बीघा जमीन में यह परिक्षेत्र फैला हुआ है।

इस सस्था की स्थापना एक प्राथमिक विद्यालय के रूप में 1952 में हुई थी बाद में यह विद्यालय 1956-57 में माध्यमिक 1959-60 में उच्च माध्यमिक और 1966-67 में महाविद्यालय में क्रमोन्नत हुआ। उच्च माध्यमिक विद्यालय में 1964-65 से विज्ञान और महाविद्यालयों में 1969-70 में विज्ञान की शिक्षा शुरू कर दी गई थी और अब व्यवसायिक शिक्षा भी आरम्भ की जा रही है। बालिकाओं से शिक्षण शुल्क नहीं लिया जाता है। किन्तु उन्हें छात्रावास में रहने का 75 रुपये प्रति छात्रा प्रति माह देना पडता है। समाज कल्याण विभाग द्वारा सचालित हरिजन छात्राओं के छात्रावास में भोजनादि की व्यवस्था निःशुल्क है।

इस महाविद्यालय के परीक्षा परिणाम बहुत अच्छे रहते हैं। यहा बी एड प्रशिक्षण भी दिया जाता है। जिसमें प्रशिक्षण प्राप्त करके अनेक महिलायें रोजगार प्राप्त करने में सफल हुई हैं। इस सस्था को प्राथमिक विद्यालय से महाविद्यालय तक क्रमोन्नत कराने तथा सभी आवश्यक सुविधायें जुडाने में पद्मश्री शीशाराम ओला के अथक परिश्रम का फल है।

धुन के धनी एव निरन्तर प्रयत्न शील श्री शीशराम ओला ने इस महाविद्यालय के विकास में कोई कोर-कसर नहीं छोडी इसी कारण देश के विभिन्न प्रान्तों से शिक्षा प्राप्त करने हेतु बालिकायें यहा हर साल आती हैं। झुन्झुनू जिले की अपनी शैक्षणिक परम्पराओं में बसा यह गाव शिक्षा की एक पावन स्थली बन गया है। जिसके विकास में श्री ओला का अनुकरणीय योगदान है।

इस संस्थान का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में विज्ञान, कला तथा व्यवसायिक में उच्चस्तरीय शिक्षा के द्वारा मानवीय सभ्यता के उत्थान तथा भारत की चहुमुखी प्रगति के लिए प्रयास करना है।

इसी सस्था को स्व श्री घनश्यामदास बिडला, प्रधानमत्री इंदिरा गांधी, श्री मोहन लाल सुखाडिया तत्कालिक मुख्य मत्री, स्व श्री बरकतुल्ला खा, श्री रामनिवास मिर्धा, श्री नटवरसिंह, तथा स्व राजीव गांधी जैसी विभूतियों का आर्शीवाद प्राप्त है।

इस सस्था के लिए श्री ओला दिन रात गतिशील रहते हैं और उनके असीम उत्साह और समर्पित भावना के कारण ही यह महाविद्यालय न सिर्फ राजस्थान में बल्कि सम्पूर्ण भारत में अपनी विशिष्टता के कारण अलग से पहचान बनाये हुए है।

अध्याय १३ "उपसंहार"

शेखावाटी का भू-भाग अत्यन्त प्राचीन है। समय-2 पर इस भू-भाग के भिन्न-2 नाम होते रहे हैं। जिसका आधार यहां बसने वाली जाति या भौगोलिक या राजनैतिक परिवर्तन रहे हैं। यह भू-भाग प्राचीन काल से अनेकों दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहे हैं। मध्यकाल में इसके शौर्य, त्याग और बलिदान की परम्पराओं को उस प्राचीन काल में खोजा जा सकता है।

शेखावाटी प्राचीन आर्यवृत्त का ही एक हिस्सा है जहां आर्यों ने समृद्धिशाली सभ्यता का विकास किया था। रामायण, महाभारत युग में इसे मत्सय के नाम से भी जाना जाता था। यह क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। स्वामी विवेकानन्द, जिन्होंने भारतीय वेदों को सारे विश्व में विख्यात किया, वे खेतडी नरेश अजीतसिंह जी से नजदीक के सम्बन्धी थे। अजीतसिंह जी की स्वामी जी से प्रथम मुलाकात आबू में 1891 में हुई थी। इसके बाद यह मुलाकात घनिष्ट सम्बन्धों में बदल गई और अजीतसिंह जी ने स्वामी जी को अमेरिका की यात्रा करने हेतु आवश्यक आर्थिक सहयोग दिया, जिसके कारण स्वामी विवेकानन्द सारे विश्व में प्रसिद्ध हुए। स्वामी दयानन्द ने भी शेखावाटी की यात्रा की थी। उनकी यात्रा इस दृष्टि से महत्वपूर्ण थी कि आर्य समाज की स्थापना मंडावा में हुई थी।

नारी का समाज मे महत्वपूर्ण स्थान होता है उनकी कोख से ऐसे बहादुर व्यक्ति पैदा होते है जिन्होंने शेखावाटी के नाम को रोशन किया इसी धरती पर राजपूत माताओं ने ऐसे साहसी तथा बहादुर बच्चों को जन्म दिया जो इस भूमि के चमकते हुए सितारो के रूप में जाने माने गये और उनके अद्वितीय कार्य विशेष उल्लेखनीय है। कर्नल टाड ने अपने इतिहास की पुस्तक में लिखा है कि इस क्षेत्र में एक भी शहर (स्थान) ऐसा नही जहां युद्ध न हुआ हो और एक भी ऐसा शहर (प्रदेश) नही जहां लूनीदास जैसे बहादुर पैदा न हुए हो।

आमतौर पर इस प्रदेश मे लोग वैदिक धर्म के मानने वाले थे। शेखावाटी में लोग अपने परिवार के देवी, देवताओं को भी पूजते थे। राजपूत बहादुरी तथा शक्ति की प्रतीक माताजी की पूजा करते थे। लोग धार्मिक भावना से पवित्र स्थानों हरिद्वार, पुष्कर लोहर्गल आदि धार्मिक तीर्थ स्थलों की यात्रा किया करते थे। वे अपने देवी, देवताओं की स्मृति में मेले भी लगाते थे। श्री रामदेव जी का मेला, हनुमानजी, जीणमाता, खाटूश्याम जी, राणीसती जी, गोगाजी, तेजाजी, पाबूजी, भोमियाजी, भैरूजी आदि मेले विशेष उल्लेखनीय है। वर्षाऋतु में किसान तेजाजी के गीत गाते है, औरतें आमतौर से ग्यारस, करवाचौथ आदि के व्रत रखती है। तीज और गणगौर औरतों के प्रमुख त्यौहार है।

शेखावाटी की संस्कृति

वर्तमान में यह प्रदेश झुन्झुनूं और सीकर जिलों तक ही सीमित है लेकिन शेखाजी के समय यह प्रदेश का बड़ा आकार था। रतनगढ जो अब बीकानेर डेवीजन में पडता है, भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से शेखावाटी का ही एक शहर माना जाता है। इसके 70% निवासी शेखावाटी को छोड़कर वहां जा बसे थे।

भिवानी, लुहारू, सुजानगढ, सरदार शहर, चूरू, राजगढ, लाडनू, डीडवाना और रतनगढ आदि शहरों का शेखावाटी से विशेष लगाव रहा है। यद्यपि ये शहर शेखावाटी प्रदेश का हिस्सा नहीं रहे, लेकिन भौगोलिक व सांस्कृतिक दृष्टि से इनका शेखावाटी से विशेष लगाव रहा है।

सीकर, लक्ष्मणगढ, रामगढ, महनसर, नवलगढ, डूंडलोद, मुकन्दगढ, झुन्झुनूं, बगड, चिडावा, पिलानी, सूरजगढ, अलसीसर, मलसीसर, सिंघाना, मण्ड्रेला, खेतडी तथा मंडावा अब इस क्षेत्र में हैं।

यह क्षेत्र दूसरी जातियों और संस्कृतियों के लिए एक सामान्य स्थान था, शेखावाटी की संस्कृति इतनी सहिष्णुता लिए हुए है जहां दूसरी संस्कृतियां तथा जातियां आसानी से घुल मिल जाती है। शेखावाटी की सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण ही यहां के आम आदमियों में त्याग और धार्मिक एकता पाई जाती है। यहां साल भर मेलों और उत्सवों की धूम मची रहती है जीणमाताजी, लोहर्गल, राणीसतीजी, शीतलामाता, श्यामजी खाटू, हनुमानजी, रामदेवजी,

गूगाजी के मेले तथा होली, दिपावली, दशहरा, गणगौर, तीज, रक्षाबन्धन तथा बसन्तपंचमी आदि त्यौहार धार्मिक भावनाओं पर आधारित शेखावाटी की संस्कृति के विभिन्न रूप है।

शेखावाटी सस्कृति की सही झलक गावों की रोजमर्रा की जिन्दगी में देखी जा सकती है। संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली, भोजन, वेशभूषा और लोगों के रहने सहने के ढग में। यहा तक की आधुनिक काल में भी प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों की भरपूर पकड इस क्षेत्र के सामान्य जनजीवन पर देखी जा सकती है।

विशेषकर मारवाडियों में जो इस प्रदेश को छोडकर देश के दूसरे भागों में जाकर बस गये है उन्होंने अपनी संस्कृति को नहीं छोडा है वे सदैव इसे प्रोत्साहित और इसका प्रचार करते रहते हैं। मारवाडी लोगों ने, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास तथा दिल्ली जैसे अत्यन्त भीड-भाड तथा प्रगतिशील नगरों में बसते हुए भी अपनी सस्कृति को जिन्दा रखा था। कलकत्ता का बडा बाजार इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

बडा बाजार बंगाल का एक प्रमुख औद्योगिक क्रेन्द्र महानगर है जो मारवाडी नगर कहलाता है। इस बाजार की बडी-बडी इमारतों के स्वामी मारवाडी ही है, इस बाजार की इमारत मारवाडी सस्कृति, रीति-रिवाज, जेवर तथा परम्पराओं के प्रतिबिम्ब हैं। यहा हजारों बेसुमार पगडियों की अलग पहचान देखी जा सकती है। जब कभी कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति या राजस्थानी लोग यहां आते हैं और बडा बाजार में देखने आते हैं तो वह महसूस करता है कि वह अपने घर में ही है। और ऐसा ही आसाम में भी है। बडे-बडे औद्योगिक घरानों में शेखावाटी संस्कृति की झलक दिखाई देगी। शेखावाटी के व्यवसायियों ने न सिर्फ राजस्थानी कल्चर को भारत के विभिन्न हिस्सों में प्रसिद्धि दिलाई है बल्कि वे इसे अमेरिका, इंगलैण्ड, इथोपिया, आस्ट्रेलिया, भूटान, मलेशिया, वर्मा, चाइना, नेपाल, मालद्वीप, लंका में भी ले गये हैं। इन्होंने वहां कई धर्मशालायें भी बनाई है। बागला ने रंगून में प्रसिद्ध मन्दिर का निमार्ण किया। मांडले बर्मा में बहुत से चूरू के लोग भारी संख्या में बसे हुए हैं जो बडे चाव से हिन्दू त्यौहारों को मनाते हैं। भगवान दास बागला ने तो रंगून तथा मांडले के पब्लिक पार्कों में राजस्थानी संस्कृति के प्रतीक रूप में केजडी तथा Gondı के पेड लगवाये थे।

भारत विभिन्न संस्कृतियों का संगम स्थल है। यह तमाम सस्कृतिया उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम से आई है, इन सबकी अलग-अलग संगीत, नाटक, कला है।

राजस्थानी संस्कृति की अपनी अलग विशेषताएं है विभिन्न मारवाडी कम्युनिटियों द्वारा इसको समृद्ध बनाने के प्रयत्न हुए हैं। मारवाडी नाट्य परिषद, मारवाडी मित्र मंडल और मारवाडी सम्मेलन बम्बई समय-समय पर सांस्कृतिक

कार्यक्रम आयोजित करते रहते है। इनमे लोकनृत्य, संगीत, कवि सम्मेलन और दिपावली तथा होली पर सास्कृतिक झाकियों का प्रदर्शन भी सम्मिलित है।

चित्रकारी की परम्परा शेखावाटी मे मध्यकाल से चली आ रही है। जो देश की कला को प्रतिबिम्ब डालती रही है। इस कला को राजा, महाराजाओ तथा जागिरदारों तथा धन्ना सेठों द्वारा सरंक्षण मिलता रहा है। राजस्थान में भीति-चित्रों में सामान्य जीवन के वास्तविक रूप में चित्र बनाते रहे है। शेखावाटी में भित्ति-चित्रों का अपना विशेष स्थान है। फतेहपुर में पिछले 150 वर्षों में दो हजार भित्ति-चित्र बनाये गये। दिवारो पर पलस्तर सूखने से पूर्व चित्र बनाने की विधि 17 वर्ष पूर्व परशरामपुरा मे पाई जाती है और बाद की ब्रिटीश काल में 1932 में शेखावाटी में अधिकतर भित्ति-चित्रों धनवान व्यक्तियों (वैश्यों) के घरों पर पाये जाते है। शेखावाटी के सेठों ने कलकत्ता, बम्बई तथा देश के अन्य भागो मे पैसा कमाया और अपनी हवेलियों मे भीति-चित्र बनवाने में खर्च किये। फतेहपुर शेखावाटी भित्ति-चित्र पौराणिक व ऐतिहासिक दृश्यों विशेषकर जीवन के ढग, लोकनृत्य तथा इन व्यापारियों ने अपने पूर्वजों के पोर्टरेट (चित्र) सीकर, नवलगढ, डूडलोद, मुकन्दगढ, महनसर, चिड़ावा, पिलानी, लोसल, पटौदा, भी है। चित्रों के लिए उल्लेखनीय है भित्ति-चित्रों का क्षेत्र बहुत व्यापक रहा है, शिकार करने से घोडे की सवारी तक, संगीत का कलात्मक प्रदर्शन, ऊट की सवारी, पतंग उडाना, लोकनृत्य तथा ढोला मारू के चित्र विशेष रूप से आकर्षक व दर्शनीय हैं। गावो में भित्ति-चित्रों मे ग्रामीण जीवन के दृश्यों के चित्र बनाये गये है। पौराणिक भित्ति-चित्र राम, कृष्ण तथा हनुमान जी के बनाये हुए हैं। महनसर मे 1846 मे बनी हवेलियों पर बनी कलाकृतियां तथा भित्ति-चित्र प्रमुख आकर्षण के केन्द्र है। इन हवेलियो पर बने भित्ति-चित्रों मे से अधिकतर में उल्लासपूर्ण समारोह की मुद्रायें अंकित है और यह भित्ति-चित्र 1860 तथा 1900 के बीच बनाये गये थे। भित्ति-चित्रों की यह कला शुद्ध धार्मिक कथ्य से शुरू होकर कलात्मक साज श्रृगार वाले भित्ति-चित्रों से 1900 के बाद बितानी वार्ग चित्रों, उत्कीण चित्रों का अनुसरण हो गया। इन चित्रों में अधिकतर गोपियों के भगवान कृष्ण और उनसे जुडी दन्त कथाओं से सम्बधित है। रामायण तथा महाभारत काल के महत्वपूर्ण प्रसंग, हनुमान, इन्द्र व गणेश आदि अन्य हिन्दू देवी देवताओं के चित्र इस क्षेत्र के अधिकतर घरों के दरवाजों तथा छतों पर अंकित पाये जाते है। बाद में चलकर यह मारवाडी ऊंचे उठने के कारण इस समय के भित्ति-चित्रों में हवाई जहाज, टेलीफोन, युरोपीय समुदाय के प्रतीक ऊट, हाथी आदि भी जुडने लगे।

शेखावाटी का क्षेत्र सदैव धर्म परायण और उदार रहा है यहा का जन धर्म ही यहा की संस्कृति भी बना। यहां की संस्कृति सार्वदेशिक है मानव की अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से जिसका विकास हुआ है वही संस्कृति है। संस्कृति से सामाजिक जीवन के आर्दशों का निमार्ण हुआ है। दूसरे शब्दों में संस्कृति जनमन

की सहज उत्पन्न भावना, प्रवृत्तियां एवं अन्तरप्रेरित क्रिया-कलापों का समन्वित संस्करण है। परन्तु क्षेत्र विशेष के गुण आरोपित होने के कारण वह उस क्षेत्र की संस्कृति का नाम धारण कर लेती है। इससे उस क्षेत्र के निवासियों को विशेष प्रेरणा प्राप्त होती है, और उसका सम्बल बड़े से बड़ा त्याग उनसे करवा देता है। संस्कृति उस क्षेत्र के गांव, वन, पर्वत में निवास करती है। प्रजा के आचार-विचारों में वह परिलक्षित होती है। इसकी श्रेष्ठता से समाज को बल एवं प्रेरणा प्राप्त होती है। इसी से जीवन में निर्मलता आती है।

शेखावाटी में शेखावत काल में दो सौ वर्षों में छोटे बड़े अनेक ठिकानों की स्थापना हुई, उनमें लड़ाई भी होती रही, आपसी मनमुटाव भी बढ़े। सीमाओं के झगड़े भी हुए अपने-अपने क्षेत्र के प्रति वफादार भी बने, गोद लेने पर आपसी सम्बन्धों में बिगाड़ भी आये यहां तक उनके आधीन जनता को भी अपनी मनोभावना को बदलना पड़ा और उन्हीं के अनुसार ऊंच-नीच के मापदण्ड भी अपनाये। परन्तु इस रेगिस्तानी इलाके की सस्कृति को ये बातें प्रभावित नहीं कर सकीं। शेखावाटी की सास्कृतिक धरोहर हमेशा समन्वयवादी रही है, जिसका प्रेम उदार दृष्टिकोण, साहित्यिक अभिरूचि वाले शासक, आरक्षित कवि, चारण, बारहठ, और विद्वान लेखक तथा भाटों को विशेष रूप से जाता है। जैन, अजैन, शैव, वैष्णव, नाथ सम्प्रदाय, द्वैत और अद्वैत सभी का यहां संगम रहा है और यही कारण है यहां की भित्ति कला और उत्सवों तथा त्यौहारों के आचरणों में यहां की समन्वयवादी सस्कृति के दर्शन ज्यों के त्यों स्पष्ट है। सारांश में शेखावाटी की संस्कृति की यह विशेषता है कि यहां के नर-नारियों ने त्याग, बलिदान, धर्म, सहिष्णुता पर जनहिताय भाव, कष्ट सहने की क्षमता, रेगिस्तानी अभावों से टक्कर लेने की क्षमता आदि के असामान्य उच्च आदर्श स्थापित किये है।

यहां के मेले, व्रत, धार्मिक मान्यतायें, लोक विश्वास, देवपूजा, पर्व तीर्थ स्थल आदि इसके स्पष्ट परिचायक हैं। इससे भावात्मक एकता को बल मिला है। यहां की जनता धर्मपरायण रही है। इसका विराटस्वरूप उत्सव और मेलों में देखने को मिलता है।

शेखावत काल में शासक स्वयं कलाप्रेमी और साहित्यकार रहे है तथा अनेकों विद्वानों के आश्रयदाता बनकर उनको सम्मान दिया है। नवाबी काल से चली आ रही परम्परा, जिसमें कवियों तथा कलाप्रेमियों को प्रोत्साहन दिया जाता था। इस अवधि में शेखावटी में जितने कवि और साहित्यकार पनपे उतने आज तक नहीं पनपे है। जैन साधु, दादूपंथी, नाथ सम्प्रदाय, कबीरपंथी, कृष्णभक्त, रामभक्त आदि अनेक ख्याति प्राप्त भारतीय साहित्य के जगमगाते कवि इन दो शताब्दियों में हुए 180 ग्रंथों का रचियता कवि "जान" इसी युग की देन था। विभिन्न धाराओं में साहित्य की रचना इस युग की विशेषता रही है।

ही 501 अकि पाच सो अेक तो बेरा की दी ही और म्हाके बट की आधी दीनी सो बहावो जुपावो लाटो बाटा उपरते परदत जे मेटे बीसधरा तो नरा नरकि जावते तब लग चंद दिवाकरा मीती माह बदी 3 संमत 1845 का दसखत गुमानीराम का हुकम हजूरी मुकाम मैहणसर

श्री रामजी

श्री गोपीनाथ जी
सदा दे से बगसार
सुख सीघल पावत

॥ सीध श्री राजी श्री सारदुलस्यग जी बचनात स्यानीजी रूपादास जी धरती बीघा 80 असी) मकान क पास धरती बीघा 101 राम डो घोडा खदी पास धरती बीघा 101 टीबडा म धरती बीघा 51 डहर की सा बीक धरती 333 बीघा कसबा बगड की मकान तालक दीनी भुआवो जुपावो हासील अब सो श्री जी क भोग लगावो आसीरवाद देवो करो माला फेरो सीरलोक अपदत्त सो मेटत बीस धरा ते नरा नरका जायेते जब लग चद दीवाकरा मीती कातीग सुदी 15 संमत 1791 का दसकत कर मुजीसा का हुकम सीरकार क सु लीखा मुकाम कसबा सुधुण का पटो आगलो पत्रण को देखकर फेरू नवो वर दीनु॥

श्री राम जी

सीध श्री म्हाराजि श्री कवर जी श्री अपसंघ जी बचनात मौजे गांव कोतकेदसर परगना (अपठनीय -----) जकी रामदतजी चारण जाति का कबीया न बीगा 1500 अकेही नपरास दान म दी------- (अपठनीय) --------

मीति बैसाख वदि 1 समत 1191
सही (-------अपठनीय---------)

॥श्री राम जी॥

सीधी श्री राजी श्री सारदलस्यघ जी का श्रम्हाराम चारण नै मोजे कुतबपुरा .... नरहड को उदीक नीमत दीया सो ब सो बसावो बहावो जुपावो हासील है सो खावो दवा दोह आंतष अपदत पर दत्त रो मेटत बीसधरा तेन्तरा नरकजातो तो लग चन्द दवाकरा मीती चैत सुदी 12 स 1798 का दसखत करमचद हुकेम हीज लीखी

परिशिष्ट—२

शेखाव शेखावाटी के कुछ महत्त्वपूर्ण शिलालेख

१. फतेहपुर के एक कुए का शिलालेख

सवत 1717 वर्ष शालिबाहण
शाके 1582 माह बदि 5 गुरु दिने
दिली पति पतिशाह अवरंग
साह राज्ये फतेहपुर मध्य
क्याम खाँ बशे दी श्री ताहर खाँ
तत्पुत्र दीवान श्री अलफ खाँ
सानी राज्ये महेश्वरी जाति
बीदाणी साह प्रियागदास तमपुत्र मथुरादास तत्पुत्र
साह जादोदास श्री कृष्ण प्रत्यर्थ
कूप कर वायो श्री शुभ भवतु सं 1071
"श्री" उरुता छण्ड वुमाई बक्स ॥ श्री रस्तु (1)

2. उदयपुर शेखावाटी की छतरी का शिला लेख

हुक्लगनी

बनामशाह जो की दास शुदरास्त मकान तरफो व
मौजो व जेबा मुरतब साज छतरी हस्तम तवारीख
कि दुं करी से विजैराम हस्त व देवा ।। पहि (1)

3 केड की छतरी का शिलालेख

श्रीरामजी सहाय जी

सं 1752 मिती कार्तिक वदी 11 जगीरदार नागर बगड का अबदुल्ला खाँ सेरखाँ। केडस्थान के जबवानी जमीदार सलावत खाँ, मुनीरखाँ, आजवखाँ, दारावखाँ, चौधरी राजमल जी की छतरी कराई बेटा नै। चौधरी गिरधारी दास हरजीमल मुकन्दराम नन्दराम चारों बेटा सामिल मिल कराई। छतरी करी कारीगर स्थान खण्डेला का धर्मराज का बेटा जिन छतरी सवारी। देखे बांचे जैने राम-राम लिखत कारीगर हरीराम बार शुक्रवार।

4 शिलालेख गाव निराधणू के मन्दिर

ॐ तत्सम

स्वस्ति श्री संवत 1890 विक्रमी मिति वैसाख सुदी 5 ठाकुर श्री रघुनाथ जी को मन्दिर बणवाकर प्रतिष्ठा कराई ठा. बापासिंह जी बेटा ठा

बख्शीराम जी का पोता ठा गुमान सिंह जी का शेखावत लाडखानी गांव निराधनू प्रांत शेखावाटी

"अबद अठारा सौ असी सुदि बैसाख सुधीर
थिर पाचै थापियो बाघसिंह रघुवीर ॥1॥
सोही गांव सुहावणो दरसण देव उदार ।
जाग्र जोति प्रकाश जहं झालर को झणकार ॥2॥

5 पन्नालाल साह तालाब खेतड़ी के शिलालेख

॥ श्री राम जी ॥

पनासर बाग कुवा हाटी नोरा वुगेरा ला
ला पना लाल साहा बेटा नरसी
घ दासजी का पोता
हर नारायेण जी सा
हा जी का सं 1925

अमेरिका से लौटने के बाद खेतड़ी पधारने के उपलक्ष्य में इसी स्थान पर *स्वामी विवेकानन्द के स्वागतार्थ 12 नवम्बर 1897 को विशाल* राजकीय जलसा और प्रीति भोज हुए भोपालगढ़ सहित नगर में सर्वत्र रोशनी की गई।

6 शेखावाटी में बहु संख्यक शिलालेख पाये जाते हैं जिनमें खण्डेला, रैवासा, जीणमाता, शाकंभरी, नरहड़ आदि के शिलालेख विशेष उल्लेखनीय हैं। शेखावाटी के कतिपय महत्त्वपूर्ण शिलालेखों का प्रकाशन पं झाबरमल जी *शर्मा द्वारा करवाया जा चुका है। इनके अतिरिक्त राणोली (सीकर)* में अवस्थित छत्रियों पर लगे हुए अद्यावधि अप्रकाशित दो शिलालेखों में एक को गद्य में नमूने के रूप में यहां प्रस्तुत किया जा रहा है—

"छत्री महाराजा श्री प्रीरथी सघ जी राजा सजु संघजी को बेटा कंवर सवाई सिंघजी का पोता क जाका साथी सती हुआ खबासी जी माजी संवत 18 स 45 की साल पोहो बदी। 13 न छत्री संवत 18 स 65 की साल आसोज सुदी 10 न हुई चापावत जी बेटा की सेव सघ की नुव कराई पोता नोवलसंघ कराई दसकत रामसुख मोजीराम का बेटा"—

यह शिलालेख ग्यारह पंक्तियों में लिखा हुआ है। दूसरा शिलालेख केवल चार पंक्तियों का है।

संदर्भ ग्रंथ

1 अनन्त लाल मुकर्जी, राजपूताना का भूगोल

2 अनन्त लाल मुकर्जी, शेखावाटी प्रान्त

3 आचार्य परमेश्वर सोलंकी—राजस्थानी मरु प्रदेश का कृषि मूलक विवेचन।

4. रघुनाथ सिंह शेखावत, झुन्झुनूं मण्डल का इतिहास, काली पहाड़ी
5 रघुनाथ सिंह शेखावत, सार्दूल प्रकाश का इतिहास, काली पहाड़ी
6 श्री रतनलाल मिश्र, शेखावाटी कला और समाज 1982
7 उदयवीर शर्मा, बिसाऊ दर्शन 1980
8 कैलाश चन्द्र अग्रवाल, शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन लखनऊ
9 गोविन्द अग्रवाल, चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास चूरू 1980
10 झाबर मल शर्मा, खेतड़ी का इतिहास कलकत्ता 1927
11 झाबर मल शर्मा, सीकर का इतिहास कलकत्ता 1922
12. झाबर मल शर्मा, शेखावाटी के नवाबी राज्य
13 तारादत्त निर्विरोध गाथा शेखावाटी की रत्नोवाली माटी का
14 नारायण सिंह, शेखावाटी का भूगोल जयपुर 1960
15 नारायण सिंह, सैंसवास गीत संग्रह शेखावटी जयपुर 1970
16 भूरासिंह मलसीसर, विविध संग्रह शेखावाटी का इतिहास (हस्तलिखित) जयपुर
17 मुरारी शर्मा, शेखावाटी के ख्याल, उदयपुर
18 जेम्स टाड राजस्थान भाग-1 खण्ड-1
19 रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री शेखावाटी प्रकाश
20 देवरड़ शेखावाटी की बोलियां
21 सवाई शेखावत, जीणमाता, जयपुर
22. सुनीति कुमार चटर्जी-राजस्थानी भाषा
23 सुरजन सिंह झाझड़, राव शेखा सीकर 1983
24 सूर्यनारायण शर्मा, खण्डेला का इतिहास आगरा
25 हकीम युसुफ झुंझुणवी, झुन्झुनं दर्शन
26 हरनारायण भावन नवीन भूगोल झुन्झुनूं
27 हरिनाम, केश्री सिंह समर
28 हरिनारायण मैणवाल रामदेव अवतार
29 गौरीशंकर हीरानन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास
30 गौरीशंकर हीरानन्द ओझा बीकानेर भाग-2
31 गौरीशंकर हीरानन्द ओझा राजपुतानों का इतिहास 1937
32. मनोहर शर्मा, राजस्थान लेख समूह बिसाऊ
33 श्याम परमार, भारतीय लोक साहित्य, जयपुर
34 गोपाल व्यास, सीकर जिले का इतिहास

35. श्री रतनलाल मिश्र शेखावाटी का इतिहास
36. टी. सी. प्रकाश शिमला का इतिहास
37. प्रमोद वर्मा, शेखावाटी भित्ति-चित्र जयपुर 1968
38. जी. एन. शर्मा—सोशियल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान आगरा 1968
39. हरनाथ सिंह डूँडलोद, शेखावाटी एन्ड देयर लैंडस् जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
40. रतनलाल मिश्र, फोर्टस आफ राजस्थान जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
41. स्वामी प्रकाशमणी, राजस्थानी चित्रकला
42. रावत सारस्वत् राजस्थान के लोक गीत
43. रवि प्रकाश नाग, राजस्थानी गीतों का गजरा
44. हरफूल सिंह आर्य शेखावाटी ठिकानों का इतिहास एवं योगदान
45 हर्ष— डा सत्यप्रकाश
46. राजस्थान के अभिलेख—डा. मांगी लाल व्यास
47. दी राजपूत पेंटिंग्स— ए कुमार स्वामी
48. ऐतिहासिक बातें— बांकीदास
49. मारवाड की ख्यात उम्मेद भवन जोधपुर
50. सुन्दर ग्रंथावली भाग-1, 2 पुरोहित हरिनारायण

शोध पत्रिका

(1) मरुभारती पिलानी
(2) वरदा—बिसाऊ
(3) परम्परा—जोधपुर
(4) मरु श्री पत्रिका चूरू
(5) जनरल आफ दी राजस्थान हिस्टोरिकल रिसर्च इन्सटीट्यूट जयपुर

गजेटियर

(1) दी इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया राजपूताना नई दिल्ली 1908
(2) दी बीकानेर गजेटियर पी डब्लू पावलेट 1874
(3) राजपूताना गजेटियरस भाग-1-2 जयपुर 1879

रिपोर्टस

(1) मोहम्मद रिपोर्ट आन शेखावाटी
(2) रिपोर्ट आन पचपाना, सीधाना, सीकर, खण्डेला
(3) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक झुन्झनू
(4) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक सीकर

4. रघुनाथ सिंह शेखावत, झुन्झुनू मण्डल का इतिहा
5 रघुनाथ सिंह शेखावत, शार्दूल प्रकाश का इतिहास
6 श्री रतनलाल मिश्र, शेखावाटी कला और समाज
7 उदयवीर शर्मा, बिसाऊ दर्शन 1980
8 कैलाश चन्द्र अग्रवाल, शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक
9 गोविन्द अग्रवाल, चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास
10 झाबर मल शर्मा, खेतड़ी का इतिहास कलकत्ता 19:
11 झाबर मल शर्मा, सीकर का इतिहास कलकत्ता 192
12 झाबर मल शर्मा, शेखावाटी के नवाबी राज्य
13 तारादत्त निर्विरोध गाथा शेखावाटी की रत्नोवाली र
14 नारायण सिंह, शेखावाटी का भूगोल जयपुर 1960
15 नारायण सिंह, सैसवास गीत संग्रह शेखावटी जयपुर 1
16 भूरासिंह मलसीसर, विविध संग्रह शेखावाटी का इतिहास
जयपुर
17 मुरारी शर्मा, शेखावाटी के ख्याल, उदयपुर
18 जेम्स टाड राजस्थान भाग-1 खण्ड-1
19 रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री शेखावाटी प्रकाश
20 देवरड़ शेखावाटी की बोलियां
21 सवाई शेखावत, जीणमाता, जयपुर
22 सुनीति कुमार चटर्जी-राजस्थानी भाषा
23 सुरजन सिंह झाझड़, राव शेखा सीकर 1983
24 सूर्यनारायण शर्मा, खण्डेला का इतिहास आगरा
25 हकीम युसुफ झुंझुणवी, झुन्झुनं दर्शन
26 हरनारायण भावन नवीन भूगोल झुन्झुनू
27 हरिनाम, केशरी सिंह समर
28 हरिनारायण मैणवाल रामदेव अवतार
29 गौरीशंकर हीरानन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास
30 गौरीशकर हीरानन्द ओझा बीकानेर भाग-2
31 गौरीशकर हीरानन्द ओझा राजपुतानों का इतिहास 1937
32 मनोहर शर्मा, राजस्थान लेख समूह बिसाऊ
33 श्याम परमार, भारतीय लोक साहित्य, जयपुर
34 गोपाल व्यास सीकर जिले का इतिहास

35. श्री रतनलाल मिश्र शेखावाटी का इतिहास
36. टी. सी. प्रकाश शिमला का इतिहास
37. प्रमोद वर्मा, शेखावाटी भित्ति-चित्र जयपुर 1968
38. जी. एन. शर्मा–सोशियल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान आगरा 1968
39. हरनाथ सिंह डूँडलोद, शेखावाटी एन्ड देयर लैंड्स् जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
40. रतनलाल मिश्र, फोर्टस आफ राजस्थान जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
41. स्वामी प्रकाशमणी, राजस्थानी चित्रकला
42. रावत सारस्वत् राजस्थान के लोक गीत
43. रवि प्रकाश नाग, राजस्थानी गीतों का गजरा
44. हरफूल सिंह आर्य शेखावाटी ठिकानों का इतिहास एवं योगदान
45. हर्ष– डा. सत्यप्रकाश
46. राजस्थान के अभिलेख–डा. मांगी लाल व्यास
47. दी राजपूत पेंटिंग्स– ए. कुमार स्वामी
48. ऐतिहासिक बातें– बांकीदास
49. मारवाड़ की ख्यात उम्मेद भवन जोधपुर
50. सुन्दर ग्रंथावली भाग-1, 2 पुरोहित हरिनारायण

शोध पत्रिका

(1) मरुभारती पिलानी
(2) वरदा–बिसाऊ
(3) परम्परा–जोधपुर
(4) मरु श्री पत्रिका चूरू
(5) जनरल आफ दी राजस्थान हिस्टोरिकल रिसर्च इन्सटीट्यूट जयपुर

गजेटियर

(1) दी इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया राजपूताना नई दिल्ली 1908
(2) दी बीकानेर गजेटियर पी. डब्लू पावलेट 1874
(3) राजपूताना गजेटियरस भाग-1-2 जयपुर 1879

रिपोर्टस

(1) मोहम्मद रिपोर्ट आन शेखावाटी
(2) रिपोर्ट आन पंचपाना, सीधाना, सीकर, खण्डेला
(3) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक झुन्झनू
(4) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक सीकर

35. श्री रतनलाल मिश्र शेखावाटी का इतिहास
36. टी. सी. प्रकाश शिमला का इतिहास
37. प्रमोद वर्मा, शेखावाटी भित्ति-चित्र जयपुर 1968
38. जी. एन. शर्मा—सोशियल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान आगरा 1968
39. हरनाथ सिंह डूंडलोद, शेखावाटी एन्ड देयर लैंडस् जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
40. रतनलाल मिश्र, फोर्टस आफ राजस्थान जयपुर 1970 (अंग्रेजी)
41. स्वामी प्रकाशमणी, राजस्थानी चित्रकला
42. रावत सारस्वत् राजस्थान के लोक गीत
43. रवि प्रकाश नाग, राजस्थानी गीतों का गजरा
44. हरफूल सिंह आर्य शेखावाटी ठिकानों का इतिहास एवं योगदान
45. हर्ष— डा. सत्यप्रकाश
46. राजस्थान के अभिलेख—डा. मांगी लाल व्यास
47. दी राजपूत पेंटिग्स— ए. कुमार स्वामी
48. ऐतिहासिक बातें— बांकीदास
49. मारवाड की ख्यात उम्मेद भवन जोधपुर
50. सुन्दर ग्रंथावली भाग-1, 2 पुरोहित हरिनारायण

शोध पत्रिका

(1) मरुभारती पिलानी
(2) वरदा—बिसाऊ
(3) परम्परा—जोधपुर
(4) मरु श्री पत्रिका चूरू
(5) जनरल आफ दी राजस्थान हिस्टोरिकल रिसर्च इन्सटीट्यूट जयपुर

गजेटियर

(1) दी इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया राजपूताना नई दिल्ली 1908
(2) दी बीकानेर गजेटियर पी डब्लू पावलेट 1874
(3) राजपूताना गजेटियरस भाग-1-2 जयपुर 1879

रिपोर्टस

(1) मोहम्मद रिपोर्ट आन शेखावाटी
(2) रिपोर्ट आन पचपाना, सीधाना, सीकर, खण्डेला
(3) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक झुन्झनू
(4) सेन्सस 1981 राजस्थान डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक सीकर